युग संदर्भ

डा. धर्मपाल

वैदिक प्रकाशन

युग संदर्भ

डॉ० धर्मपाल

वैदिक प्रकाशन

15, हनुमान रोड, नई दिल्ली-1

दूरभाष : 310150

प्रकाशक :

वैदिक प्रकाशन,
15 हनुमान रोड़,
नई दिल्ली—110001
दूरभाष : 310150

सम्पादक :

डॉ० धर्मपाल

मूल्य : 5·00
10·00 (सजिल्द)

प्रथम संस्करण

मुद्रक : ट्रिगल आर्ट कम्पोजिंग एजेंसी, 185/13 कृष्णा गली-3, मौजपुर दिल्ली-53

समर्पण

युग को नई दिशा देने वाले
आर्य समाज के निष्ठावान् लेखकों
एवं विद्वानों को सादर समर्पित ।

आमुख

युग सन्दर्भ में वर्ष 1989-90 में आर्य-सन्देश में प्रकाशित अग्रलेखों को संकलित किया गया है। किसी भी समाचार पत्र के अग्रलेख सामयिक परिस्थितियों को संचालन कत्री संस्था के सन्दर्भ में रेखांकित करते हैं। इस संकलन में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक एवं शैक्षिक विषयों से सम्वन्धित लेखों को संग्रहीत किया गया है। सामाजिक संस्थाओं का मूलभूत उद्देश्य श्रेष्ठ सामाजिक मनुष्य का निर्माण करना होता है। यही वेद का भी आदेश है—कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। आर्य से तात्पर्य श्रेष्ठ मनुष्य से ही है। श्रेष्ठ वही है जो अपना और समाज का कल्याण करे। वह किसी का भी बुरा न सोचे और न करे। मनुष्य का मन सामान्यतः बुराई की ओर सरलता से जाता है तथा अच्छाई की ओर कठिनाई से। यही कारण है कि धर्म-शास्त्रों में जगह-जगह यह कामना मिलती है कि हम अच्छे बनें, बुराइयों से बचें, दूसरों को भी अच्छा बनाएँ। हम यही कामना करते हैं कि जो दुरित हैं, वे हमसे दूर हों, जो भद्र हैं, वे हमारे पास आएँ। हम भद्र को प्राप्त करें।

इन अग्रलेखों में उन व्यक्तियों के विषय में लिखा गया है, जिन्होंने राष्ट्र के लिए, समाज के लिए और मनुष्यता के लिए अपने आपको न्योछावर कर दिया। अमर हुतात्मा श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा का नाम भारत के इतिहास में सदैव सम्मानपूर्वक स्मरण किया जाएगा। उन्होंने राष्ट्रोत्थान तथा समाज कल्याण के मार्ग का अवलम्बन किया। वे स्वराज्य प्राप्ति हेतु, इंग्लैण्ड में स्थापित क्रांतिकारिता के पुरोधा थे। इसी क्रांतिकारिता ने आगे चलकर श्री मदनलाल धींगड़ा और वीर सावरकर जैसे देदीप्यमान नक्षत्रों को नई दिशा दी। वह वीर आजादी की अलख जगाता हुआ, अन्याय शोषण, पराधीनता बन्धन, अन्धविश्वासों के विरुद्ध सदैव प्रयत्नशील रहा। महर्षि दयानन्द सरस्वती का वह अनन्य शिष्य ऋषिवर के बताए मार्ग पर चलता हुआ, स्वराज्य प्राप्ति के मार्ग को प्रशस्त करता हुआ, आगे बढ़ चला।

महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द, धर्मवीर हकीकत राय, पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, पं० लेखराम, पं० इंद्र विद्यावाचस्पति, पं० शिवकुमार शास्त्री, महात्मा गांधी, पं० जवाहरलाल नेहरू, लाला लाजपतराय तथा अन्य सामाजिक युग-प्रवर्तकों के कार्यों के आकलन का उद्देश्य नई पीढ़ी को युग चेतना से अवगत करना रहा है।

इस संकलन में भारतीय जन-जीवन को सुगन्धित करने वाले विशिष्ट पर्वों—विजयादशमी, रक्षाबंधन. दीपावली, मकर संक्रांति, वसन्त पंचमी, होली, वैशाखी आदि से संबंधित अग्रलेख भी दिए गए हैं।

यह सम्पूर्ण वर्ष राजनैतिक उथल-पुथल का वर्ष रहा है। हम अपने राष्ट्रीय नेताओं से राष्ट्रहित और जनहित में क्या उपेक्षा करते हैं, इन भावनाओं को भी इन अग्रलेखों में स्वर दिया गया है। मण्डल कमीशन और आरक्षण तथा वैदिक वर्णाश्रम

व्यवस्था संबंधी लेख, समाज को नई और सही दिशा देने में सहायक होंगे। आर्य-समाज दलितोद्धारक संस्था है।

गत वर्ष संस्कृत और भारतीय भाषाओं को इनका सही स्थान दिलाने और अँग्रजी की अनिवार्यता को समाप्त करने के लिए निरन्तर संघर्ष चलता रहा है। कुछ लेखों में भारतीय भाषाओं के संवर्धन हेतु, आर्य समाज की नीतियों का विवेचन किया गया है।

भारतवर्ष ने विज्ञान, अभियांत्रिकी और तकनीकी क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति कर ली है। 'पृथ्वी' और 'इनसेट-डी' का परीक्षण भारतीय वैज्ञानिकों की एक महान उपलब्धि है।

इस वर्ष आर्यों के ओज की वैजयन्ती आर्य सत्याग्रह हैदराबाद की अर्धशताब्दी मनाई गई। हमने उन सभी वीरों को स्मरण किया, जिन्होंने धर्म की रक्षा हेतु कठोरतम तपस्या की तथा अपना जीवन तक बलिदान कर दिया।

विश्व के सामने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या है। अपने लेखों के माध्यम से हमने जनमानस को सचेत करने का प्रयास किया है।

नारी उत्पीड़न इस देश की विडम्बना है। अनेक समाज सुधारकों ने इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है, पर आज यह समस्या उसी प्रकार सिर उठाए है। आर्य-समाज नारी शिक्षा, नारी जागरण और नारी को समान अधिकार तथा सम्मान दिलाने का पक्षधर है।

भारतीय मूल के लोगों के साथ विश्व के अनेक देशों में अन्याय हुआ है। फिजी नेपाल, केन्या, दक्षिण अफ्रीका, कुवैत आदि देशों में भारतीयों को जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, वे अमानवीय हैं: इन अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व के विषयों को भी इस पुस्तक में संकलित किया गया है।

इन अग्रलेखों को सामयिक एवं प्रासंगिक रूप में प्रस्तुत करने में मैंने तो कार्य किया ही है, श्री सूर्यदेव जी और श्री मूलचन्द जी गुप्त ने भी पूर्ण सहयोग दिया है। सभी सहयोगियों को साधुवाद !

—डॉ धर्मपाल

अनुक्रम

1. महात्मा गांधी और मद्य निषेध — 9
2. श्याम जी कृष्ण वर्मा — 12
3. विजय दशमी का पर्व — 14
4. उर्दू को उत्तर प्रदेश की द्वितीय राजभाषा बनाना भारतीय एकता और अखण्डता के लिए घातक — 15
5. मदुराई क्षेत्रों में धर्मान्तरण — 17
6. पृथ्वी — 19
7. महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस — 20
8. आर्य-संदेश — 22
9. राजनीति कब सकारात्मक होगी — 24
10. प्रो० विद्यावाचस्पति — 26
11. मर्यादा-शिक्षक ही मर्यादाहीन हैं — 28
12. किन्हें चुनें ? — 30
13. राष्ट्र शिल्पी पं० नेहरू को देश ने स्मरण किया — 32
14. नवीं लोकसभा का भविष्य — 34
15. नये नेता का पदार्पण — 37
16. नई सरकार से अपेक्षाएँ — 41
17. हैदराबाद सत्याग्रह अर्ध-शताब्दी — 43
18. सुधावर्षी श्रद्धानन्द — 45
19. प्रधानमंत्री के नाम — 48
20. गणतन्त्र दिवस और स्वामी श्रद्धानंद की झांकी — 51
21. स्वामी श्रद्धानंद चौक — 53
22. वसंत पंचमी — 54
23. धर्मवीर हकीकतराय — 55
24. महात्मा गांधी, लाला लाजपत राय और वर्तमान परिस्थितियाँ — 56
25. ऋषिवर दयानन्द — 59
26. सर्वविध स्वतंत्रता के उपासक स्वामी श्रद्धानन्द — 61
27. सीताष्टमी — 62
28. बहुमुखी प्रतिभा के धनी महर्षि दयानन्द सरस्वती — 63
29. अमर शहीद पं० लेखराम — 66
30. पं० गुरुदत्त विद्यार्थी — 69
31. आर्य समाज का जाज्वल्यमान नक्षत्र — 70
32. आर्य समाज स्थापना दिवस और आर्यों के हृदय की आग — 72
33. शक्ति शील और सौंदर्य के धनी मर्यादा पुरुषोत्तम राम — 75

34. महान क्रांतिकारी श्याम जी कृष्ण वर्मा 76
35. शास्त्रार्थ महारथी पं० रामचंद्र देहलवी 77
36. महाशय धर्मपाल 78
37 वैशाखी 79
38. उत्तर प्रदेश और बिहार में हिन्दी 80
39. अद्‌भुत प्रतिभावान् पं० गुरुदत्त विद्यार्थी 82
40. सत्यार्थ प्रकाश 84
41. धधकता काश्मीर 85
42. सेनाएँ नहीं, आर्य वीर दल चाहिए 86
43. आर्यावर्त आर्यों का है 88
44. ईसाईयों का भारत में षड्‌यंत्र 90
45. फीजी में भारतीय दूतावास 92
46. साम्प्रदायिकता का भूत 94
47. विश्व पर्यावरण दिवस 95
48. पंजाब के राज्यपाल 97
49. भारतीय वैज्ञानिकों की ऐतिहासिक सफलता का प्रतीक 99
50 फिजी और भारत 101
51. विराट दृष्टि अपनायें 102
52. हिंदू राष्ट्र नेपाल 104
53. पर्यावरण और ओजोन परत 106
54. हमारी शुतुर्मुर्ग सरकार 107
55. हरिजन समस्या 108
56. नारी उत्पीड़न 110
57. अंग्रेजी हटायें 112
58. गोवा में प्राईमरी शिक्षा के माध्यम रूप में अँग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त 113
59. भक्ति संगीत 114
60. आर्य समाज संगठित है 115
61. राष्ट्रीय आंदोलन के प्रेरणा स्रोत 117
62. आर्य सत्याग्रह हैदराबाद 119
63. आर्य संदेश के विशेषांक 121
64. संसद की गरिमा 123
65. राष्ट्रीय अवकाश 125
66. जय हिंदी ! जय हिंद ! 126
67. हिंदी भाषा और राष्ट्रीय एकता 127
68. जातीय आधार पर आरक्षण राष्ट्रीय एकता के लिए घातक है 131
69. स्वामी दयानन्द 133

महात्मा गांधी और मद्य निषेध

आर्यसमाज अपने प्रारम्भिक काल से ही शराब खोरी को बन्द करने का पक्ष-धर रहा है। शराब बन्दी के लिए आर्यसमाज ने सदा से ही आंदोलन भी चलाए हैं। महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में राजधर्म विषयक छठे समुल्लास में राजा और सभासदों को जिन व्यसनों से बचने के लिए कहा है, उनमें से एक प्रमुख व्यसन है—मद्यपान और मादक द्रव्यों का सेवन। स्वामी जी ने मादक द्रव्यों की व्याख्या करते हुए लिखा है।—'बुद्धि लुम्पति यद् द्रव्यं मदकारी तदुच्यते। जिसके सेवन से बुद्धि नष्ट होती है, वह वस्तु मादक है।' स्वामी जी ने आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य के समाप्त होने का एक प्रमुख कारण मद्य-मांस का सेवन माना है। यादवों के नाश का कारण वे मद्यपान मानते हैं।

आर्यसमाज सदा से ही मद्यनिषेध का प्रचारक रहा है। महर्षि दयानन्द निर्वाण अर्ध शताब्दी के अवसर पर आर्यसमाज ने नशा-निवारण का अभियान चलाया था। इसमें शराब के साथ-साथ अन्य मादक द्रव्यों पर भी रोक लगाने की बात कही गयी थी। उस समय आयोजित नशाबन्दी सम्मेलन में अनेक प्रस्ताव भी पारित किए गए थे। इस समस्या का समाधान आसान नहीं है। यह सामान्य नियम है कि लोग अच्छाई की तरफ कम और बुराई की ओर अधिक जाते हैं। हरियाणा आर्य प्रतिनिधि सभा कई वर्षों से मद्यनिषेध आन्दोलन चला रही है। आर्य प्रतिनिधि सभा की शताब्दी के आयोजन के अवसर पर व्यसन-मुक्ति सम्मेलन भी किया गया था। उन्हें कुछ सफलता भी मिली है, परन्तु यह कहना अत्युक्ति न होगी कि उत्तर भारत के किसी भी प्रान्त की अपेक्षा मद्य की खपत का अनुपात हरियाणा में सर्वाधिक है। अभी पिछले दिनों चौबीसी महम से एक पदयात्रा का आयोजन भी किया गया। आयोजकों के पवित्र उद्देश्य में सामाजिक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध संस्थाओं ने सहयोग भी दिया। इस पदयात्रा का समापन बोट क्लब पर एक विशाल रैली के साथ हुआ। राष्ट्रपति को एक ज्ञापन भी दिया गया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा भी इस दिशा में सदैव प्रयत्नशील रही है। सभाप्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती इस लत के कारण बहुत चिन्तित हैं। यदि विदेशों में ओलम्पिक्स में अथवा अन्य प्रतियोगिताओं में भारतीय खिलाड़ी किसी प्रकार के पदक प्राप्त करने में असफल होते हैं तो इसका कारण भी मद्यपान और रोष, आक्रोश एवं दुःख प्रकट कर चुके हैं। सरकार इस दिशा में बिल्कुल आँखें मूंदे हुए हैं। उन्हें राजस्व चाहिए, देश कहीं भी जाए। पिछले दिनों स्वामी जी महाराज

ने आर्य जगत् को एक त्रिसूत्री कार्यक्रम दिया है—गोवध बन्द करो, अंग्रेजी हटाओ तथा शराब के ठेके उठाओ। ये तीनों ही सूत्र बहुत ही प्रासांगिक हैं तथा देश-विदेश की सभी सभाओं, आर्यसमाजों तथा समान विचारधारा वाले अन्य संगठनों ने इनका स्वागत किया है तथा पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया है। युवा शक्ति की रक्षा के इन तीनों सूत्रों का परिपालन अत्यन्त आवश्यक है। आर्यसमाजों तथा अन्य संस्थाओं में इन सूत्रों को लेकर कार्यक्रम प्रारम्भ भी हो गये हैं सभाओं के अखबारों में इन विषयों पर लेख लिखे जा रहे हैं, आर्यसमाजों में समारोह किए जा रहे हैं। अभी दिल्ली में हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर सर्वाधिक प्रखर स्वर यही था कि अंग्रेजी हटाओ। नवम्बर मास में एक रैली का आयोजन किया जायेगा, जिसका उद्देश्य होगा—गोरक्षा करो। वास्तव में जन चेतना किसी भी आन्दोलन की रीढ़ होती है और आर्यसमाज यही कर रहा है। यदि लोग समय रहते चेत जाएं तो सब ठीक हो जायेगा, अन्यथा इस जाति का नाश सुनिश्चित है।

हमने इस लेख का शीर्षक "महात्मा गांधी और मद्यनिषेध" दिया है। महात्मा गांधी की कुछ बातों का क्या अर्थ लिया जाए यह विचारणीय है। जैसे कि—'मुझसे पूछा जाता है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न पर मैंने अपना मूंह क्यों बन्द कर लिया। मैंने तो कहा कि यह सवाल मेरे हाथ से निकल गया और अब वह खुदा के हाथ में है। जहाँ स्वामी श्रद्धानन्द जैसे व्यक्ति की हत्या हो सकती है, वहाँ हिन्दू-मुस्लिम एकता की बात कैसे सुनाऊं? मुसलमानों के ऐसे झगड़े देखकर मैं थक गया। यदि कोई आदमी ये झगड़े मिटाने के लिए अपना जीवन खर्च करता था, तो वह मैं ही था। परन्तु मेरे प्रयत्नों का फल दिखाई नहीं दिया। मैंने तो सब्र कर लिया और खुदा पर भार डाल कर बैठ गया।' ये वाक्य राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के हैं। जिस व्यक्ति के इशारे से सैकड़ों, हजारों, लाखों, करोड़ों लोग चल पड़ते थे, वह धार्मिक सहिष्णुता के मामले में कितना असहाय हो गया था।

उनकी असहायता की यही बात शराब बन्दी के विषय में भी सही है। महर्षि दयानन्द तो मानते थे कि शराब मनुष्य को राक्षस बना देती है। यह बात गांधी जी भी कहते थे कि सस्ते मनोरंजन के लिए मजदूर नैतिक पतन करने वाले सिनेमागृहों, शराब की दुकानों और वेश्यालयों की शरण लेते हैं तथा उनकी उदात्त भावनाएं मर जाती हैं। गांधी जी भी शराब का पूर्ण निषेध चाहते थे। उनका कहना था—'यदि मुझे एक घण्टे के लिए भारत का डिक्टेटर बना दिया जाए, तो मेरा पहला काम यह होगा कि शराब की दुकानों को बिना मुआवजा दिए बन्द करवा दिया जाए। हाय रे दुर्भाग्य—आज गांधी के नाम पर वोट बटोरने वाले शराब को हटाने की बजाय, बढ़ा रहे हैं। महात्मा गांधी की आत्मा को वे कैसा दण्ड दे रहे हैं। गांधी जी ने यह भी कहा था—'हमें इस दलील के भुलावे में नहीं आना चाहिए कि शराब बन्दी जोर जबरदस्ती के आधार पर नहीं होनी चाहिए और लोग शराब पीना चाहते हैं' उन्हें उसकी सुविधाएं मिलनी चाहिएं। राज्य का यह कोई कर्त्तव्य नहीं कि वह अपनी

प्रजा की कुटेवों के लिए अपनी ओर से सुविधाएं दें। मैं भारत का गरीब होना पसन्द करूंगा लेकिन मैं यह बर्दास्त नहीं कर सकता कि हमारे हजारों भाई लोग शराबी हों।' महात्मा गांधी यह जानते थे कि राजस्व प्राप्ति की बात आगे चलकर आएगी, पर दुःख इस बात का है कि गांधी की बात भी किसी ने नहीं सुनी।

महात्मा गांधी ने बीड़ी सिगरेट का भी इसी प्रकार विरोध किया था—'शराब की तरह बीड़ी और सिगरेट के लिए भी मेरे मन में गहरा तिरस्कार है। बीड़ी और सिगरेट को मैं कुटेव मानता हूं। यह मनुष्य की विवेक बुद्धि को जड़ बना देती है।

महात्मा गांधी गोरक्षा के भी प्रबल समर्थक थे। उन्होंने कहा था—गोरक्षा मुझे मनुष्य के सारे विकास क्रम में सबसे अलौकिक वस्तु मालूम हुई है।' अंग्रेजी सीखने के विचारहीन मोह से भी मुक्ति चाहते थे। इन विषयों पर फिर कभी लिखा जाएगा।

महात्मा गांधी का जन्मदिन 2 अक्तूबर है। सारे देश में उनकी जयन्ती मनाई जाएगी, सभी सरकारी कार्यालयों में छुट्टियाँ भी रहेंगी, विद्यालय भी बन्द रहेंगे। हम नहीं जानते कि गांधी जी का सच्चा स्मरण कितनों को होगा। यदि हम वास्तव में देश को सम्मुन्नत देखना चाहते हैं, तो शराब को एक दम बन्द किया ही जाना चाहिए। आर्यसमाज के त्रिसूत्री आन्दोलन का यह एक भाग है। सभी आर्यजनों को चाहिए कि वे इस विषय में प्रबल चेतना जागृत करें और सार्वदेशिक सभा के आह्वान पर इस कार्यक्रम को पूर्ण निष्ठा के साथ क्रियान्वित करें।

(आर्य संदेश, 1-10-89)

परमेश्वर पूर्ण ज्ञानी है।

(प्रश्न) परमेश्वर अपना अन्त जानता है वा नहीं ?

(उत्तर) परमात्मा पूर्ण ज्ञानी है, क्योंकि ज्ञान उसको कहते हैं कि जिससे ज्यों का त्यों जाना जाय, अर्थात् जो पदार्थ जिस प्रकार का होगा उसको उसी प्रकार जानने का नाम ज्ञान है। जब परमेश्वर अनन्त है तो अपने को अनन्त ही जानना ज्ञान, उससे विरुद्ध अज्ञान अर्थात् अनन्त को सान्त और सान्त को अनन्त जानना भ्रम कहाता है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

श्याम जी कृष्ण वर्मा

अमर हुतात्मा श्याम जी कृष्ण वर्मा महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य शिष्य थे। वे संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पंडित थे। धारावाहिक, प्रवाह पूर्ण शैली में संस्कृत में अभिभाषण करने वाले उस महान् व्यक्ति का नाम भारत के गौरवमय संघर्ष पूर्ण इतिहास में सदैव स्मरण किया जाएगा। भारत की स्वाधीनता के लिए जो संग्राम 1857 में प्रारम्भ हुआ था, जिस कड़ी के भाग थे—संन्यासी विद्रोह, कूका विद्रोह और क्रांतिकारी आन्दोलन, उसी बलिदानी कड़ी में श्याम जी कृष्ण वर्मा का भी नाम है।

श्याम जी कृष्ण वर्मा का जन्म 4 अक्तूबर 1857 को गुजरात के कच्छ जिले के माण्डवी नामक ग्राम में हुआ था। 12 वर्ष की आयु में एक संन्यासिनी की सेवा करते हुए, उनकी प्रेरणा से उन्होंने संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। बाद में बम्बई के सेठ मथुरादास भाटिया उनके संस्कृत ज्ञान एवं जिज्ञासु प्रवृत्ति से इतने प्रभावित हुए कि उन्हें अपने व्यय पर बम्बई के विलसन हाई स्कूल में प्रवेश दिला दिया। हाई स्कूल परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर 18 वर्ष की वय में सेठ छबीलदास ने अपनी सुपुत्री का विवाह उनसे कर दिया।

1874-75 में महर्षि दयानन्द सरस्वती के भाषणों की बम्बई में धूम मची थी। उनके विद्वत्ता एवं पण्डित्य से परिपूर्ण अकाट्य तर्कों पर आधारित भाषणों का सर्वत्र प्रभाव था। श्याम जी कृष्ण वर्मा उनके दर्शनों के लिए वहां गए और उनके विलक्षण व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि वहीं उनके शिष्य बन गए। स्वामी जी महाराज से उन्हें अपार स्नेह एवं प्रेरणा मिली वेदों के स्वाध्याय में उनकी प्रवृति हुई। 1877 से 1878 तक वह आर्यसमाज के प्रचारक रहे। 1878 में ओक्स फोर्ड विश्व-विद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष सर मोनियर विलियम भारत आए। वे श्याम जी कृष्ण वर्मा के संस्कृत अभिभाषणों से अत्यधिक प्रभावित हुए और उन्हें आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर नियुक्त कर लिया। महर्षि दयानन्द के अनन्य शिष्य श्याम जी इंग्लैंड पहुँचे और वहां से जो उनका जीवन प्रारम्भ हुआ, वह क्रांतिकारिता का जीवन था। महर्षि दयानन्द ने अपने होनहार शिष्य को स्वराज्य व स्वधर्म हेतु कार्य करने की प्रेरणा दी थी। उन्होंने इंग्लैंड में जाकर ब्रिटिश साम्राज्यवादी शक्ति से उसके घर में घुस कर लोहा लेने का निश्चय किया। उन्होंने इण्डियन सोशयोलिस्ट पत्रिका और द इण्डियन होमरूल सोसायटी के माध्यम से अपना कार्य प्रारम्भ किया। भारतीय छात्रों के हित के लिए 'इण्डियन हाउस' की

स्थापना की जो आगे चल कर क्रांतिकारी गतिविधियों का केन्द्र बना। उनकी प्रेरणा से वीर सावरकर ने 'स्वातन्त्र्य समर' पर एक पुस्तक लिखी जो क्रांतिकारियों की गीता के नाम से प्रसिद्ध हुई। वीर सावरकर के अतिरिक्त क्रांतिवीर मदनलाल धींगड़ा भी इण्डिया हाउस के देदीप्यमान सितारे थे। मार्च 1930 में उस वीर का देहान्त हो गया। उस वीर को हम सदैव स्मरण करेंगे जो आजादी की अलख जगाता हुआ, अन्याय शोषण, पराधीनता-बन्धन, अन्ध विश्वासों के विरुद्ध सदैव प्रयत्नशील रहा।

उस कर्मठ महामानव के लिए हमारी श्रद्धांजलि।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 8-10-89)

ईश्वर का अवतार नहीं।

(प्रश्न) ईश्वर अवतार लेता है वा नहीं? (उत्तर) नहीं क्योंकि "अज एकपात" "सापर्यगाच्छुक्रमकायम्" ये यजुर्वेद के वचन हैं। इत्यादि वचनों से सिद्ध है कि परमेश्वर जन्म नहीं लेता।

(प्रश्न) श्री कृष्ण जी कहते हैं कि जब जब धर्म का लोप होता है तब तब मैं शरीर धारण करता हूं। (उत्तर) यह बात वेदविरुद्ध होने से प्रमाण नहीं। और ऐसा हो सकता है कि श्रीकृष्ण धर्मात्मा और धर्म की रक्षा करना चाहते थे कि मैं युग युग में जन्म लेके श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों का नाश करूं तो कुछ दोष नहीं। क्योंकि "परोपकाराय सत्तां विभूतयः" परोपकार के लिये सत्पुरुषों का तन, मन, धन होता है। तथापि इससे श्रीकृष्ण ईश्वर नहीं हो सकते।

विजय दशमी का पर्व

विजयदशमी का पर्व विजय एवं उल्लास का पर्व है। यह कहा जाता है कि इस दिन राम की रावण पर विजय हुई थी। सद् वृत्तियों की विजय दुर्वृत्तियों पर हुई थी। राक्षसों पर देवताओं की विजय हुई थी। असत्य पर सत्य की विजय हुई थी। अधर्म पर धर्म की विजय हुई थी। हमारे धार्मिक आख्यानों में ऐसे अनेक वृत्तान्त आते हैं जो इस विचार को रूपायित करते हैं कि अन्याय कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, अन्तिम विजय सदैव न्याय की होती है। रामायण और महाभारत के प्रसंग तो भारतीय जनता के मानस में रचे-बसे हैं। राम की लीलाएं सर्वत्र की जाती हैं। नाटकों तथा चलचित्रों के माध्यम से उन्हें प्रदर्शित किया जाता है। रामलीला आजकल दूरदर्शन पर भी प्रदर्शित किया जा रहा है। आर्यसमाज का दृष्टिकोण प्रारम्भ से ही भोण्डे प्रदर्शन के विपरीत रहा है। आर्यसमाज सात्त्विकता का पक्षधर है। हम उस मर्यादा पुरुषोत्तम राम का स्मरण करते हैं जो इस संसार के पुरुषों में महापुरुष है। जो अपने जीवन में मर्यादाओं का कहीं भी उल्लंघन नहीं करता। जो शक्ति, शील एवं सौन्दर्य का साक्षात् रूप है।

वह भगवान राम राक्षसराज रावण पर विजय प्राप्त करते हैं। निष्ठावान् श्रद्धालु भक्त अपनी आराधनाओं के क्षणों में उन प्रसंगों को अपनी अभिन्न प्रतिमा से जीवित करते हैं। ऐसे अनेक कार्मिक प्रसंग इन लीलाओं से जुड़े हैं जो जनमानस को उद्वेलित करते हैं। उनके हृदय में प्रसन्नता, शोक, क्रोध, शौर्य, शान्ति के भावों को जागृत करते हैं। अन्तिम परिणति शान्ति में होती है। यही मानव जीवन का लक्ष्य भी है।

ये पर्व हमारे लिए संकल्प के दिवस होते हैं। आओ हम सब मिलकर संकल्प करें कि हम अन्धविश्वास, अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अपनी लड़ाई आजीवन जारी रखेंगे, सत्य की स्थापना के लिए सदैव प्रयत्नशील रहेंगे, विश्व और राष्ट्र में शान्ति और एकता तथा अखण्डता के लिए प्रयास करेंगे। संसार से मद्यादि दुर्व्यसनों को दूर करेंगे। हमारे जीवन की मूलाधार गौ की रक्षा करेंगे। विदेशी भाषा एवं संस्कृति को अपने जीवन व्यवहार से दूर रखेंगे। तभी इन पर्वों का आयोजन हमारे लिए सार्थक होगा।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 8-10-89)

उर्दू को उत्तर प्रदेश की द्वितीय राजभाषा बनाना भारतीय एकता और अखंडता के लिए घातक

कांग्रेस ने उत्तर प्रदेश में सरकारी भाषा संशोधन विधेयक पास करा लिया है। इससे उग्रपंथियों ने मारकाट की प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी है। दोनों पक्षों के लोग अपनी-अपनी बात को सत्य सिद्ध करने के प्रयास में, हर तरह से कहना चाहेंगे और जब बात शांति से कहना सम्भव नहीं होता तो हिंसा के मार्ग का अवलम्बन अपरिहार्य हो जाता है। बदायूं के दंगे यही कहानी कहते हैं। विधानसभा में जो तनाव था, वह भी इसी बात का साक्षी है। उर्दू को दूसरी राजभाषा बनाने से किसी का भी हित सधेगा, यह प्रश्न विचारणीय है। इससे उत्तर प्रदेश जैसे राज्य में भी हिन्दी की विविधता को बनाए रखने में बाधा आएगी। हम तो अभी तक यही मानते आए थे कि हिन्दी और उर्दू दोनों एक ही भाषा की दो शैलियाँ हैं। पर अब भाषा के स्तर पर मुसलमानों को अलग-थलग करने की राजनीति मजबूत होगी। हिन्दी की बात छोड़ भी दें, मुसलमानों के लिए भी इससे पेचीदगियाँ शुरू होंगी। भाषा के आधार पर पंजाब में जो साम्प्रदायिकता पनपी थी, उसने आज उग्रवाद और आतंकवाद का रूप धारण कर लिया है। क्या वही यहां पर भी नहीं होगा ' उत्तर प्रदेश में अब तक हिन्दू और मुसलमानों की भाषा एक ही रही है। उसमें मजहब की कोई भी दीवार नहीं रही। खड़ी बोली के इलाके में दोनों लोग एक ही बोली बोलते हैं। ब्रजभाषा के इलाके में भी यही बात है। वहाँ पर ईसाइयों तक ने ब्रजभाषा में गीत बनाए हुए हैं। अवधि के क्षेत्र में सभी अवधी बोलते हैं। यही बात बांगरू के लिए भी सही है। भाषा के आधार पर उर्दूवाद या हिन्दीवाद को बढ़ावा देना, फिरकापरस्ती को बढ़ावा देना होगा। साम्प्रदायिक दंगे होंगे। जनता में असन्तोष बढ़ेगा। शायद मुसलमान भी इससे खुश नहीं होंगे। उनमें भी असन्तोष बढ़ेगा। रामजन्म भूमि का विवाद पहले से ही है। उसमें भी यह नया विवाद आग में घी का काम करेगा। भारतीय जनता पार्टी ने इस मामले को खूब उछाला है और इससे नुकसान कांग्रेस पार्टी को होगा। पार्टीबाजी से ऊपर आकर देखें तो इससे नुकसान राष्ट्रीय हितों को होगा, देश की भावात्मक एकता का होगा। राष्ट्र की अखण्डता को इससे आघात पहुंचेगा। साम्प्रदायिकता का जवाब दूसरी साम्प्रदायिकता से नहीं दिया

जा सकता। इस समस्या का समाधान हिन्दू मुसलमानों की एकता में है। उनके आपसी सहयोग में है।

उर्दू को राजभाषा बनाने के खिलाफ सुप्रसिद्ध साहित्यकार पं० श्री नारायण चतुर्वेदी ने उत्तर प्रदेश सरकार का एक लाख का भारतभारती पुरस्कार ठुकरा दिया है।

इस प्रकार की संवैधानिक समस्याएँ पहले भी उठी थीं। उत्तर प्रदेश के मंत्री प्रोफेसर वासुदेव सिंह ने इस प्रकार के विधेयक का जबरदस्त विरोध किया था। उस समय के मुख्यमंत्री ने अपना विधेयक वापस ले लिया था। संविधान की धारा 345 के अनुसार किसी अन्य भाषा को द्वितीय राजभाषा बनाया जा सकता है, परन्तु उत्तर प्रदेश में वैसी स्थिति नहीं है। वहाँ पर न तो उर्दू को द्वितीय राजभाषा बनाये जाने की मांग है और न ही वहाँ पर 30 प्रतिशत लोग उर्दू भाषी हैं। उर्दू को संरक्षण देना, अंग्रेजी को लादे रखने के लिए है। इससे बिलगाव के बीज बोये जायेंगे।

हिन्दी को हम राजभाषा बनाना चाहते हैं। हम महर्षि दयानन्द के वाक्य को बार-बार उद्धृत करते हैं—हिन्दी ही सारे भारत को एकता के सूत्र में बांध सकती है। परन्तु हमारे व्यवहार में हिन्दी का कितना स्थान है। हमें आत्मनिरीक्षण करना चाहिए और अपने सभी कार्यों में—निमंत्रण पत्रों, नामों, सड़कों, भवनों और बोलचाल आदि में हिन्दी का प्रयोग करना चाहिए।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 15-10-89)

देवता।

(प्रश्न) वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं उसका क्या अभिप्राय है? (उत्तर) देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं जैसे कि पृथ्वी। परन्तु इसको कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

मदुराई क्षेत्रों में धर्मान्तरण

धर्मान्तरण की समस्या कोई नई नहीं है। मीनाक्षीपुरम और रामनाथपुरम के किस्से सुविख्यात हैं। भारत की जनता और विशेषकर आर्य जनता यह अच्छी तरह जानती है कि यदि समय रहते इस समस्या की ओर ध्यान न दिया जाता तो यह समस्या कितनी दुर्वह हो सकती थी सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री लाला रामगोपाल शाल वाले (वर्तमान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती) और तत्कालीन मन्त्री श्री ओमप्रकाश त्यागी ने बड़ी तत्परता से इस समस्या का समाधान खोजने का प्रयास किया था। वे वहां पर तुरन्त गए भी, ताकि परिस्थितियों का सही विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया जा सके। उन्होंने समस्याओं का विश्लेषण किया और समाधान भी किया। मीनाक्षीपुरम का सारा गांव पुनः वैदिक धर्म में दीक्षित हो चुका है। वहां पर आर्यसमाज मन्दिर है और वैदिक पाठशाला चल रही है जिसका सम्पूर्ण व्ययभार सार्वदेशिक सभा, अन्य दानी महानुभावों के सहयोग से, वहन कर रही है। इस सम्पूर्ण क्रिया कलाप में पं० रामचन्द्रराव वन्देमातरम् का योगदान अप्रतिम है।

अब एक नई समस्या उठ खड़ी हुई है। हिन्दुस्तान टाइम्स के 2 सितम्बर 1989 के दिल्ली संस्करण में मदुराई के श्री सी० एस० जयराज के प्रेषण के आधार पर समाचार प्रकाशित हुआ है। जिसका मूल स्वर यही है कि अब मदुराई में एक वर्ग विशेष के लोगों ने धमकी दी है कि यदि उनकी कठिनाइयों का समय रहते समाधान न किया गया और उनको इसी प्रकार सताया जाता रहा तो वे धर्मान्तरण कर लेंगे। इस प्रकार धमकियां देश के अनेक कोनों से समय-समय पर उठती रहती हैं। पिछले दिनों उत्तर प्रदेश में कुछ लोग अपना धर्म परिवर्तन करना चाहते थे। आर्यसमाज के लोगों ने वहां पर जाकर सराहनीय कार्य किया था। अब मदुराई में भी ऐसा ही अभियान छेड़ना पड़ेगा। आर्यसमाज सामाजिक व्यवस्था का सजग प्रहरी है। मदुराई में आर्यसमाज है। वहां के कार्यकर्त्ता सप्राण हैं। पं० रामचन्द्रराव वन्देमातरम् का कार्यक्षेत्र वहीं है। यद्यपि उनके जिम्मे काम बहुत हैं परन्तु हमें विश्वास है कि उन जैसे जीवट का व्यक्ति कभी हारेगा नहीं, कभी थकेगा नहीं।

मदुराई क्षेत्रों के इन लोगों को, युवकों और युवतियों को, जो बहुत ही आवेश में थे तथा बार-बार धर्मान्तरण की धमकी दे रहे थे, पिछले दिनों राज्यस्तर के तथा केन्द्र के नेताओं ने सम्बोधित किया और उनसे आग्रह किया कि वे शान्त रहें, उनकी समस्याओं का समाधान खोजा जाएगा, परन्तु वे शान्त नहीं हुए। केन्द्रीय मन्त्री श्री पी-चिदम्बरम ने भी उन्हें सम्बोधित किया। ये लगभग 1500 परिवार हैं। थिरु-

मंगलम् विलक्क् और अन्य जगहों पर इन्होंने प्रदर्शन भी किया। यातायात ठप्प हो गया और दुकानें भी बन्द हो गयीं। वहां पर साम्प्रदायिक दंगे हुए थे जिनमें 27 व्यक्ति मारे गए तथा कम से कम दो करोड़ की सम्पत्ति का नुकसान हुआ।

हमारा उद्देश्य इस घटना का बढ़ा चढ़ाकर वर्णन करना नहीं है। हमारा उद्देश्य यही है कि इस प्रकार की समस्याओं का समय रहते समाधान किया जाए। इन समस्याओं का निदान हम सभी को मिलकर करना होगा। जब भी धर्मान्तरण की समस्या आती है, यही कहा जाता है कि वर्ग विशेष के लोग गरीब लोगों को सताते हैं। हम आपसी सद्भाव क्यों नहीं बढ़ाते। हमारा कर्त्तव्य है कि लम्बे समय से जो लोग दलित हैं, पीड़ित हैं, हम उन्हें अपनाएं तथा उन्हें अपना मानें। उन्हें संरक्षण दें। उन्हें विश्वास दिलाएं कि धर्म परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। उन्हें वह सब यहीं मिलेगा, जो उनका प्राप्य है।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसदेश, 22-10-89)

(प्रश्न) जो ईश्वर अवतार न लेवे तो कंस रावण आदि दुष्टों का नाश कैसे हो सके? (उत्तर) प्रथम जो जन्मा है वह अवश्य मृत्यु को प्राप्त होता है। जो ईश्वर अवतार शरीर धारण किये बिना जगत की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करता है उसके सामने कंस और रावण आदि एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह सर्वव्यापक होने से कंस रावण आदि के शरीरों में भी परिपूर्ण हो रहा है, जब चाहे किसी समय मर्म-च्छेदन कर नाश कर सकता है। भला इस अनन्त गुण कर्म स्वभाव युक्त परमात्मा को एक क्षुद्र जीव को मारने के लिये जन्म मरण युक्त कहने वाले को मूर्खपन से अन्य कुछ विशेष उपमा मिल सकती है? और जो कोई कहे कि भक्तजनों के उद्धार करने के लिये जन्म लेता है तो भी सत्य नहीं, होगा कि जो भक्तजन ईश्वर की आज्ञानुकूल चलते हैं उनके उद्धार करने का पूरा सामर्थ्य ईश्वर में है। क्या ईश्वर के पृथिवी, सूर्य, चन्द्रमा, आदि जगत् को बनाने, धारण और प्रलय करने रूप कर्मों से कंस रावण आदि का वध और गोवर्धनादि पर्वतों का उठाना बड़े कर्म हैं।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

पृथ्वी

पिछले दिनों भारतवर्ष ने 'पृथ्वी' का दूसरी बार सफल परीक्षण किया। इससे यह सिद्ध हो गया कि भारत प्रक्षेपास्त्र विज्ञान के क्षेत्र में विकसित देशों के मुकाबले में खड़े होने की क्षमता रखता है। 'पृथ्वी' नामक प्रक्षेपास्त्र ढाई सौ किलोमीटर दूर तक मार करने की क्षमता रखता है। इस प्रक्षेपास्त्र की अपनी विशिष्टताएं हैं। इसे एक बार दागने के बाद नियन्त्रण केन्द्र से कोई निर्देश देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यह पूर्णत: स्वचालित है। इसमें अन्दर ही कम्प्यूटर लगे हैं। इसमें लगे कम्प्यूटर बहुत ही दक्ष हैं। उनकी तुलना अमेरिकी और रूसी संयन्त्रों से की जा सकती है।

इस संबंध में एक बात और बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इस अस्त्र में एक या दो इलैक्ट्रोनिक उपकरणों को छोड़कर बाकी सभी अन्य स्वदेशी अनुसन्धान और तकनीक द्वारा बनाए गए हैं। यह अस्त्र 1983 में बने प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम का एक हिस्सा है। इसके छ: भाग हैं—त्रिशूल, आकाश, नाग, पृथ्वी, अग्नि और अस्त्र। त्रिशूल अल्प सूचना पर पृथ्वी से हवा में मार करने वाला अस्त्र है। इसका उपयोग तेज रफ्तार वाले विदेशी विमानों पर किया जाता है। आकाश मध्यम दूरी तक हवा में मार कर सकता है। नाग टैंक भेदक अस्त्र है। पृथ्वी का परीक्षण पिछले दिनों किया गया है। यह प्रक्षेपास्त्र 250 किलोमीटर की दूरी तक पृथ्वी पर मार करने के काम आता है। अग्नि का परीक्षण अभी कुछ दिन पहले भारत में किया गया था। अग्नि और पृथ्वी के सफल परीक्षण से भारतीय प्रतिरक्षा को नये आयाम मिले हैं। 'अस्त्र' के विषय में अभी अनुसंधान किया जा रहा है।

भारतीय प्रक्षेपास्त्र तकनीक से अनेक देश कुपित भी हैं। यह स्वाभाविक भी है। अभी हमें पूर्णतः आत्मनिर्भर होने की जरूरत है। भारत के सामने अनेक समस्याएं हैं।

—डा. धर्मपाल

आर्यसन्देश, 22-10-89

महर्षि दयानन्द : निर्वाण दिवस

आर्यसमाज के संस्थापक, मानव मूल्यों के उन्नायक, युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का आविर्भाव इस भारतभूमि पर उस समय हुआ था, जब यह देश पराधीन था तथा यहाँ के लोग अनेक प्रकार के अन्धविश्वासों में जकड़े थे। वे अपनी शक्तियों को पहचानने में असमर्थ थे। महर्षि दयानन्द ने भारतीय जनमानस को झकझोरा और उन्हें परमात्मा की वाणी वेद से अवगत कराया। वेद सार्वभौम एवं सार्वकालिक हैं। उनमें मनुष्य मात्र के कल्याण की बात को सर्वोपरि माना गया है। स्वामी जी ने वेदों को आधार बनाकर अपने मन्तव्यों का प्रचार प्रसार किया। उस बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी, ऋषिवर ने केवल एक ही क्षेत्र में कार्य नहीं किया, अपितु उसने सभी क्षेत्रों में अपनी अनथक लड़ाई जारी रखी। वे भारतभू को स्वतन्त्र देखना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने सतत प्रयास किया। वे यहां के लोगों को अन्धविश्वासों और सामाजिक कुरीतियों से मुक्त देखना चाहते थे। वे गरीबों, असहायों और दलितों को समानता का दर्जा दिलाना चाहते थे। वे धर्म के नाम पर पनप रहे ढोंग को समाप्त करना चाहते थे। वे गौ की रक्षा चाहते थे। वे उसे भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलाधार मानते थे और इसके लिए उन्होंने जो परिश्रम किया, उसे सारा जग जानता है। उन्होंने स्त्री जाति के कल्याण के लिए कार्य किया। उन्हें शिक्षा का अधिकार दिलाया। उनके लिए पाठशालाएं खुलवाईं। उन्हें वेदों के अध्ययन का अधिकार दिया। वे अंग्रेजी शासन के साथ साथ अंग्रेजी पढ़ाने के भी विरोधी थे। व हिन्दी और संस्कृत को प्राथमिकता देते थे। वे हिन्दी को राष्ट्रीय एकता के लिए आवश्यक मानते थे। वे शिक्षा का माध्यम भी अंग्रेजी नहीं चाहते थे। उन्होंने मद्य मांसादि अभक्ष्य पदार्थों के सेवन के विरुद्ध आवाज उठाई। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक चेतना के सभी आयामों पर ऋषिवर ने कार्य किया।

हम प्रति वर्ष उनका निर्वाण दिवस मनाते हैं। हम औपचारिकता मात्र का निर्वाह करते हैं। बहुत अधिक हुआ तो हम एक दूसरे का विरोध कर लेते हैं, परन्तु हम अपने अन्दर झांक कर नहीं देखते। हम अपनी स्वयं की परीक्षा नहीं करते। हम आत्म-निरीक्षण, परीक्षण एवं विश्लेषण नहीं करते। काम करना तो दूर रहा, हमें यह भी ध्यान नहीं आता कि हमें ऋषिवर के कार्य को आगे बढ़ाना है। हम केवल भूतकाल की बात करते हैं। हम अपने वक्तव्यों और भाषणों में कहते हैं कि आर्य-समाज एक सजग प्रहरी रहा है। क्या बात है कि आज हम लोग निराशा को ओढ़ने की बात सोचते हैं। आओ ! उठो ! जागो ! और अपना कार्य करो ! यह मत सोचो

कि इस कार्य को करने के लिए, कोई और आएगा। किसी दैवी शक्ति से यह कार्य नहीं होगा। इसके लिए हम सबको स्वयम् अपने हथियार उठाने होंगे। सार्वदेशिक सभा ने हमें त्रिसूत्री कार्यक्रम दिया है। इस वर्ष इसी कार्य को करें। करने के लिए तो अनेक कार्य हैं, पर इस वर्ष यही पूरा कर लें। ऐसी बात नहीं है कि ये कोई नये कार्य हैं। आर्यसमाज इन कार्यों के लिए प्रारम्भिक काल से ही जागरूक रहा है। बुराई भी सदा से रही है। आओ, इस बुराई को मिटाने का भरसक प्रयास करें। पहले अपना सुधार करें, बाद में जग की बात सोचें। पहले अपना निर्माण करें। आओ इन्सान बनें। सबके दुख-दर्द की बात सोचने, करने लायक बनें।

डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 29-10-89)

ईश्वर निराकार व साकार।

(प्रश्न) ईश्वर साकार है वा निराकार ? (उत्तर) निराकार क्योंकि जो साकार होता तो व्यापक नहीं हो सकता। जब व्यापक होता तो सर्वज्ञादि गुण भी ईश्वर में न घट सकते, क्योंकि परिवस्तु में गुणकर्म स्वभाव भी परिमित रहते हैं। तथा शीतोष्ण, तृषा और रोग, दोष, छेदन, भेदन आदि से रहित नहीं हो सकता इससे यही निश्चित है कि ईश्वर निराकार है। जो साकार हो उसके नाक कान आंख आदि अवयवों का बनाने हारा दूसरा चाहिये। क्योंकि जो संयोग से उत्पन्न होता है उसको संयुक्त करने वाला निराकार चेतन अवश्य होना चाहिये जो कोई यहां ऐसा कहे कि ईश्वर ने स्वेच्छा से आप ही आप अपना शरीर बना लिया तो भी यही सिद्ध हुआ कि शरीर बनने से पूर्व निराकार था। इसलिये परमात्मा कभी शरीर धारण नहीं करता किन्तु निराकार होने से जब जगत् को सूक्ष्म कारणों से स्थूलाकार बना देता है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्यसंदेश

'आर्यसन्देश' अपने जीवन के बारह वर्ष पूरे कर चुका है। 'आर्यसन्देश' ने अपने इस छोटे से जीवन काल में अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं। आर्यसन्देश ने पिछले वर्षों में अनेक विशेषांक भी आर्य जनता के लिए दिए हैं। उनमें कुछ विशेषांक अभी भी पाठकों को याद होंगे। स्वामी श्रद्धानन्द निर्वाण अर्ध शताब्दी और महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी पर प्रकाशित विशेषांकों को पाठक भूले नहीं होंगे। हमने प्रमुख पर्वों पर महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस, श्रद्धानन्द बलिदान दिवस, ऋषि बोधोत्सव तथा आर्यसमाज स्थापना दिवस पर तो विशेषांक प्रकाशित किए ही हैं। इसके साथ-साथ हमने श्रावणी, कृष्ण जन्माष्टमी, आर्य युवा सम्मेलन पर भी विशेषांक प्रकाशित किए हैं। श्याम जी कृष्ण वर्मा पं. लेखराम, महात्मा नारायण स्वामी तथा गुरुदत्त आदि पर भी विशेष लेखों का प्रकाशन किया है। इस वर्ष हमने डा. सत्यकेतु विद्यालंकार स्मृति अंक का प्रकाशन किया था। हमने इन अंकों को मात्र संस्मरण या श्रद्धांजलि तक ही सीमित नहीं रखा। हमारा प्रयास रहा है कि हम अपने पाठकों को आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म के साथ साथ इन महान् व्यक्तियों के व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व से सम्बन्धित सामग्री भी दें। डा. सत्यकेतु अंक में हमने उनके विचारों, जीवनादर्शों तथा साहित्य का विश्लेषण किया है। आर्य जगत् के सुधी विद्वानों ने इस कार्य में हमारा सहयोग दिया है।

आगामी वर्ष में हमारी हार्दिक अभिलाषा है कि हम दिल्ली की सभी आर्य-समाजों तथा दानी महानुभावों और विद्वान् लेखकों के सहयोग से आर्यसन्देश का नियमित प्रकाशन तो करते ही रहें, इसके अतिरिक्त सभी पर्वों पर पूर्ववत् विशेषांक भी प्रकाशित करें। हमारी इच्छा तो इससे भी ज्यादा है। वास्तव में वह हमारी महत्वाकांक्षा है। हम उसे पूरा करना चाहते हैं। इसे पूरा करने के लिये हमें आप सभी का सहयोग चाहिए।

हम चाहते हैं कि आगामी वर्ष में पर्वों पर प्रकाश्य विशेषांकों के अतिरिक्त हम (1) हैदराबाद सत्याग्रह, (2) गुरुदत्त शताब्दी, (3) इन्द्र विद्यावाचस्पति शताब्दी तथा (4) पं. शिवकुमार शास्त्री स्मृति—ये चार विशेषांक अवश्य प्रकाशित करें। यद्यपि वर्ष में ये चार तथा पर्वों पर चार कुल आठ विशेषांकों का प्रकाशन एक छोटे पत्र के लिए कोई आसान कार्य नहीं है तथापि हम करना चाहते हैं।

सार्वदेशिक सभा के द्वारा निर्दिष्ट त्रिसूत्री कार्यक्रम पर भी हम विद्वानों के लेख प्रकाशित करना चाहते हैं। विद्वान् लेखकों से हमारा आग्रह है कि वे अपनी समयानुकूल रचनाओं को समय से पहले भेज दिया करें।

हमने एक स्तंभ प्रारम्भ किया हुआ है—'दिवंगत आर्यश्रेष्ठी।' इस स्तम्भ के माध्यम से हम पाठकों को उन महान् व्यक्तियों के जीवन एवं कार्यों से परिचित कराना चाहते हैं, जिन्होंने प्राणपण से आर्यसमाज के लिए कार्य किया था। विद्वान लेखकों से हमारा अनुरोध है कि वे हमें इस पुनीत कार्य में सहयोग दें।

दीपावली के ही अवसर पर, आर्यसन्देश वर्ष में प्रारम्भ हुआ था। इसलिए हमने यह अपना कर्त्तव्य समझा कि पाठकों के सम्मुख इस अवसर पर अपनी स्थिति को प्रस्तुत कर दिया जाए। हम यह भी बताना चाहते हैं कि आर्यसन्देश के प्रकाशन में पर्याप्त घाटा है और यह घाटापूर्ति ग्राहकों के सदस्यता शुल्क, विज्ञापनों तथा दानियों के सौजन्य से ही की जाती है। हमारा पाठकों से विनम्र अनुरोध है कि वे समय पर अपना चंदा भेज दिया करें। वे आजीवन सदस्य बन जाएं, तो बहुत ही उत्तम होगा। वे अन्य लोगों को भी इस पत्र ता ग्राहक बनाकर हमारा सहयोग कर सकते हैं।

हमने अपनी बात आपके सामने रख दी है। आप जैसा उचित समझें, हमारा सहयोग करें।

दीपावली के इस पावन-पर्व के अवसर पर हम परमपिता से कामना करते हैं कि आपका जीवन सुख और समृद्धि से परिपूर्ण हो, तथा आपका भविष्य प्रशस्त एवं आलोकित हो।

मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देअ, 29-10-89)

ईश्वर अनेक हैं या नहीं।

(प्रश्न) वेद में ईश्वर अनेक हैं इस बात को तुम मानते हो बा नहीं? (उत्तर) नहीं मानते, क्योंकि चारों वेदों में ऐसा कहीं नहीं लिखा, जिससे अनेक ईश्वर सिद्ध हों। किन्तु यह तो लिखा है कि ईश्वर एक है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

राजनीति कब सकारात्मक होगी

भारतीय संसद के चुनावों की घोषणा हो चुकी है, यह लोकतन्त्र का महाभारत होगा। इस महाभारत में कोई व्यक्ति एक किनारे चुपचाप खड़ा होकर दो या अधिक दलों से युद्ध को तटस्थ भाव से नहीं देख सकता। उसे स्वयं भी इस युद्ध में भाग लेना होगा। भारत की जनता किन मर्यादाओं को ध्यान में रखकर इस महायुद्ध में भाग लेगी, यह विचारणीय है। जिस प्रकार राजनीतिक दलों के साथ पूर्वाग्रह जुड़े हुए हैं उसी तरह जनता के साथ भी। हम सदा से चाहते रहे हैं कि लोग निष्पक्ष हों, मानव मात्र को अपना समझें, सबकी भलाई और कल्याण की बात करें, वे नैतिकता को मानने वाले हों, वे जातपाँत से ऊपर उठे हुए हों, उनमें साम्प्रदायिकता न हो, वे विश्व नागरिक हों। परन्तु क्या कभी ऐसा हो सकता है ? क्या कभी पहले ऐसा हुआ है ? यदि पहले ऐसा हो सका हो अथवा अब हो सकता हो, तो, किसी प्रकार की आचार संहिता की आवश्यकता ही न पड़ेगी। बल्कि यह कहा जायेगा किसी प्रकार के चुनाव की ही जरूरत न पड़ेगी, परन्तु अब तो देश सामन्तवाद में और सामन्तवाद की प्रक्रिया में बँटा हुआ है। यहाँ पर अनेक सम्प्रदाय भी हैं। असमानता का कोढ़ भी है। कुछ लोग बहुत धन सम्पन्न भी हैं और अधिकतर लोग भुखमरी की रेखा के नीचे भी है। भुखमरी के नीचे रहते हुए भी इस महायुद्ध में सबसे ज्यादा अधिकार गरीबों के पास ही हैं। भले ही वे इसका प्रयोग न कर सकें, क्योंकि उनके ऊपर कुछ लोगों का आतंक है। वे या तो किसी के कर्जदार हैं अथवा किसी राजा को आज भी राजा मानते हैं, किसी जमींदार को आज भी जमींदार मानते हैं अथवा किसी धर्मगुरु को अपना धर्मगुरु मानते हैं और वे उसके कहने से ही अपने इस ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करेंगे। कहना यही हुआ कि वे इसका प्रयोग करने में भी स्वतन्त्र नहीं हैं।

हमें आजादी मिली। हमने सोचा था कि हमारे देश में जनतन्त्र आयेगा और समाजवाद आयेगा। परन्तु यहाँ न जनतन्त्र है और न समाजवाद है। आज भी नौकरशाही, जागीरदारी, साम्प्रदायिकता, जातिवादिता और सत्ताधारी पार्टी का वैशिष्ट्य मौजूद है। सभी गांधीवादी होने का दावा करते हैं। पर क्या कोई है ? ब्रिटिश साम्राज्य में गांधी के नेतृत्व में जिन प्रवृत्तियों को त्याज्य समझा जाता था, आज उन्हें हम सम्मान की वस्तु मानते हैं। इम्पोरटिड वस्तुओं को प्रदर्शन और वैभव की चीज माना जाता है। सादगी तो कहीं रही ही नहीं। गांधी के शिष्य होते हुए भी हमारे बड़े नेता राजसी प्रदर्शन करने में बिलकुल नहीं कतराते। जवाहर लाल नेहरू ने भी विदेशी कपड़ों की होली जलाई थी। वे लोग जनभावना के सामने झुकते थे। ऐसा

ऐसा ही बाद के नेताओं के साथ रहा। पर आज हम वह सब नहीं कर रहे। यदि हमें धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी जनतन्त्र बनाना है तो हमें अपनी इस सामन्तवादी मानसिकता को छोड़ना पड़ेगा और सामान्य जनता के लिए अपनी जिम्मेदारी को महसूस करना होगा। इसलिए जन-धन का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए। एक महत्त्वपूर्ण बात की ओर संकेत करना चाहता हूँ। इस आने वाले चुनाव में टिकटों का बटवारा सभी पार्टियों की ओर से एक आधार पर हुआ है। कि क्या वे वहाँ से चुनाव जीत सकते हैं। इसके लिए उनकी जाति, सम्प्रदाय और आर्थिक स्थिति को देखा गया है। किसी के लिए भी यह नहीं देखा गया कि उसका चरित्र कैसा है, उसका जीवन कैसा है। वह लोगों को किस दिशा में ले जाएगा। वह समाज को कितना ऊँचा उठा सकेगा और मनुष्य में कैसे संस्कार डाल सकेगा। यह भी देखा गया है कि कौन मतदान केन्द्रों पर कब्जा करवा सकेगा।

सारे दल प्रजा को प्रभावित करने के लिए लम्बा चौड़ा प्रचार करेंगे। उनका ध्यान इस बात पर कम रहेगा कि उन्होंने अब तक क्या किया है और आगे क्या करेंगे। बल्कि उनका ध्यान इस बात पर रहेगा कि दूसरे में क्या-क्या बुराइयां हैं। उनका ज्यादा समय इस बात पर लगेगा कि वे यह सिद्ध कर सकें कि उनके प्रतिद्वन्दी दुष्ट हैं, वे स्वार्थी हैं, वे देश को पतन के गर्त में ले जाएँगे। किसी को भी सामान्य जनता के लिए किसी प्रकार का अनुराग नहीं है। वे यह मानकर चलते हैं कि जनता सदा नकारात्मक होती है। जनता सदा नकारात्मक बात से ही प्रभावित होती हैं। इसीलिए सबकी छीछा-लेदर होगी, सभी का चरित्रहनन भी किया जायेगा।

आवश्यकता इस बात की है कि साम्प्रदायिकता, जातीयता, प्रतिक्रियावादिता पर जनता किसी बात का भरोसा न करे। जनता केवल रचनात्मकता पर विश्वास करे। सिर्फ नारों, विचारों का भी सहारा काफी नहीं होगा। उन लोगों को देखा जाये, जो सकारात्मक बातें कहें, जो अपने आपको अपने प्रतियोगी से श्रेष्ठ साबित कर सकें। गुणों में होड़ ही हमारे लोकतन्त्र को सही दिशा में ले जा सकती है। यह तभी सम्भव होगा जब नागरिक संहिता पक्की हो, वो शील में सूत्रबद्ध हो उसकी व्याख्या धर्मदृष्टि और सहभागिता से भरी हो। वास्तव में मतदाताओं की जिम्मेदारी भी सकारात्मक राजनीति के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 5-11-89)

9 नवम्बर, 1989 जन्मशती

प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति

प्रो० इन्द्र जी का जन्म आज से ठीक सौ वर्ष पूर्व 9 नवम्बर सन् 1889 को पंजाब के जालन्धर नगर में हुआ था। आपके पिता का नाम महात्मा मुन्शीराम था, जो बाद में 'स्वामी श्रद्धानन्द' के रूप में विख्यात हुए थे। इन्द्र जी का बचपन का नाम 'इन्द्रचन्द्र' था। यह भी एक दैवयोग की बात है कि आपके जन्म से पांच दिन बाद भारत के प्रधानमन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू का जन्म हुआ था। दोनों के ही पिता साथ-साथ एक कालेज में पढ़ते थे। और एक साथ ही अखाड़े में कुश्ती लड़ते थे। इन्द्र जी ने गुरुकुल काँगड़ी से सन् 1912 में प्रथम स्नातक बनने का सौभाग्य पाया।

प्रारम्भ में आपने यहीं पर ही संस्कृत साहित्य, तुलनात्मक-आर्य सिद्धान्त एवं इतिहास विषयों का अध्यापन किया और सन् 1914 से सन् 1960 तक आपने सहायक मुख्याधिष्ठाता और कुलपति के रूप में इस संस्था की सेवा की। पत्रकारिता के क्षेत्र में तो आप सन् 1911 में उसी समय आ गए थे जब छात्र थे और मुन्शीराम जी ने 'सद्धर्म प्रचारक' नामक दैनिक पत्र प्रारम्भ किया था। उसके बाद आपने 'विजय' साप्ताहिक (1918), 'सत्यावादी' साप्ताहिक (1923), 'नवराष्ट्र' (1939), और 'जनसत्ता' (1952), आदि कई पत्रों का सम्पादन करने के अतिरिक्त 'अर्जुन' (जो बाद में 'वीर अर्जुन' हो गया था) नामक साप्ताहिक तथा दैनिक पत्र का अनेक वर्ष तक निष्ठापूर्ण सम्पादन किया था।

'वीर अर्जुन' के सम्पादन के दिनों में आपको कई बार ब्रिटिश नौकरशाही से भी डटकर लोहा लेना पड़ा था। इस कार्यकाल में दिल्ली में रहते हुए आपने जहाँ कई वर्ष तक जिला व प्रदेश कांग्रेस कमेटियों के प्रधान के रूप में जनता का सफल नेतृत्व किया था, वहाँ आप 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री तथा प्रधान रहने के अतिरिक्त आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और अखिल भारतीय पत्रकार संघ के भी अध्यक्ष रहे थे। आप लोक सेवा आयोग तथा भारत के शिक्षा मन्त्रालय की अनेक समितियों से भी सम्मानित सदस्य के रूप में कार्य करने के साथ-साथ दिल्ली म्युनिसिपल कमेटी और राज्य सभा के भी सदस्य रहे थे।

एक उच्चकोटि के निर्भीक पत्रकार के रूप में आपने जहाँ देश के राष्ट्रीय जागरण में अपने कर्त्तव्य का निर्वाह किया वहाँ एक गम्भीर और चिन्तनशील

विचारक एवं लेखक के रूप में भी आपकी देन कम महत्त्व नहीं रखती। आपने जहां अनेक ऐतिहासिक तथा राजनीतिक उपन्यासों की रचना की वहां भारतीय इतिहास राजनीति, जीवनी, संस्कृति एवं धर्म की महत्ता पर प्रकाश डालने वाले अनेक ग्रंथ भी लिखे।

पत्रकारिता के संस्कार आपके मानस में बचपन से ही थे। इसी कारण छात्र जीवन में भी आपने 'सद्धर्म प्रचारक' के लिए लेख आदि लिखने के साथ-साथ 'उषा' तथा 'सत्य प्रकाशक' नामक हस्तलिखित पत्रिकाएं भी सम्पादित की थीं। अपने अध्ययन-काल में संस्कृत तथा हिन्दी के काव्य रचना करने में भी आप बहुत निष्णात थ। उनकी छात्र-जीवन की यह कविता उनकी उदात्त प्रकृति की द्योतक है—

"हे मातृभूमि तेरे चरणों में सिर नवाऊँ,
मैं भक्ति-भेंट अपनी तेरी शरण में लाऊँ।
तेरे ही काम आऊं, तेरा ही मन्त्र गाऊँ,
मन और देह तुझ पर बलिदान मैं चढ़ाऊँ॥"

बचपन की यह बलिदानी भावना इन्द्र जी के सार्वजनिक जीवन को निखारने में सक्रिय सिद्ध हुई। इसका ज्वलन्त प्रमाण यही है कि देश की स्वाधीनता के लिए पत्रकारिता के क्षेत्र में अनेक संघर्ष करने के साथ-साथ उन्होंने अनेकों बार जेल यात्राएँ कीं। हिन्दी पत्रकारिता, साहित्य तथा संस्कृति के क्षेत्र में की गई बहुविध सेवाओं के उपलक्ष्य में आपको अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से सन् 1942 में 'साहित्य वाचस्पति' की सम्मानित उपाधि से भी अलंकृत किया गया था।

जहां गुरुकुल कांगड़ी के निर्माण में पं. जी का बहुत बड़ा हाथ रहा है, वहीं आर्यसमाज के विषय में उनका बहुत बड़ा योगदान था।

जन्मशती के इस पुनीत अवसर पर हम अपने विनीत श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

—डा. धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 12-11-89)

मर्यादा-शिक्षक ही मर्यादा हीन हैं

हमारे देश में राष्ट्रीय चुनाव हो रहे हैं। चुनाव केवल राजनीतिक दलों के बीच हों, ऐसी बात नहीं है। चुनाव नीतियों और आदर्शों के ही होते हैं। हमारे देश के करोड़ों किसान, ग्वाले मजदूर, बनवासी, हरिजन, गिरिजन अपने आदर्शों के अनुरूप अपना स्वाभिमान प्राप्त करना चाहते हैं। पर क्या उन्हें उनका स्वाभिमान मिल पायेगा। नीतियां उनके अनुसार नहीं बनती और न ही कभी बनाई जाएंगी। शासन तो कुछ ही लोगों का होता है। वे ही उनके मूलाधार हैं। व विशिष्ट सुविधा प्राप्त व्यक्ति कुल देश की आबादी का दो या तीन प्रतिशत से अधिक न होंगे, परन्तु उनके पास बुद्धि है, उनके पास धन है, उनके पास शक्ति है, उनके पास विलायती शिक्षा की सुविधा है। 'बुद्धिर्यस्य बलम् तस्य'। जिसकी बुद्धि उसकी शक्ति या 'जिसकी लाठी, उसकी भैंस।" ये कहावतें प्रसिद्ध है। और कुछ लोग यह भी कहते रहते हैं—कोऊ नृप होई, हमें का हानी। इन बातों के रहते क्या सही चुनाव हो सकेंगे ? नहीं होंगे—आदर्श उनके जो बड़े हैं, नीतियाँ उनकी जो बड़ी हैं। "समरथ को नहिं कोऊ दोस गुसाइं।" उन गरीबों के घर पर कुछ दिन नेता लोग जाएंगे, पर बाद में उन गरीबों के लिए उनके दरवाजे बन्द हो जाएंगे। वे इस मौके पर उन गरीबों का शोषण लुभावने नारे देकर या सब्ज बाग दिखा कर लेंगे। उनके हथकण्डे चुनावी होंगे। उनकी कार्यविधियाँ मर्यादाहीन होंगी। वे झूठ बोलेंगे। वे लोभ लालच देंगे। वे ऐसे प्रलोभन देंगे जिनके सामने हर किसी की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। "असम्भवम् हेममृगस्य जन्म तथापि रामो लुलुभे मृगाय।" मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी एक बार लालच में आ गये थे। गरीब मतदाताओं का तो कहना ही क्या ? हमारे नेताओं में आत्मविश्वास है। वे जानते हैं कि जनता का शोषण किया जा सकता है। तरीके तो निश्चय ही मर्यादा हीन होंगे। और अगले पांच वर्ष फिर मर्यादाहीन राज्य सत्ता का उपभोग उनके हाथों में रहेगा। फिर चुनाव आएगा और फिर उन्हीं के पास रहेगा। सांपनाथ-नागनाथ कोई भेद नहीं होगा। वे किसी मर्यादित राज्य की कल्पना भी नहीं कर सकते।

मर्यादा पुरुषोत्तम राम को माना जाता है। गांधी रामराज्य चाहते थे। हमारी सभी पार्टियों के नेता अपने को गांधीवादी कहते हैं। गांधी की किसी बात को नहीं मानते, फिर भी वे गांधीवादी हैं। गांधी ने गोहत्या बन्द करने को कहा था, उसने अंग्रेजी हटाने की बात कही थी, उसने मद्यनिषेध के लिए कहा था। हमारे किसी नेता ने क्या इस ओर कोई प्रयास किया ? कैसे गांधीवादी हैं, हम ? कैसे

मर्यादित रामराज्य इच्छुक हैं, हम ? नहीं हैं, फिर मर्यादित राज्यसत्ता एक कल्पना मात्र है।

सभी पार्टियां पूंजीवाद का विरोध करती हैं। सभी पार्टियां समाजवाद की बात कहती हैं। समाजवाद की परिभाषा ही उन्होंने बदल दी है। शायद विदेशों में धन रखना समाजवाद का सूचक है। और उस धन का उपयोग-दुरुपयोग चुनावों के दिनों में किया जाता है। देश में पूरे पचास करोड़ मतदाता हैं। उन तक पोस्टर पहुंचाने हैं, झण्डे-बिल्ले पहुंचाने हैं, परची पहुंचानी है, बैलट पेपर पहुंचाने हैं। सैकड़ों करोड़ का खर्चा है। वोटरों के भिक्षा पात्रों में भिक्षा भी डालनी है। यह तो सौदा है। उनकी दीपावली-ईद होगी, नेताओं को वोट मिलेंगे। बाद में उनकी भुखमरी और नेताओं की ईद। कितना अच्छा व्यापार है। बेशुमार धन ! तोहफे ! ! बिना लिखा पढ़ी, बिना सबूत ! ! !

ऐ वोटर परेशान मत हो ! जो बड़ा है, वही बड़ा रहेगा। उसका सगा सम्बन्धी आ जायेगा, तू क्यों परेशान होता है। अपनी वोट डाल, ऐसे को जो सत्य की बात करे, मर्यादा की बात करे। कल भले ही वह भी मर्यादाहीन हो जाए पर अपनी ओर से तो तू ईमानदारी की बात कर।

आज आर्यसमाज में भी एक वर्ग सक्रिय राजनीति में आने की बात करता है पर चुनाव जीतने के लिए उसे भी ऐसा ही मर्यादा हीन होना पड़ेगा, जैसे सब हैं। अतः सावधान ! यदि विज्ञान है ताकतवर है तो इसे दे तू फेंक—यदि राजनीति है भ्रष्टता—तो इससे रह तू दूर।

डा. धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 12-11-89)

ईश्वर व्यापक हैं।

(प्रश्न) ईश्वर व्यापक है वा किसी देश विशेष में रहता है। (उत्तर) व्यापक है, क्योंकि जो एक देश में रहता तो सर्वान्तर्यामी सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सबका स्रष्टा, सबका धर्त्ता और प्रलयकर्त्ता नहीं हो सकता, अप्राप्त देश में कर्त्ता की क्रिया का असम्भव है।

-- महर्षि दयानन्द सरस्वती

किन्हें चुनें ?

भारत में इस समय राष्ट्रीय निर्वाचनों के लिए प्रचार का कार्य जोरों पर है। इतना जोरों पर है कि सरकार के सारे रचनात्मक कार्य ठप्प हो गए हैं। विभिन्न राजनीतिक दलों के लोगों में कहीं मुठभेड़ न हो जाए, इसे बचाने में सारा प्रशासन लगा हुआ है। पुलिस और सी. आर. पी. को तो जगह-जगह तैनात किया जा चुका है। वह समय भी दूर नहीं है, जब संभवतः फौज को भी इस दलदल में बुलाना पड़े। कई स्थानों पर पुलिस की छवि भी धूमिल है। उसे पूर्वाग्रह ग्रस्त माना जाता है। हमारी सेनाओं की छवि स्वच्छ हैं परन्तु अच्छी व्यवस्था वह मानी जाती है जब सब घटक अपना-अपना कार्य करें। हमारी प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था का भी यही आधार था। जो बातें कल सत्य थीं, वे आज भी हैं और कल भी रहेंगी। इसीलिए प्रशासन में भी अलग-अलग घटकों के अलग अलग कार्य हैं।

यह प्रश्न उठता है कि क्या इन निर्वाचनों के द्वारा सामाजिक व्यवस्था में कोई परिवर्तन आ पाएगा। इतिहास इस बात का साक्षी है कि राजनीतिक परिवर्तनों से समाज-व्यवस्था में भी कभी कोई परिवर्तन सम्भव नहीं है। यद्यपि एक बार भारत के संविधान के निर्माता आधुनिक मनु डा० अम्बेडकर ने दलितों को सम्बोधित करते हुए कहा था कि यदि तुम मुक्ति चाहते हो तो राजनीतिक शक्ति अर्जित करो। सामाजिक परिवर्तनों के लिए राजनीतिक शक्ति जरूरी है। पर क्या वे राजनीतिक शक्ति पर कब्जा जमा पाए। आप देख लीजिए। भारतवर्ष की पिछली लोकसभाओं में दलितों का कितना बड़ा प्रतिशत रहा है, परन्तु उनकी मानसिकता ज्यों की त्यों रही। वे कोई बदलाव नहीं ला पाए। करोड़ों दलित आज भी बद से बदतर जिन्दगी जी रहे हैं। वास्तव में सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन राजनीतिक बदलाव से नहीं आएगा। जो भी सरकार हो, उन्हें अपना काम निकालना है। असली परिवर्तन आएगा—सन्तों से। सन्त से तात्पर्य उन से है, जो परोपकार के लिए समर्पित हैं। सन्त से तात्पर्य मठाधीशों से बिल्कुल नहीं है क्योंकि मठाधीश तो सत्ताधारी होते हैं। इतिहास इसका गवाह है कि व्यवस्था को बदलने के लिए जब भी कभी चोट की तो राजनीतिज्ञों ने नहीं बल्कि महापुरुषों, सन्तों और ऋषियों-दार्शनिकों ने की है। नानक, दयानन्द, विवेकानन्द, गांधी इसी श्रेणी में आते हैं। इससे पहले महावीर और बुद्ध इसी पंक्ति में आते हैं। वे राजपरिवारों में जन्मे अवश्य थे, परन्तु वर्णाश्रम व्यवस्था का सही अर्थों में अवलोकन करें, तो वे ब्राह्मण थे, वे सन्त थे, वे ऋषि थे, इतिहास में और पीछे जाइए—राम और कृष्ण भी इसी व्यवस्था के महानतम लोग थे।

आज हम सभी अपने आपको गांधीवादी क्यों कहना चाहते हैं। हम क्यों गांधीवादी की नकाब ओढ़ना चाहते हैं। हम क्यों गांधी का नाम भुनाना चाहते हैं, क्योंकि वह सन्त था। उसने राजनैतिक सत्ता कभी नहीं चाही। वह न मन्त्री बना न राजा। वह फकीर का फकीर रहा।

आज करोड़ों रुपये खर्च करके जो राजनैतिक कुर्सी मिलेगी, उससे क्या कोई सन्तों वाला काम कर सकेगा। सन्त का काम सब का भला करना है। पर खर्च करके जो मिलेगा, उसकी भरपाई कौन नहीं करेगा।

यहां से वहां तक उम्मीदवारों की सूची देख जाइए। उस सूची में अनेक नाम हैं, जो हिंसा, भ्रष्टाचार, तस्करी, जमाखोरी, शोषण, माफियों से जुड़े हैं। ये लोग वैसी ही तो सरकार देंगे, जैसे ये हैं। अनेक नाम प्रसिद्ध हैं जो नेता इनके धन और जन बल पर जीतेंगे, वे इन्हीं के इशारे पर सरकार चलायेंगे।

मैंने शुरू में कहा था कि प्रशासन अपना काम नहीं कर रहा है या उसे अपना काम नहीं करने दिया जा रहा है। इसीलिए रोज पटियाला, बदायूं, भागलपुर के काण्ड हो रहे हैं। ऐसा लगता है कि जो मार सके, जो धमका सके, जो आतंकित कर सके, जो गाली दे सके, वही शक्तिशाली है। वही विजयी है। ऐसे में जो राजतन्त्र आएगा, वह किसी भी काम का न होगा। सबको आतंकित करके जो ऊपर आएगा, उसका राजसिद्धान्त भी वैसा ही होगा। क्या अगली सदी ऐसे ही आतंकवादियों, माफिया गिरोहों और तस्करों की होगी ? क्या अगली सदी ऐसे ही खूंखार फिरका-परस्तों की होगी।

हमें ऐसे शासक चाहिए जो सब का कल्याण करने वाले हों, जो राष्ट्र को घेरने वाले शत्रुओं का हनन करने वाले हों, जो आन्तरिक शत्रुओं को कुचलने वाले हों, जो अपनी इन्द्रियों को तथा प्रजा को वश में करने वाले हों, जो बादलों के समान सुखों की वर्षा करने वाले हों, जो विद्वानों की रक्षा करने वाले हों, जो शरणागत की रक्षा करने वाले हों, जो पापनाशक हों।

आओ हम ऐसे ही लोगों को अपना नेता चुनें !

—डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 19-11-89)

जन्मशती 14 नवम्बर—

राष्ट्रशिल्पी पं० नेहरू को देश ने स्मरण किया

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख नेता, आधुनिक भारत के निर्माता, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के जनक एवं विश्वशान्ति के अग्रदूत पं० जवाहरलाल नेहरू का 100 वां जन्मदिन दिल्ली की राजधानी में और अन्य स्थानों पर बड़ी धूमधाम से मनाया गया। विदेशों में भी अनेक स्थानों पर पं० जवाहरलाल नेहरू को ससम्मान श्रद्धांजलि अर्पित की गई। राजधानी में महामहिम राष्ट्रपति श्री आर० वेंकट रमण और प्रधानमन्त्री श्री राजीवगांधी ने उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित किये। केसरिया सफेद और हरे वस्त्रों में सजे स्कूली बच्चों ने राष्ट्रभक्ति के गीत गाये। उन्होंने तिरंगे गुब्बारे हवा में छोड़े और बच्चों ने "मेरा भारत महान्" के झण्डे फहराये। एक अन्य समारोह में उनकी स्मृति में डाक टिकट जारी किया गया और उनकी दो पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। "तीन मूर्ति भवन" में एक अन्तरिक्ष प्रदर्शनी का भी उद्घाटन हुआ।

भारतीयम्

भारतीयम् के माध्यम से 40 हजार से अधिक बच्चों ने आधुनिक भारत के निर्माता पं० जवाहरलाल नेहरू को अपनी अनूठी श्रद्धांजलि अर्पित की। देश के कोने-कोने से आए स्कूली बच्चे रंग-बिरंगे परिधान में सुरम्य संगीत पर मैदान में कसरतें और लेजियम करते हुए मोहक रचनाएँ बना रहे थे। इन सभी कार्यक्रमों का एक ही मूलमन्त्र था कि जीवन में किसी भी कार्य को सही रूप में क्रियान्वित करने के लिए शारीरिक रूप से स्वस्थ होना जरूरी है। भारतीयम् जैसे कार्यक्रम अन्य देशों में भी होते हैं और इनका उद्देश्य वहां पर शारीरिक स्वस्थता ही होता है। हमारे देश में भी यह कार्यक्रम भव्यता के साथ आयोजित किया गया। यहां इस कार्यक्रम की एक विशेषता थी कि इसे मनोरंजन से भी जोड़ा गया। इस कार्यक्रम की शुरूआत गुलजार के उस प्रसिद्ध गीत से हुई, जिसकी पंक्तियां हैं—आओ चलें, यू चलें नजर सफर एक हो। इस गीत में स्वास्थ्य पर बल दिया गया है। इसके माध्यम से परिश्रम, अनुशासन, और अनेकता में एकता के मन्त्र को फूंका गया है। इस समारोह में अनेक अन्य सामूहिक कार्यक्रम दिखाए गए जो पं० नेहरू के सपनों के भारत और उनकी परिकल्पना के ऊपर आधारित थें। बच्चों में साहस की भावना पैदा करने के लिए

कलाबाजी और पिरामिड के खेल भी हुए। नेहरू के पंचशील पर आधारित भी कार्य-क्रम सम्पन्न हुए।

एशियाई एथलैटिक्स

सजीले रंगों की आकर्षण छटा में 8 वें एशियाई एथलेटिक्स का उद्घाटन राष्ट्रपति श्री वेंकट रमण ने नेहरू स्टेडियम में किया। इस समारोह में रंगों की छटा के साथ-साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनुरूप लोकनृत्य तथा आधुनिकता का पुट लिए पाश्चात्य संगीतों के कार्यक्रम भी थे। अलग-अलग जाति, वेशभूषा और उन्हीं की भाषा में गीत 'विविधता में एकता' का रूप व्यक्त कर रहे थे।

भारत के चारों कोनों से आई जवाहर ज्योतियां और उन का एक ज्योति में मिलन इस बात का प्रतीक था कि यह राष्ट्र एक है। इन चारों ज्योतियों को पं० नेहरू के राजकीय निवास तीन मूर्ति में रखा गया था। यह ज्योति इस समारोह के समापन तक नेहरू स्टेडियम में प्रज्वलित रही।

इस समारोह का समापन 19 नवम्बर को इसी भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। 19 नवम्बर भी भारत के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण दिवस है। इस दिन श्रीमती इन्दिरा गांधी का जन्म हुआ था। श्रीमती इन्दिरा गांधी में वे सभी गुण थे जो भारत की जनता किसी एक जननायक में ढूंढ़ती है। राजनैतिक कुशलता, विरोधियों और शत्रुओं के साथ कूटनीतिक चालबाजी, देश की सुरक्षा और गौरव पर कभी आंच न आने देना, विश्व राजनीति के मंच पर राष्ट्र को प्रतिष्ठित स्थान दिलाये रखना। प्रखर राष्ट्रभक्ति आदि कुछ ऐसे गुण हैं जिन पर हम गौरव कर सकते हैं और यह सभी गुण श्रीमती गांधी में थे।

इस अवसर पर हम भारत के इन दो प्रधानमन्त्रियों को अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं।

—डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 26-11-89)

नवीं लोकसभा का भविष्य

'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्। तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय, युद्धाय कृतिनिश्चयः। सुखदुखे समेकृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ। ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापवाप्स्यसि ॥' यह भगवान् श्री कृष्ण का अर्जुन के प्रति उपदेश है, जब महाभारत के युद्ध में दोनों पक्षों की सेनाएं आमने सामने डटी थीं और अर्जुन को मोह हो गया था कि उसके सामने तो वे सभी हैं जिन्होंने उनका पालन पोषण किया है, जिन्होंने उन्हें शिक्षा-दीक्षा दी है, जिनके साथ वह खेला कूदा है। इस मोह को भंग करते हुए भगवान् ने उपदेश दिया था कि सुख-दुख, हानि-लाभ, जय-पराजय को समान रूप से देखता हुआ व्यक्ति यदि युद्ध करता है, तो उसे कोई पाप नहीं लगता और यदि अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए, वह मारा जाता है तो वह स्वर्ग को प्राप्त करेगा और जीत गया तो इस पृथ्वी का भोग करेगा।

महाभारत के ये शब्द आज भी कितने प्रासंगिक हैं। यदि कोई अपने भाई के, राजा के, मोह में फंसकर अन्याय के विरुद्ध खड़ा न हो तो क्या होगा। आज भी क्या नृशंस सत्ताएं नहीं बनी रहेंगी। जो सत्ता में होता है, जो राजा होता है उसके विरुद्ध किसी एक महारथी योद्धा अथवा सामन्त का उठ कर खड़ा होना आसान नहीं होता। पहले तो वह राजा की आभा से अभिभूत होता है, सत्ता की चकाचौंध उसकी आँखें चुंधिया देती है, दूसरे उसके पास न समान पद-शक्ति होती है, न जनशक्ति और न ही धन-शक्ति। राजा के विरुद्ध उठ खड़ा होना साहस का कार्य है। उसके विरुद्ध जनमत जुटाना साहस का कार्य है। उसके विरुद्ध अन्य सामन्तों, महारथियों को संगठित करना साहस का कार्य है। राजा भी अपने भेदियों द्वारा सब पर दृष्टि रखता है। वह उनके कृत्यों की गोपनीय फाइलें बनाकर रखता है। यह कार्य पहले भी था, आज भी है। और आगे भी रहेगा। यह कार्य-विधि शाश्वत है। उतनी ही सत्य है, जितना परमार्थ तत्त्व। ऐसे में कुछ सूरमा ही आगे आते हैं। यदि सब कुछ हो जाए, सूरमा आगे आ जाएं, विजयी हो जाएं, राजा को परास्त भी कर दें पर क्योंकि वे सभी सूरमा समान हैं और अपने में से किसी एक को राजा नेता न चुन सकें और पराभूत राजा के किसी प्रलोभन के दांव में फंस जाएं तो क्या होगा ? यह प्रश्न निराशा वाला है। इसका अर्थ यह हुआ कि तब तो कोई सामने आए ही नहीं; जो जैसा है, वैसा ही चलता रहे; फिर क्या होगा। कुछ भी नहीं; हताशा और निराशा।

इसीलिए महाभारतकार के शब्द हैं—उठ ! खड़ा हो ! युद्ध कर ! भारत के राष्ट्रीय निर्वाचन में भी ऐसी ही स्थिति है। महारथी उठे हैं, वे संगठित हुए हैं, उन्होंने साहस जुटाया है, किसी एक या दो या चार प्रान्तों में महारथी या तो उनके साथ मिले नहीं या उनका नैतिक साहस उनके साथ नहीं था। वे तमाशेबाज थे। जनता को उन पर भरोसा नहीं रहा था। जनास्त्र उनके समर्थन में नहीं गया। भारत एक महान् राष्ट्र है। इसकी परम्पराएं महान् हैं। सत्ताएं बदलती रहती हैं। महानता बनी रहती है, परम्पराएं बनी रहती हैं।

यह सुनिश्चित है कि जनमत शासन के विरुद्ध होता है। इसीलिए सम्पूर्ण उत्तर भारत में कांग्रेस को पराजय का मुख देखना पड़ रहा है। राजस्थान में तो वाटरलू हो गया। उत्तर प्रदेश में भयंकर झटका। गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा —सभी किले ढह गये। हरियाणा में भी सत्ता को धक्का लगा। वहां देवीलाल की सरकार को चोट लगी। उनके साथी उन्हें छोड़ भागे। उनका अहं चूर-चूर हो गया। विधान सभा चुनाव कराने की पेशकश को वापस लौटाना पड़ा अर्थात् सत्ता पराजित हुई। यही हाल आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु केरल और कर्नाटक में हुआ। पहले तीन प्रान्तों में सत्ता पक्ष का सफाया हो गया। चौथे में कोई सत्ता में न था। वहाँ राष्ट्रपति शासन था, इसलिए जिसकी सत्ता निकट भूत में थी, उसका सफाया हो गया। इस प्रकार दक्षिण में कांग्रेस के ध्वस्त गढ़ की दीवारें पुनः सीमेंट-मज्जित हो गयीं। उत्तर में उसका किला ढह गया। इतना ढह गया कि वहां के राज्य प्रमुखों ने अपने त्याग पत्र तक देने प्रस्तावित कर दिए। यह कैसा अद्भुत समीकरण सामने आया है। एक अपवाद पश्चिमी बंगाल में है। वहाँ भी झटके तो लगे हैं, पर जो था, जैसा था, वैसा ही बना रह गया। अर्थात् विश्व बना तो पंच महाभूत से ही है। शायद वहाँ शरीर में विष-विकृति कम आयी थी, जो हल्के उपचार से ठीक हो जाए।

जब तक यह समाचार पत्र पाठकों तक पहुँचेगा, दिशाएं सुनिश्चित हो चुकी होंगी। जनता का वोट सत्ता को असत्ता करने और असत्ता में लाने के पक्ष में गया है। इसलिए जो नहीं था, वह है। यह दर्शन सामने आया है। यदि अभी भी ऐसे समीकरण बन जाएं कि सत्ता वाले किसी को अपने पक्ष में कर ले और सत्ता में बने रहें तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। इसमें सत्ता वाले को कोई दोष नहीं होगा। दोष होगा तो उसका जो विजयी हुआ है यह आश्वासन देकर कि वह वर्तमान सत्ता को हटायेगा। अब हल्के प्रलोभन के लिए वह सत्ता में मिल जाता है तो यह उसी का दोष होगा और उसे पाप लगेगा क्योंकि वह गीता के 'सुखदुखे समे कृत्वा' के विरुद्ध चला गया है।

यह अच्छी बात है कि सभी पार्टियाँ अपने सिद्धान्तों पर टिकना चाहती हैं। भा० ज० पा० मार्क्सवादियों के विरुद्ध है तो मार्क्सवादी भारतीय जनता पार्टी को फूटी आँख नहीं देखना चाहते। पर वे दोनों भी सम्भवतः जो बड़ी शक्ति है, उसके

विरुद्ध संगठित होने के लिए तैयार हैं। वे बाहर से समर्थन देंगे। सरकार भले ही देखने में अस्थायी लगे, पर जनमत का सम्मान आवश्यक है। जो जनमत का सम्मान करता है, वही आज के प्रजातन्त्र में नीतिवान् है और नैतिक है। हमें अनैतिकता से दूर ही रहना चाहिए।

जनता दल पहली बार एक शक्ति के रूप में निखरा है और तेलुगुदेशम ने अपनी सारी शक्ति खोई है। स्थायी वही रह सकता है जिसके मूल्य शाश्वत हों, सार्वकालिक हों, सर्वमान्य हों। यह भविष्य के गर्भ में निहित है कि इनमें कौन ज्यादा समय टिक पाएगा। साम्प्रदायिक, क्षेत्रीय, वर्ग विशेष के लिए समर्पित वर्ग शीघ्र ही मिट जाएंगे, केवल वही रहेगा जो सबके लिए है, जो विश्व कल्याणार्थ वेदोक्त धर्म का निर्वाह करने वाला है।

बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः।
अभिवीरो अभिषत्वा सहोजिज्जैत्रमिन्द्र रथमा तिष्ठ गोविदन्॥

अपने बल को जानने वाला, अपनी बात पर स्थिर रहने वाला, अनुभवी, सुवीर उत्तम शक्तिशाली, उत्साही, वीर्यवान्, अन्न व बल से सुसम्पन्न, कठोर, अतिभयकारी वीर पुरुषों से सहोजित, सभी को विजय करने वाला, इन्द्रियों को जीतने वाला, चरित्रवान्, चारों ओर से मोर्चे बन्द होकर, पापनाशक पुरुष ही विजयी रथ पर इन्द्र समान आरूढ़ होते हैं।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 3-12-89)

ईश्वर सादि है या अनादि।

(प्रश्न) परमेश्वर सादि है या अनादि? (उत्तर) अनादि अर्थात् आदि का कोई कारण वा समय न हो उसको अनादि कहते हैं।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

भारत के राजनैतिक धरातल पर

नये नेता का पदार्पण

भारतवर्ष संसार का सबसे बड़ा प्रजातान्त्रिक शासन प्रणाली वाला देश है। इस देश का प्राचीन इतिहास बतलाता है कि यहां पर प्रजातन्त्र उस समय भी था, जब भू-भाग पर आज के श्रेष्ठ और विकसित शासन-प्रणालियों पर चलने वाले देशों का कहीं अस्तित्व नहीं था। उन देशों में मात्र अविकसित कबीले थे। उनकी कोई सभ्यता नहीं थी, संस्कृति का तो हम जिक्र ही क्या करें। इस भारत देश की यह शासन प्रणाली निश्चय ही एक दिन में तो विकसित नहीं हुई होगी। इसमें अवश्य ही समय लगा होगा। पक्ष और प्रतिपक्ष अवश्य बने होंगे। एक से दूसरे को श्रेष्ठतर सिद्ध करने की पद्धतियां भी बनी होंगी और एक दूसरे से अपने को श्रेष्ठतर बनाने की प्रक्रिया भी चली होगी। मनुष्य ने अपने आपको आचारवान् बनाया होगा। चाहे राजतन्त्र हो, प्रजातन्त्र हो या लाठीतन्त्र, आचारवान् को सदा ही अच्छा माना जाता रहा है—'आचारहीनः न पुनन्ति वेदा।''

इन श्रेष्ठतर पुरुषों को महापुरुष भी कहा जा सकता है। ये महापुरुष अपने आप को तिल-तिल होम करके अपने दल, संगठन, संस्थाएँ या पार्टियां बनाते हैं। जिस प्रकार आज के राजनैतिक दल के अध्यक्ष को अपनी छवि बनाए रखने के लिए रात-रात नींद नहीं आती, ऐसा उस समय भी तो होता होगा। इस बात को राजनैतिक संगठन तक ही क्यों सीमित किया जाए। यह बात तो सभी संगठनों पर समान रूप से लागू होती है। पहले महापुरुष होता है। उसके मन में कोई विचार आता है। वह अपने आपको मन और तन से तैयार करता है। वह अपनी मनःस्थिति पर बार-बार विचार करता है। वह वर्तमान को तोड़ता है, कुछ नया देता है जैसा दयानन्द, गांधी, विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस ने किया। गुरु नानक ने किया। उससे पहले शंकराचार्य ने किया। ईसा ने किया। मोहम्मद ने किया। उससे भी पहले महावीर और बुद्ध ने किया। और पहले भगवान् कृष्ण और राम ने किया। यह विचार शृंखला चलते-चलते मनु को पार करके ऋषियों-मुनियों और उनसे भी पहले के आदि ऋषियों तक जा पहुंचेगी जिनके पवित्र हृदय में परमात्मा ने वेदों का ज्ञान दिया था। इन महापुरुषों के हृदय में, अपनी परिस्थितियों के संदर्भ में एक मंथन हुआ करता है। उनका हृदय उद्वेलित और विगलित होता है। उनके हृदय में कुछ नया जन्म लेता है। अब वह महापुरुष अपनी विचारणा का

सहारा लेकर एक संगठन खड़ा करता है। संगठन मात्र उसका सहायक होता है। यदि वह दीपक है, दूसरों को प्रकाश देता है तो संगठन एक दीवट के समान है, जो उसे ऊँचा उठाने में सहायक होता है। दीवट दीए को ऊँचा उठाती है। संस्था नेता को ऊँचा उठाती है। इसमें प्रगति होती है। जब संस्था बन गयी और बनाने वाला चला गया। जीवन तो क्षण भंगुर है, वह तो जाएगा ही। बारी आती है, अनुयायियों की। अनुयायी दीपक की रक्षा कम करते हैं, संगठन की ज्यादा करते हैं। जो नया नेता बनता है, वह प्रगति नहीं करता है। वह प्रवहमान होता है। वह संगठन को चलाना चाहता है। यह परिवर्तन एक दो सदियों में नहीं आता, शताब्दियों में आता है। अनुयायी अपनी संस्था और नेता के झण्डे को ऊँचा उठाए रखना चाहते हैं। प्रवहमान रहना चाहते हैं, यही बात आन्दोलनों की भी है। आन्दोलन चलाये जाते हैं, शक्ति आती है, काम पूरा होता है, आन्दोलनों की अग्नि बुझ जाती है। वास्तव में अग्नि को जलाए रखने के लिए बार-बार आन्दोलनों का सहारा आवश्यक है।

आंदोलन चलाने की आवश्यकता तो सदा ही रहती है। जो है उसमें विकृति अवश्यम्भावी है। यह प्रकृति का नियम है। उस विकृति को दूर करने का प्रयास ही आन्दोलन है। जब एक बार यह परिष्कृति आ गयी तो यह कुछ दिन साफ सुथरी रहेगी अथवा कहिए कि लोगों को साफ सुथरी दिखती रहेगी। समय बीतते बीतते स्थान पार करते-करते हिमालय से चलने वाला पानी गन्दा हो जाता है। पड़ाव पार करते करते व्यक्ति और संस्थाएं भी गन्दले हो जाते हैं।

यही हाल राजनैतिक पार्टियों का भी है। हमारे देखते-देखते स्वराज्य दिलाने का दावा करने वाली कांग्रेस पार्टी में कितनी बार विकृति हुई, कितनी बार उसे ठुकराया गया। उसे परिष्कृत किया गया। उसमें पुनः विकृतियाँ आयीं। उसके समीकरण बदले और पुनः उसे परिष्कृत तथा स्वीकार्य स्थान मिला। अब पुनः उसे अस्वीकृत किया गया। इस दशा में 1989 भारत के राजनैतिक इतिहास में एक विशिष्ट स्थिति के लिए स्मरणीय होगा। केवल कांग्रेस का ही क्यों। स्वतंत्र पार्टी, समाजवादी पार्टी, भारतीय क्रांतिदल, क्रांतिदल, भारतीय लोकदल, लोकदल (अ), लोकदल (ब), जनता दल, जनता पार्टी, संयुक्त मोर्चा, राष्ट्रीय मोर्चा — न जाने कितनी बार प्रलय हुई, न जाने कितनी बार विलय हुआ और न जाने कितनी बार आलोडन-विलोडन हुआ। मंथन हुआ और उसमें से अमृत निकला—विश्वनाथ प्रताप सिंह। विश्वनाथ प्रताप सिंह—परमात्मा के प्रताप या दया के सिंह—अग्रणी व्यक्ति। उसे अधिकार मिला, पर स्वायत्तता तो नहीं मिली। दो सुदूर धुरियों के आश्रय पर टिका एक व्यक्तित्व। वे सुदूरगामी शक्तियाँ भी समानान्तर नहीं। एक की गति तीव्र, दूसरे की गति मध्यम। देखिए कैसे समीकरण बनेंगे।

फिर भी जनता ने विश्वास दिया है। संगठन के अन्दर लोगों ने भी विश्वास दिया है। कुछ एक सिरफिरे तो सभी जगह होते हैं। वे अपने आप को संगठन के

लिए अपरिहार्य मान लेते हैं। यह नेतृत्व की शालीनता होती है जो उन जैसे असामाजिकों को भी अपने साथ जोड़े रहती है। यह नेतृत्व की सामाजिक मजबूरी भी हो सकती है। ऐसे व्यक्ति संस्था संगठन की देह के रिसते व्रण होते हैं जो विकृति की ओर देह को सदैव बढ़ाते रहते हैं। वे दूसरे को नीचे गिराना चाहते हैं, भले ही उनमें स्वयं ऊपर उठने की सामर्थ्य न हो। उनका सूक्ष्म अहंकार उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। पर इस अहंकार से बड़ा आत्म-साधना का मार्ग है। अन्तिम विजय इस आत्म-साधक की ही होगी और यही उसकी उपयोगिता का कारण भी बनेगी।

अस्तु देश में नेतृत्व परिवर्तन हो गया है। उस संस्था के नेता को नेतृत्व मिला, जो बहुत पुरानी नहीं है। पुरानी नहीं है, इसलिए वह प्रवाह में नहीं बह रही है बल्कि प्रगति की ऊँचाइयों की ओर अग्रसर है। जो पहले संकेत मिले हैं, वे शुभ हैं। गरीबों को ऊंचा उठाने की बात कही गयी है। सभी को रोजगार उपलब्ध कराने की बात कही गयी है। ये बातें अच्छी हैं। उस समय तक वे चलेंगे, जब तक कि इन्हें प्रलोभन नहीं आए। यदि प्रलोभन में न फंसे, तो सन्त अन्यथा साधारण जन।

सम्पूर्ण भारत कहीं न कहीं जल रहा है। इस जलन के कारण अलग-अलग हो सकते हैं—राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक अथवा गुंफित। इनके राष्ट्रीय समाधान की अवधारणा स्तुत्य है। बल्कि नई सरकार का स्थायित्व भी इनके सही समाधान पर ही निर्भर करता है। पंजाब, कश्मीर, लद्दाख, राम जन्मभूमि, पर्वतीय प्रदेश, झारखण्ड—यदि इनके समुचित समाधान मिल गए, तो लोग कांग्रेस के स्वर्ण काल को भी भूल जाएंगे। बोफोर्स काण्ड एक महत्त्वपूर्ण समस्या है। ऐसी समस्याएँ भविष्य में न उभरें, इस विषय में स्पष्ट शैली विकसित करनी होगी। किसान वादी नीतियों की दिशा में अर्थतंत्र को मोड़ने का प्रयास एक बार पहले भी किया गया था, अबकी बार फिर से किया जाएगा। वामपंथी शक्तियों के दबाव में संभवतः सार्वजनिक क्षेत्र में भी धन लगाना पड़ेगा। इसके परिणामस्वरूप सरकार के खर्च बढ़ेंगे। सरकार का कोष खाली है, जैसा कि राष्ट्र के नाम प्रथम प्रसारण में बताया गया। यह नये नेतृत्व के लिए एक चुनौती है। पंचायती राज अवधारणा को सही परिप्रेक्ष्य में और सही सन्तुलन के साथ लागू करने की जरूरत है। महिलाओं और युवाओं की भागीदारी बढ़ाना भी एक राजनैतिक आवश्यकता है। नीतियां तो ठीक लग रही हैं परन्तु नेताओं की नीयत का ठीक होना भी उतना ही जरूरी है। इन नीतियों के क्रियान्वयन में ईमानदारी बरतना बहुत जरूरी होगा। गलत और असफल नीतियों का सरकारी प्रेस से गुणानुवाद, जनता को उबासी देता था पर वे सुनने-देखने के लिए बाध्य थे, अब आश्वासन मिला है कि जन सामान्य को जानने का—सही बात जानने का, समझने का अधिकार दिया जाएगा—यह प्रशंसनीय है।

हमारी बात उस समय तक पूरी नहीं होगी जब तक हम—'आब्रह्मन् ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चसी जायताम् आराष्ट्रे राजन्यः शूरः इषव्यो अतिव्याधि महारथो जायताम्' की परिकल्पना का जयघोष न करें तथा इस राष्ट्रीयता की परिकल्पना का क्रियान्वयन होता हुआ न देख लें। हमारी कामना है कि नई सरकार ऐसा ही राष्ट्र बनाएं जो चारों ओर से सबल हो, प्रवहमान न हो, बल्कि प्रगतिमान् हो।

हमारी नई सरकार के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 10-12-89)

परमेश्वर क्या चाहता है।

(प्रश्न) परमेश्वर क्या चाहता है? (उत्तर) सबकी भलाई और सबके लिये सुख चाहता है परन्तु स्वतन्त्रता के साथ किसी को बिना पाप किए पराधीन नहीं करता।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

नई सरकार से अपेक्षाएँ

पिछले तीन वर्षों से निरन्तर भ्रष्टाचार के मुद्दे को लेकर सरकार पर तथा कुछ प्रभावशाली लोगों पर आरोप-प्रत्यारोप लगाए जाते रहे हैं। इन चरित्रहनन के प्रयासों का सिलसिला उस समय समाप्त होगा जब नई सरकार जनता की इच्छाओं की भावनाओं को ध्यान में रखकर कुछ ऐसे कार्य करेगी जो राष्ट्र को सबल बनाएं तथा जनसाधारण को उनकी आवश्यकता की चीजें उपलब्ध करा सके। क्या-क्या कार्य किए जाने चाहिए, इसकी सूची तो लम्बी हो सकती है, पर जो बातें सर्वप्रथम हाथ में ली जानी चाहिए और जिनके विषय में वह व्यक्ति भी सोचता है जिसे राष्ट्र, राष्ट्रीयता, मनुष्यता, धार्मिकता, सुरक्षा आदि शब्दों की जानकारी भी नहीं है, वे इस प्रकार हैं। सर्वप्रथम इस मुठभेड़ के वातावरण में राष्ट्रीय सहमति का वातावरण बनाया जाना आवश्यक है। अभी तो कोई एक दूसरे को स्वीकार करता हुआ ही प्रतीत नहीं होता। काम की बात तो दूर रही, एक दूसरे को देख तो लें। पहला कार्य तो विपक्ष की जनभावना के अनुकूल हो गया है। भले ही कुछ लोगों ने विश्वनाथ प्रतापसिंह को अपना नेता न माना हो या अब भी न मानना चाहते हों।, पर जनता ने उन्हें ही विकल्प के रूप में सोचा था और वे नेता बन गए हैं, राज सिंहासन पर विराजमान भी हो गए हैं। उन्होंने विभागों का बंटवारा भी, ऐसा प्रतीत होता है किसी दबाव में नहीं, बल्कि मन्त्रियों की शक्ति, सामर्थ्य और योग्यता के ही आधार पर किया है।

सर्वप्रथम पंजाब समस्या का निदान खोजा जाना चाहिए। यह समस्या कुछ वर्ष पूर्व पंजाब तक सीमित थी, अब यह जम्मू काश्मीर में भी व्याप्त है और लद्दाख में भी। इसका समाधान पहली आवश्यकता है। धारा-370 वास्तव में इन परिस्थितियों को हवा देती है। विशेषाधिकार वाला मामला सदा-सदा के लिए समाप्त किया जाना चाहिए। आर्यसमाज राष्ट्रीय एकता और अखण्डता का पक्षधर है। एक सुरक्षा पट्टी का निर्माण तथा जम्मू-काश्मीर को पंजाब की तरह केन्द्रीय नियन्त्रण में लाया जाना चाहिए। यदि आतंकवादी और विघटनकारी तत्त्वों में सद्बुद्धि का समावेश हो जाए तो उनके दिलों में बदलाव से भी यह समस्या हल हो सकती है। अयोध्या का सवाल भी साम्प्रदायिक के स्थान पर असहिष्णुता वाला बन गया है। इस विषय में भी राष्ट्रीय सहमति का आधार परमावश्यक है। यदि यह सरकार इन राष्ट्रीय एकता के मुद्दों को सुलझा सकी तो यह आकांक्षा के अनुकूल होगा। यह स्वतंत्र भारत की राजनैतिक शैली को इस नई सरकार का मौलिक योगदान होगा। कांग्रेस

सरकार के कुछ आर्थिक नीतियों से संबंधित कार्य ऐसे हैं, जो सदाशयतापूर्ण हैं। इसलिए सद्भावना से उन्हें पूरा किया जाना चाहिए। केवल उनकी निति यों का विरोध करने के लिए उन कार्यक्रमों की बदनामी ठीक नहीं होगा। बजट का एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़ना भी आवश्यक है। शहरों पर बढ़ते दबाव को रोकने तथा मूल्य वृद्धि को रोकने का यह उपाय है। चरणसिंह का बजट, इन्हीं आकांक्षाओं को लिए था और नई सरकार का एक बड़ा भाग, इन नीतियों को क्रियान्वित कराने के लिए प्रयत्नशील भी रहेगा। दलबदल कानून, चुनाव आयोग, पंचायती राज, सार्वजनिक जीवन की शुद्धि, निर्वाचनों पर खर्च में कमी ऐसे मुद्दे हैं जिनकी ओर ध्यान दिया जाना जरूरी हैं।

मद्य-निषेध, गोरक्षा, राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के सम्बन्ध में इस सरकार की नीति स्पष्ट होनी चाहिए। यह हमारे आचार की भाषा है। यह शास्त्रों की भाषा है, यह सृष्टि के आदि ज्ञान की भाषा है। आकाशवाणी और दूरदर्शन की स्वायत्तता भी जरूरी है। न्यायपालिका, महालेखाकार और संसद् की गरिमा को पुनः स्थापित किया जाना चाहिए। विदेशों में भारतीय मूल के लोगों पर जो अत्याचार हो रहें हैं, उनका निराकरण हमारा दायित्व है। पड़ोसी देशों से सम्बन्ध सुधारना भी जरूरी है। गुटनिरपेक्षता की नीति में कोई दोष नहीं है। नैतिक मूल्यों में आस्था और भ्रष्टाचार की समाप्ति, काले धन की समाप्ति की ओर हम तभी बढ़ेंगे जब हम धार्मिक होंगे। अतः धर्मनिरपेक्षता की व्याख्या में भी संशोधन आवश्यक है। महिलाएँ और युवा पीढ़ी को नारा दिया जा रहा है, पर उन्हें ठोस कार्यक्रम तथा अवसर मिलने चाहिए। चुनींदा औद्योगिक घरानों से छुटकारा पाकर सब के कल्याण की बात करके ही, यह सरकार राष्ट्र के लिए कोई काम कर सकेगी।

अन्त में—संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम्।

—डॉ. धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 17-12-89)

हैदराबाद सत्याग्रह अर्धशताब्दी

आर्यसमाज एक आंदोलन है। युगप्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य-समाज की स्थापना इस उद्देश्य से की थी कि आर्यों का एक संगठन ऐसा बने जो सर्वत्र सत्य और नित्य बातों का प्रचार प्रसार करे तथा जो अनित्य है, असत्य है अथवा दुर्गुणों से युक्त अभद्र है उसका निराकरण करे। महर्षि ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ-प्रकाश में सर्वत्र सत्य का मण्डन एवं असत्य, ढोंग, पाखंड का खण्डन किया है। तत्कालीन सनातन धर्म में व्याप्त बुराइयों का खंडन उन्होंने सर्वप्रथम किया। उसके पश्चात् अन्य धर्मों की समीक्षा की। उनका उद्देश्य उन्हें सन्मार्ग पर लाना था। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्, का उद्घोष इसी बात का परिचायक है। वे वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के इच्छुक थे तथा इसी कार्य में संलग्न थे। उस मनीषी ऋषि ने देख लिया था कि संसार का कल्याण वेद मार्ग का अनुसरण करने से ही संभव है। वेद शाश्वत एवं नित्य ज्ञान है।

उनके समय में भी और बाद में भी ईसाई और मुसलमान भारत के भोले-भाले लोगों को बहकाकर-फुसलाकर तथा डराकर उनका धर्म परिवर्तन करने में संलग्न थे। पुराने मुसलमान बादशाहों के समय से ही यह कार्य होता आया है। ऐसे कठिन कार्यों का आर्यसमाज ने डटकर विरोध किया। सन् 1939 में सार्वदेशिक आर्य प्रति-निधि सभा के नेतृत्व में आर्यसमाज ने हैदराबाद राज्य में तत्कालीन निजाम सरकार के विरोध में विशाल स्तर पर सत्याग्रह किया था। वहाँ का मुगल शासक आसफजाह निजामुल्मुल्क नितांत निरंकुश बादशाह था। उसकी इच्छा ही उसका कानून थी। हिन्दुओं को मुसलमान बनाना उसकी इच्छा थी। वह इसे अपना मजहब मानता था। "तुम काफिरों से तब तक लड़ते रहो जब तक वे नेस्तनाबूद न हो जाएं या जब तक वे तुम्हारा दीन न कबूल कर लें।" (सुरा-2 अलवकरा-पारा-1, आयत 190-192)। यह उनकी मजहबी किताब-कुरान शरीफ का हुक्मनामा है।

निजाम के राज्य में हिन्दुओं पर सभी प्रकार के कहर ढाये जाते थे। नये मन्दिर बनाने की तो बात ही क्या, पुराने मन्दिरों को मरम्मत करना भी मना था। नये झंडे लगाने, नये कलश चढ़ाने की तो बात ही दर-किनार, वे अपने घर में हवन कुण्ड तक भी न रख सकते थे। हिन्दुओं को अपने बच्चों के विवाह तक करने के लिए निजामशाही से आज्ञा लेनी पड़ती थी।

कौन विरोध करता, ऐसे क्रूर बादशाह का, जिसके ऊपर धार्मिकता का निरंकुश जनून चढ़ा हुआ था। हिन्दुओं की रक्षा के लिए आर्यसमाज आगे आया।

श्री श्यामलाल एडवोकेट ने हिन्दुओं को संगठित किया, पर निजामशाही के अत्याचारों के कारण उसका पहला बलिदान हुआ। उस समय सार्वदेशिक सभा के प्रधान तपोनिष्ठ संन्यासी महात्मा नारायणस्वामी थे। उन्होंने स्वयं सारी स्थिति का विश्लेषण किया और उसी समय निर्णय ले लिया कि इस जालिम बादशाहत का विरोध करना ही होगा। तब तो सम्पूर्ण भारत वर्ष की आर्यसमाजों को प्रेरणा दी गई और जत्थे के जत्थे हैदराबाद की ओर चल पड़े। विदेशों से भी आर्जजन आने लगे। हैदराबाद की जेलें भरने लगीं और वहां पर एक अपूर्व उत्साह संचारित हुआ। निजाम सरकार ने इधर उधर पैर मारे। उस समय के राष्ट्रीय कांग्रेस से कुछ नेताओं ने आर्यसमाज के आंदोलन को बेवक्त की शहनाई बताया, पर बाद में जब निजाम सरकार ने घुटने टेक दिये तो उन्हीं नेताओं ने आर्यसमाज के कार्य की प्रशंसा की। वास्तविकता तो यह थी कि आर्यसमाज के इस आन्दोलन ने निजाम को इतना पस्त कर दिया था कि स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जब रियासतों के विलय की बात आई तो उसे भारत में मिल जाने के अलावा कोई रास्ता ही न सूझ पड़ा।

आर्यसमाज तो संघर्ष का ही नाम है। इन सत्याग्रहियों की स्वाधीनता सेनानी का सम्मान दिलवाने तथा उन्हें पेंशन दिलवाने में भी आर्यसमाज को संघर्ष करना पड़ा, पर अब इस बात का सन्तोष है कि भारत सरकार ने इन्हें स्वाधीनता सेनानी मान लिया है, तथा काफी लोगों को सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती की अध्यक्षता में गठित समिति की संस्तुति पर पेंशन भी मिलनी शुरू हो गई है।

प्रसन्नता का विषय है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के तत्त्वावधान में 29, 30 व 31 दिसम्बर, 89 को हैदराबाद में इस आर्य सत्याग्रह की अर्धशताब्दी बड़े समारोह पूर्वक मनाई जा रही है। इस सुअवसर पर आर्यजनों से हमारी अपेक्षा है कि इस ओज की ज्वाला को प्रज्वलित रखें तभी आर्यसमाज की सार्थकता है।

—डॉ. धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 31-12-89)

सुधावर्षी श्रद्धानन्द

आर्य जगत् में अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द का नाम और कार्य आर्यसमाज के संस्थापक और युग-प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व और कृतित्व के ठीक बाद बड़े सम्मान के साथ स्मरण किया जाता है। महर्षि के हृदय की पीड़ा को समग्र रूप से यदि किसी ने जाना तो वे श्रद्धानन्द ही थे। उन्होंने स्वयं को कल्याण मार्ग का एक ऐसा पथिक बनाया जो महर्षि दयानन्द के दिव्य जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर समस्त विश्व के कल्याणार्थ निरन्तर प्रगति-पथ की ओर बढ़ता रहा। "चरैवेति, चरैवेति"—जैसे इस महामानव में साकार हो उठा। और जिसकी यात्रा में कहीं विराम शब्द नहीं था।

जिस युग में स्वामी श्रद्धानन्द ने कार्य किया, वह युग लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय, श्री अरविन्द, पंडित मदनमोहन मालवीय और महात्मा गांधी जैसे महापुरुषों का था। उस युग में जो निडर नेता थे, उनमें स्वामी जी अग्रगण्य थे। जो नेता उत्साही थे, उनमें स्वामी जी आगे थे। जिन महापुरुषों ने ऋषियों के जीवन पर अपनी जीवन-चर्या बनाई, उनमे भी स्वामी जी अग्रगण्य थे। स्वामी जी जीवन भर वीर योद्धा की तरह रहे और शहीद होकर भारतीयों के सम्मुख एक आदर्श जीवन रख गये।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने युग में स्वराज्य आंदोलन, अछूतोद्धार, शुद्धि आंदोलन, जन्मगत जात-पात का विरोध, दलितोद्धार, नारी शिक्षा, गुरुकुलों की स्थापना, आर्यसामाजिक संगठन की सुदृढ़ता के लिए आजीवन कार्य किया। कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें उन्होंने कोई कमी छोड़ी हो, बल्कि यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि जितना उन्होंने किया, उतना किसी ने भी न किया होगा। आज स्वतन्त्रता प्राप्ति के बयालीस वर्ष बाद भी स्वामी श्रद्धानन्द का आर्य जाति के नाम आह्वान उतना ही प्रासंगिक है जितना उस समय था। आर्यो संगठित हो जाओ। यह तो शाश्वत सत्य है कि 'संघे शक्ति: कलौ युगे'। आपके संगठन में शक्ति होगी, तो आपकी सभी बातें मानी जाएंगी। स्वामी श्रद्धानन्द ने कहा था—आर्य पुरुषो! सोचो कि वे कौन से सिद्धांत थे, जिन्होंने एक लंगोट बंद साधु को वह शक्ति प्रदान की थी, जो इस समय महाराजाओं में भी नहीं दिखाई देती। पता लगाओ कि आर्यसमाज के स्थापित करने से ऋषि का क्या प्रयोजन था। दयानन्द की जीवन-यात्रा के मार्ग पर पथ-प्रदर्शन के लिए, उन चिह्नों की खोज करो और जिस समय उन्नति का शिखर बड़ा ऊँचा और भयावना प्रतीत हो, उस समय इस ज्योति-स्तम्भ की ओर टकटकी लगाकर ऊपर चढ़ते जाओ। फिर देखो कितनी सरलता से मार्ग समाप्त हो जाता है।

महर्षि दयानन्द के लिए श्रद्धा के उद्‌गार व्यक्त करने वाले उस महाबलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन भी उतना हीं महान् था। उसने अनेक क्षेत्रों में कार्य किया। इन क्षेत्रों को अलग-अलग लेखों में विभक्त करके हमने आर्य विद्वानों से साग्रह अनुरोध किया कि वे इन विषयों पर अपने लेख भेजें।

मुझे यह कहने में संतोष की अनुभूति हो रही है कि अधिकांश वैदिक विद्वानों ने हमारी प्रार्थना को स्वीकार किया तथा तदनुरूप समय से हमें लेख भेज दिए, कुछ विद्वानों से हमें पुनरनुरोध करने पर लेख प्राप्त हुए तथा कुछ विद्वानों ने किन्हीं अपरिहार्य कारणों से समय पर लेख भेजने में अपनी विवशता प्रकट की। यह परम संतोष की बात है कि जो लेख नहीं भेज सके उन्होंने भी व्यक्तिगत रूप में, अथवा पत्र द्वारा अथवा दूरभाष पर अपनी विवशता अवश्य प्रकट की तथा भविष्य में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया।

आर्यसमाज के संगठन में विद्वानों का अपना उच्चतम स्थान है। वे हमारे मार्गदर्शक हैं। वे हमारे प्रेरणा स्रोत हैं। सारा आर्य जगत् उनकी ओर दृष्टि उठाए देखता रहता है कि वे क्या कहते हैं और हमें क्या कार्यक्रम देते हैं। वास्तव में वे हमारे मनीषी चिंतक हैं जो आर्य जाति के कर्तव्य में एक स्फूर्ति एवम् ऊर्जा को संचारित करते हैं। हमारे संगठन के सर्वोच्च नेता हमारे मार्ग का निर्धारण करते हैं। वे हमें कार्यक्रम की रूपरेखा प्रदान करते हैं। फिर हम उस कार्य को क्रियान्वित करने की दिशा में आगे बढ़ते हैं। वास्तव में विद्वान् और नेता दोनों मिलकर कार्यकर्त्ता के लिए प्रेरणा देने वाले होते हैं इसके साथ ही धनी महानुभावों का सहयोग भी कुछ कम नहीं होता। उनके आर्थिक सहयोग से ही किसी भी कार्यक्रम को सुचारु रूप से सम्पन्न किया जा सकता है। वे कार्यक्रम का मूलाधार हैं।

इस वर्ष आर्यसन्देश ने योजना बनाई है कि कम से कम आठ भव्य विशेषांक पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किए जाएँ। इसके लिए विद्वान् लेखकों का, कर्मवीर नेताओं का, दानवीर धन श्रेष्ठियों का तथा सुधी पाठकों का सहयोग अपेक्षित है। ग्राहकों से विनम्र निवेदन है कि वे समय पर अपना वार्षिक अथवा आजीवन शुल्क भेज दें। यदि हमारा कोष खाली है तो कार्य करने का उत्साह क्षीण पड़ जाता है।

इस अंक में स्व० पं० सत्यदेव विद्यालंकार लिखित वृहद् जीवन चरित "स्वामी श्रद्धानन्द", स्व० पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति लिखित "स्वामी श्रद्धानन्द — मेरे पिता" तथा स्व० आचार्य नरदेव शास्त्री लिखित "आपबीती जगबीति" से पर्याप्त सामग्री ली गई है।

आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वानों, नेताओं, लेखकों तथा कवियों, जिन्होंने अपनी अमूल्य रचनाएँ हमें प्रकाशनार्थ भेजी हैं, के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूं।

आर्थिक सहयोग के लिए सभा के वरिष्ठ उपप्रधान महाशय धर्मपाल जी तथा उपप्रधाना श्रीमती ईश्वरीदेवी धवन जी तथा अन्य आर्य महानुभावों ने विशेष उदारता दिखायी, एतदर्थ मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

इस अंक के सम्पादन में सतत सहयोग तथा उचित परामर्श प्रदान करने के लिए मैं दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल और महामन्त्री तथा प्रधान सम्पादक श्री सूर्यदेव का आभारी हूँ।

आशा है कि स्वामी श्रद्धानन्द का पवित्र-जीवन, उनकी सेवा-भावना, उनकी वीरता और कार्य दक्षता हम सब को श्रेय मार्ग की ओर बढ़ने की प्रेरणा देगी।

—मूलचन्द गुप्त

आर्यसन्देश, 24-12-89

परमेश्वर का अपमान।

(प्रश्न) जब परमेश्वर व्यापक है तो मूर्ति में भी है। (उत्तर) जब परमेश्वर सर्वत्र-व्यापक है तो किसी वस्तु में परमेश्वर की भावना करना अन्यत्र न करना यह ऐसी बात है कि जैसी चक्रवर्ती राजा को सब राज्य की सत्ता से छुड़ा के एक छोटी सी झोंपड़ी का स्वामी मानना, देखो ! यह कितना बड़ा अपमान है ! वैसा तुम परमेश्वर का भी अपमान करते हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

प्रधानमंत्री के नाम

सम्माननीय श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह जी,
प्रधानमन्त्री, भारत सरकार
नई दिल्ली।

महोदय,

सादर नमस्ते!

भारतवर्ष लम्बे समय तक एक गुलाम देश रहा है। पिछली शताब्दी में पुनर्जागरणकाल में कुछ महापुरुषों, मनीषियों, सन्तों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं ने इस परतन्त्रता की विवशता के सम्बन्ध में गंभीरता पूर्वक विचार किया तथा गुलामी की बेड़ियों को, काटने की दिशा में यथाशक्ति प्रयास किए। 1857 का प्रथम स्वाधीनता संग्राम इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम था। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 1875 में आर्यसमाज की स्थापना की। महर्षि ने अनेक सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक आयामों का चिन्तन किया और उस समय के ज्ञान में संवर्धन किया। "स्वराज्य" का प्रयोग करने वाले वे पहले व्यक्ति थे। आगे चल कर कांग्रेस की स्थापना 1885 में हुई और राष्ट्र हित के तथा समाज कल्याण के सभी कार्यक्रम कांग्रेस ने अपने हाथ में ले लिए। इसका एक मुख्य कारण यह भी था कि कांग्रेस में 80 प्रतिशत ऐसे लोग थे जिनकी शिक्षा-दीक्षा आर्यसमाज की संस्थाओं में हुई थी अथवा वे आर्यसमाज की विचार-धारा से प्रभावित थे। महात्मा गांधी ने कांग्रेस को नेतृत्व प्रदान किया और उस समय 'सम्पूर्ण स्वराज्य' का कार्यक्रम हाथ में लिया गया। उस इतिहास को दोहराना मेरा उद्देश्य नहीं है।

भारत स्वतंत्र हुआ। चारों ओर प्रसन्नता थी और आशा की गयी कि अब राष्ट्र उन्नति करेगा और हमें यह कहने में गर्व होना चाहिए कि अनेक क्षेत्रों में राष्ट्र ने सामाजिक और व्यक्तिगत उन्नति भी की। आज हमारा देश विश्व के देशों के बीच अपनी पहचान लिये हुए हैं।

स्वतन्त्रता के बाद लम्बे समय तक कांग्रेस की सरकार ही इस देश में बनती रही। लोगों के मन में कांग्रेस के प्रति सम्मान और श्रद्धा के भाव थे। यह सृष्टि का नियम है कि लम्बे समय तक एक समान रहने पर उसमें विकृति आ जाती हैं और उसके परिष्कार की आवश्यकता रहती है। यदि परिष्कार न किया जाए तो प्रगति अवरुद्ध हो जाती है और मात्र प्रवाह रह जाता है। मात्र प्रवाह से किसी का कल्याण नहीं होता।

देश में 1989 में राष्ट्रीय निर्वाचन हुए और जनता ने आपको राष्ट्र का नेता चुना। आपके हाथ में आज देश का नेतृत्व है। आपके ऊपर उत्तरदायित्व भी बहुत अधिक है। सर्वप्रथम उत्तरदायित्व तो यही है कि जनता ने जो कंजूस बहुमत आपको दिया है, उसे आप वास्तविक बहुमत में बदल सकें। आपको दो वैसाखियां दी गयी हैं। आप को अपने को सशक्त बनाना है ताकि इन वैसाखियों से आप छुटकारा पा सकें। बल्कि मैं तो कहूंगा कि इन वैसाखियों की कीलों को अपने पैरों के अन्दर समाहित कर लें। उन्हें अपने अन्दर आत्मसात् कर लें। यह कोई आसान काम नहीं है, पर असम्भव नहीं है। एक-डेढ़ वर्ष का समय किसी भी संस्था के इतिहास में नगण्य होता है, पर कुछ क्षण ऐसे होते हैं जो धारा-दिशा को मोड़ते हैं और वे ही ऐतिहासिक होते हैं। जनता दल का यह समय ऐसा ही था।

आपको यह सिद्ध करना है कि इस प्रकार की परिस्थितियों में भी आप परिष्कार की ओर अग्रसर हो सकते हैं। सबसे बड़ा विकृति का मसला भ्रष्टाचार का है। उससे मुक्ति पाना अपने साये से मुक्ति पाने के समान है। समाज में भ्रष्टाचार को लोग व्यवहार मानने लगे हैं। धार्मिक संस्थाओं से भी सरकारी कार्यालयों में सुविधा शुल्क की अपेक्षा की जाती है। यदि आप थोड़ी सी भी झलक दिखा दें, कि आप भ्रष्टाचार से चार आंख होना चाहते हैं तो निश्चय ही भविष्य के लिए आशाएं बंध सकती हैं। चीनी बाजार में आ गयी है। यह इस बात का प्रमाण है कि बड़े औद्योगिक घराने आपकी आर्थिक नीतियों से त्रस्त हैं। दूसरी समस्या महंगाई की है। सामान्य जनता इसी से प्रभावित होती है। महंगाई पर नियन्त्रण, यदि नहीं किया गया तो जन-मानस को अपनी समझदारी दिखाने में देर नहीं लगेगी। दुनिया इस देश को अनपढ़ों, गरीबों और नासमझों का देश समझती है, पर यह देश ऐसा नहीं है। यहाँ समझदारी भी है। अगली समस्या साम्प्रदायिकता और उग्रवाद की है। इनका समाधान किसी मन्त्र फूंकने के समान नहीं है। इनका समाधान तो निष्ठा, और विश्वसनीयता और आत्मविश्वास में निहित है। क्या आतंकवादी गतिविधियों से जुड़े लोग जो संसद में आ गए हैं और जिन्होंने लोकतान्त्रिक शासन-व्यवस्था में विश्वास व्यक्त किया है, वे हिंसा से दूर रह कर शान्तिपूर्वक ढंग से संविधान के अनुसार इस समस्या के समाधान में सहयोग देंगे। राष्ट्र की अखण्डता परमावश्यक है। निजी स्वार्थों के लिए इनके टुकड़े करना देश के साथ बहुत बड़ा अन्याय होगा। जर्मनी की दीवारें ढह गयी हैं। हमारी दीवारें ढहनी चाहिए। यदि ढहती नहीं तो कम से कम नई तो बनें। संविधान की धारा 30 और 370 इस प्रकार की गतिविधियों को आकर्षित करती हैं। इन्हें समाप्त किया जाए। पंजाब, जम्मू-काश्मीर, पूर्वोत्तर प्रान्तों में समस्याएँ हैं। रामजन्मभूमि और बाबरी मस्जिद भी भयंकर समस्याएँ हैं। तुष्टीकरण की बलिवेदी पर हिन्दू जाति के साथ किसी प्रकार का अन्याय राष्ट्रहित में नहीं है।

इस देश में गरीबी है, भुखमरी है, लोग शहरों की ओर भाग रहे हैं। उन्हें गांवों में ही रोजगार उपलब्ध कराए जाएं। कमजोर तबकों, किसानों मजदूरों,

दस्तकारों, बुनकरों को सहायता पहुँचाई जाए। कर्ज माफ करना कोई समाधान नहीं है। इससे तो देश का अर्थतन्त्र कमजोर हो जाएगा। सुविधाएँ दी जाएँ राहत दी जाएँ परन्तु पूर्ण माफी नहीं। इससे तो लोगों में प्रमाद बढ़ेगा। वास्तविक पंचायती राज्य की परिकल्पना वैदिक कालीन है। इसका सही क्रियान्वयन आवश्यक है।

आकाशवाणी, दूरदर्शन और समाचार पत्रों को स्वायत्तता प्रदान की जाए, ठीक है परन्तु इनके माध्यम से नैतिकता और सच्चरित्रता का प्रचार हो। सेक्स का भोंड़ा प्रदर्शन तो विकृत मस्तिष्क वालों की आवश्यकता होती है, जनसामान्य को मनोरंजन पर्याप्त है। दूरदर्शन पर भारतीय संस्कृति और जनभावना पर आधारित कार्यक्रम ही दिखाए जाएँ। नैतिक-मूल्यों पर आस्था बढ़ाने वाले तथा भ्रष्टाचार आदि दुरितों से छुड़ाने वाले कार्यक्रम प्रदर्शित किए जायें। महिलाओं और युवकों की सकारात्मक भूमिका के कार्यक्रमों को विशेष महत्व दिया जाए।

भारत के पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्ध नहीं हैं। इस दिशा में प्रयास जरूरी है। विदेशों में भारतीय मूल के लोगों पर अत्याचार हो रहे हैं। फिजी, नेपाल, केन्या, श्रीलंका, खाड़ी देश, दक्षिण अफ्रीका इसके उदाहरण हैं। वहाँ पर अपने लोगों की सुरक्षा के लिए कारगर उपाय किये जाने चाहिए। गुट-निरपेक्षता की नीति अच्छी है, चलनी चाहिए।

यह आश्चर्य का विषय है कि आपकी सरकार में शिक्षामन्त्री का कोई स्थान नहीं है। यह विषय प्राथमिकता की अपेक्षा करता है। आप इस ओर ध्यान दें। पाठ्यक्रमों में इतिहास के पुस्तकों में जो अनर्गल बातें लिखी हैं, उनमें सुधार कराएँ। आर्यों को आक्रान्ता के रूप में प्रस्तुत करना भारतीयता के ऊपर एक करारा तमाचा है। आपको इस दिशा में ध्यान देना चाहिए। उत्तर दक्षिण की एकता के लिए इस विषय को सदा-सदा के लिए समाप्त करना आवश्यक है। शिक्षा-पद्धति में भारतीय भाषाओं तथा संस्कृति को विशेष स्थान मिलना चाहिए। भारत के गौरवपूर्ण इतिहास और संस्कृति का सही आख्यान होना चाहिए।

देश के सभी वर्गों के लिए समान आचार संहिता—समान कानून होना चाहिए। न्याय प्रक्रिया को सरल तथा शीघ्रता वाला बनाया जाना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि आप इस दिशा में आवश्यक कदम उठाएँगे। राजनीति में किसी भी पराजय को अन्तिम पराजय और किसी भी विजय को अन्तिम विजय मानना एक प्रकार की भूल होती है।

विजय उन्हीं का वरण करती है जो कर्म में विश्वास रखते हैं।

सद्भावनाओं सहित,

भवदीय

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 7-1-90)

गणतन्त्र दिवस और स्वामी श्रद्धानन्द की झांकी

गणराज्य दिवस की परेड में प्रत्येक राज्य की ओर से झांकियां प्रस्तुत की जाती हैं और वे झांकियां अपने वैविध्य, रंग त्रिरंगेपन और उस-राज्य की विशिष्टता की द्योतक होने के कारण जनता के लिए विशेष उत्सुकता और मनोरंजन का कारण होती हैं। परेड को देखने के लिए एकत्रित लाखों लोगों का विशाल, समुदाय समग्र भारत को छोटे रूप में इस प्रकार एक ही स्थान पर देखकर जहाँ देश की एकता का भाव हृदयंगम करता है, वहाँ उसे राष्ट्रीयता की भी प्रेरणा मिलती है। जब अन्य सब राज्यों और केन्द्र शासित राज्यों की झाकियां होती हैं तो दिल्ली की ओर से भी अपनी अलग झांकी क्यों न हो? दिल्ली का यह अधिकार है कि वह भी अपनी ओर से झांकी प्रस्तुत करे। केन्द्रीय सरकार के निर्माण विभाग या उद्यान विभाग की ओर से प्रस्तुत झांकियों को दिल्ली की ओर से नहीं माना जा सकता।

भारतीय जनसंघ शासित दिल्ली प्रशासन ने सन् 1968 में केन्द्रीय रक्षा-मन्त्रालय को पत्र लिख कर यह निवेदन किया था कि गणराज्य दिवस की परेड में दिल्ली की भी एक झांकी होनी चाहिए। यह सुझाव रक्षा मन्त्रालय ने स्वीकार कर लिया और दिल्ली प्रशासन से कहा कि वह झांकी की रूपरेखा भेज दें। जब दिल्ली प्रशासन ने झांकी की रूपरेखा भेजी तो मन्त्रालय की उस समिति ने जो झांकियों के सम्बन्ध में निश्चय किया करती थी, उसे अस्वीकार कर दिया था।

दिल्ली राज्य ने अपनी ओर से झांकी का जो विषय चुना था, वह बहुत अच्छा था। स्वामी श्रद्धानन्द अंग्रेजों की संगीनों के सामने छाती ताने खड़े हैं—यह दृश्य कितना भव्य, कितना प्रेरणादायक और कितना ओजस्वी है। जिस निर्भयता का उदाहरण स्वामी जी ने प्रस्तुत किया था, इस युग में वैसा उदाहरण मिलना मुश्किल है। परन्तु केन्द्रीय रक्षा मन्त्रालय को यह विषय पसन्द नहीं आया था, इसलिए उसने दिल्ली की ओर से अलग झांकी की मांग तो मान ली थी, किन्तु इस विषय को स्वीकार नहीं किया था।

उस समय केन्द्रीय सरकार पर मुखापेक्षिता, भय और आतंक की मनोवृत्ति से इतनी ग्रस्त थी और अंग्रेज तथा अंग्रेजी का वर्चस्व उसके दिल और दिमाग पर इतना

हावी था कि वह राष्ट्र को नई पीढ़ी को निर्भयता का उपदेश देने वाली इस ऐतिहासिक घटना का चित्रण भी नहीं करा सकती थी।

आशा है अब बदली हुई राजनैतिक परिस्थितियों में, जबकि भारतीय जनता पार्टी (पूर्व—भारतीय जनसंघ) वर्तमान केन्द्रीय सरकार पर अंकुश रखे हुए है, अपने 1968 के प्रस्ताव को (22 वर्षों के बाद ही सही) कार्यान्वित करवाने में सक्षम होकर महान् समाज सुधारक, अछूतोद्धारक, दलितोद्धारक, हिन्दू-मुस्लिम-सिख एकता के प्रबल पोषक, स्वतंत्रता सेनानी एवं निर्भीक आर्य संन्यासी अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करेगी।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 14-1-90)

परमात्मा पक्षपाती नहीं।

(प्रश्न) ईश्वर ने किन्हीं जीवों को मनुष्य जन्म, किन्हीं को सिंहादि क्रूर जन्म, किन्हीं को हरिण, गाय आदि पशु, किन्हीं को वृक्षादि कृमि कीट पतंग आदि जन्म दिये हैं, इसमें परमात्मा में पक्षपात आता है।

(उत्तर) पक्षपात नहीं आता, क्योंकि उन जीवों के पूर्व सृष्टि में किये हुए कर्मानुसार व्यवस्था करने से। जो कर्म के बिना जन्म देता तो पक्षपात आता।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

स्वामी श्रद्धानन्द चौक

यह हमारे देश की परम्परा रही है कि महान् पुरुषों द्वारा किए गए कार्य की स्मृति को स्थायी बनाए रखने के लिए स्थान विशेष पर उसके स्मारक बना दिए जाते हैं। ऐसे महापुरुषों के अनेक स्मारक हमारे देश में हैं। इन स्मारकों की लोग यात्रा करते हैं, समय-समय पर लोग वहां जाते हैं तथा इन स्थानों को देखकर प्रेरणा ग्रहण करते हैं। कुछ लोग इन स्थानों की पूजा भी करते हैं। आर्यसमाज इस प्रकार के वाह्याडम्बर की अनुमति नहीं देता। फिर भी इतना निश्चय है कि जलियांवालां के शहीदों को श्रद्धाञ्जलि देने के लिए लोग वहां पर बने स्मारक को देखते हैं तथा वे श्रद्धाभिभूत होते हैं। पं. मोतीलाल नेहरू के इलाहाबाद स्थित 'आनन्द भवन' को देखकर वे उनके राष्ट्र के प्रति किए गए त्याग को स्मरण कर लेते हैं। वर्धा और साबरमती के आश्रमों को देखकर गांधी जी की क्रियाशीलता याद आती है। बार-दोली को देखकर सरदार पटेल की याद आती है। ननकाना साहब की यात्रा के लिए हमारे अनेक भाई आज भी पाकिस्तान जाते हैं। राम और कृष्ण से जुड़े स्थानों का भी यही महत्त्व है। महर्षि दयानन्द के जीवन से गुंफित टंकारा, मथुरा, अजमेर और, पाखण्ड खण्डिनी पताका स्थान को हम सम्मानपूर्वक देखते हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन की भी एक ऐसी अपूर्व घटना है। 30 मार्च 1919 को स्वामी श्रद्धानन्द ने दिल्ली के घंटाघर चौक पर अंग्रेजी सैनिकों की संगीनों के सामने छाती तानकर कहा था—चलाओ गोलियां! और चारों ओर स्तब्धता छा गई थी। वही स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दुओं और मुसलमानों की एकता का समर्थक था। और इसीलिए उसे अगले दिन जामा मस्जिद से भारतीय जनता को आह्वान करने का अवसर मिला था। वेद मन्त्रों से उसने जामा मस्जिद को गुंजायमान किया था।

उस शहीद की स्मृति में नया बाजार स्थित श्रद्धानन्द बलिदान भवन सभी आर्यवीरों के लिए प्रेरणा और नव ऊर्जा प्रदान करने वाला स्थान है। प्रतिवर्ष उनके बलिदान दिवस के अवसर पर हम वहां से एक शोकयात्रा निकालते हैं। घण्टाघर का वह प्रसिद्ध स्थल भी उसी मार्ग पर पड़ता है। हमारी सरकार से साग्रह मांग है कि इस चौक का नाम स्वामी श्रद्धानन्द चौक रख दिया जाए। भाई मतिदास चौक भी समीप ही है। वहां पर उनका बलिदान हुआ था तो यह स्थान वह है जहां पर स्वामी श्रद्धानन्द ने विदेशी सत्ता को ललकारा था।

हे आर्यो हम आज ही से अपना प्रयास आरम्भ कर दें कि इस स्थान का नाम 'स्वामी श्रद्धानन्द चौक' रखा जाए। संगठन में शक्ति है। हमारा सम्मिलित प्रयास निश्चय ही हमें सफलता देगा।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 21-1-90)

वसन्त पंचमी

दूसरी ऋतुएँ अपना समय आने का इन्तजार कर लेती होंगी, परन्तु वसन्त में इतना धीरज नहीं है। वसन्त के आगमन से पर्याप्त पहले यह ऋतु बच्चों की तरह मचलने लगती है। शिशिर अभी होती ही है कि तभी वसन्त द्वार पर अपनी दस्तक देना प्रारम्भ कर देता है। आजकल का सुहाना मौसम इसी बात का पर्याय है।

वसन्त ऋतु को हम उसी प्रकार मनाएँ जैसी कि यह ऋतु है—आह्लाद और प्रसन्नता की किलकारियों से परिपूरित। पर क्या उत्सव को इस प्रकार मना लेने में ही हमारे कर्त्तव्य की इतिश्री हो जाती है। भारतीय संस्कृति उत्सवों से परिपूर्ण है और यहां का समाज उत्सवधर्मी है। हमें कोई न कोई बहाना चाहिए और हम उत्सव मानने को तैयार रहते हैं। उत्सव का अर्थ है—अच्छे परिधान और सुस्वादिष्ट भोजन। उत्सव का इससे भी बड़ा अर्थ है—सामूहिकता। हम अपने उल्लास को सामूहिक अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं उल्लास जब उमड़ता है तो वह अकेला नहीं रहता। वह आसपास के लोगों में अवश्य ही बंटता है। उल्लास एक सुगन्ध है जो जितना बांटोगे उतना ही अधिक फैलेगा। इसीलिए भारतीय समाज जीवन्त और जागृत है। बुरे दिनों में भी हम उत्सवों को नहीं भूलते। उस दिन हम अपने व्यक्तिगत कष्टों को भूलकर भी सामूहिक उल्लास में सम्मिलित हो जाते हैं।

हम आनन्द के लिए दौड़ते भागते हैं। क्या हमारे उत्सव केवल आनन्दपरक हैं। यह प्रश्न विचारणीय है। हमारी संस्कृति और हमारा धर्म इस बात का साक्षी है कि प्रत्येक पर्व के साथ व्रत भी जुड़े हैं। तात्पर्य उपवास से नहीं है। हमारा समाज व्रतधर्मी भी है। व्रत का अर्थ है मर्यादा। जितने उत्सव हैं उतने ही हमारे व्रत पर्व हैं। वसन्त पंचमी पर भी हम व्रत करते हैं कि हमारा जीवन मर्यादित होगा। हम सदाचारी होंगे। हम लक्ष्मी, सरस्वती और हनुमान के गुणों को अपने अन्दर धारण करेंगे। हम सात्त्विक और पवित्र बनेंगे हम दूसरों के कार्यों के लिए सदैव समर्पित होंगे। हम धर्म के मार्ग पर चलेंगे।

—डॉ. धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 28-1-90)

धर्मवीर हकीकत राय

भारतीय हिन्दू धर्म पर सदा से ही आपत्तियां आती रही हैं तथा भारत के वीरों ने सदा ही धर्म की ज्योति को प्रज्वलित रखने में अपने प्राणों को न्योछावर तक कर देने में कभी कोई कसर उठाकर नहीं रखी। भारतवर्ष पर मुसलमानों का पहला आक्रमण संवत् 769 विक्रमी में हुआ था। उनका इस आक्रमण का एक उद्देश्य तो भारत की समृद्धि को अपने अधिकार में ले लेना था, परन्तु दूसरा उद्देश्य जो अधिक महत्त्वपूर्ण था, वह था—इस देश पर अधिकार करके, सदा-सदा के लिए अपने नियन्त्रण में ले, लेना और तभी सम्भव था, जब यहां के लोगों को मुसलमान बना लिया जाये। यह आक्रमण बगदाद के खलीफा की ओर से किया गया था। इस्लाम एक मजहब है इसका यहां अधिक विवरण न देकर, इसके विरुद्ध भारतीय वीर हुतात्मा धर्मवीर हकीकत राय के कर्तृत्व का विवरण देना ही अभीष्ट है।

वह वसन्त पंचमी का दिन था। पश्चिमी पंजाब का सियालकोट शहर था। उस वीर हकीकत राय को अपने मुसलमान साथी विद्यार्थी की मां दुर्गे की गाली सहन नहीं हुई और उसने 'फातिमा' के लिए वैसे ही शब्दों का प्रयोग किया। काजी की ओर से दण्ड मिला कि या तो वह मुसलमान बन जाए, अन्यथा उसे बीच में से आरे से चीरा जाएगा। उस वीर बालक को अपने धर्म के प्रति ऐसा प्रगाढ़ प्रेम था कि उसने जीवन त्याग देना श्रेयस्कर समझा। स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः। और वह वीर बालक अपने धर्म की खातिर, धर्म की बलिवेदी पर न्योछावर हो गया। आज भारत में अनेक स्थानों पर लोभ, लालच के वशीभूत लोग धर्मान्तरण कर रहे हैं। उन्हें उस वीर हकीकत राय का स्मरण करना चाहिए। रावी नदी का तट आज भी उस बलिदान को भूला नहीं है। उसके खून की छींटे आज भी प्रसुप्त हिन्दी समाज को झिझोरने में समर्थ है। अन्याय अत्याचार के नीचे सिसकती कराहती मानवता पुकार-पुकार कह रही है—उस वीर बलिदानी हकीकत राय को स्मरण करो।

वह वीर धन्य है। वह धर्मध्वजी धन्य है। वह भारत मां का सपूत धन्य है। वह अपने धर्म और संस्कृति पर अपने को न्योछावर करने वाला धन्य है। उसने सिर कटाना पसन्द किया, पर सिर झुकाया नहीं। उस वीर की स्मृति को हमारा शत-शत प्रणाम।

वसन्त पंचमी के अवसर पर हमारा कर्त्तव्य है कि अपने धर्म और संस्कृति की रक्षा का प्रण लें तथा किसी भी प्रकार की आपदा से भयभीत न हों। आओ मिलकर बोलें—वैदिक धर्म की जय!

डॉ. धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 28-1-90)

महात्मा गांधी, लाला लाजपतराय और वर्तमान परिस्थितियां

इस सप्ताह हम उन दो विभूतियों का स्मरण कर रहे हैं जिन्होंने इस शताब्दी को आकार दिया, दिशा दी, ऊर्जा प्रदान की और भावी पीढ़ी के मार्ग को प्रशस्त किया। ये विभूतियां, उन अनेक महाविभूतियों की विशिष्ट मण्डली-आकाश गंगा में ही थीं, जिनके कर्तृत्व के परिणाम स्वरूप भारत को स्वतन्त्रता मिली और यहां पर गणराज्य की स्थापना हुई तथा अपना संविधान—अपना नियम—लागू किया गया।

लाला लाजपतराय उन्हीं महान् विभूतियों में से एक थे। लाल-बाल-पाल नामक गरम दल की तिकड़ी के सदस्य शेरे पंजाब का जन्म आज से 125 वर्ष पहले लुधियाना की जगरांवा तहसील में 28 जनवरी 1865 को हुआ था। लाला लाजपत राय ने कांग्रेस में सम्मिलित होने पर पाया था कि कांग्रेस सुधार की पार्टी है, आजादी की नहीं और कांग्रेसी अवकाश की सुविधा वाले देशभक्त हैं, बस यही अवधारणा उन्हें आजादी का दीवाना और सच्चा देशभक्त बनाने में सफल हुई। उन्होंने अपना सब कुछ छोड़ा और स्वदेशी, स्वराज, बॉयकाट तथा राष्ट्रीय शिक्षा का यह चार सूत्री कार्यक्रम अपनाया। उन्होंने आगे चलकर राष्ट्र के लिए जो कार्य किया, उस पर हमारा मस्तक सदा गर्व से ऊँचा उठता रहेगा।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एक ऐसी महाविभूति थे जिन्होंने भारत को आजादी दिलाई, जिसकी एक ललकार पर सारा देश उनके पीछे हो जाता था, उस महापुरुष की पुण्य तिथि 30 जनवरी है। उस महापुरुष के जन्म, मृत्यु तथा कर्तृत्व का परिचय देने की अपेक्षा यह उचित होगा कि उनके कुछ वक्तव्यों को इस अवसर पर पढ़ा जाए तथा उस पर मनन किया जाए। "मैं कोई फरिश्ता नहीं हूं। आपको कोई बात इसलिए नहीं माननी चाहिए क्योंकि मैं उस बात को कहता हूं। आपको अपनी बुद्धि व विवेक से काम लेना चाहिए। यदि मेरे जैसे हजारों महात्मा भी आपको कोई बात कहें, जो आपको उचित न लगती हो तो उसे तत्काल अस्वीकार कर दीजिए। इस तरह व्यवहार करने से ही आप अपनी स्वतन्त्रता को बनाए रख सकते हैं, और उसके योग्य भी बनेंगे।"—ये विचार बहुत ही महान् तथा प्रासंगिक भी हैं। हम अंग्रेजों के गुलाम थे। हम आजाद हुए। कुछ लोगों का शासन हो गया। हम उनकी मानते रहे, गलत या सही तथा अपने विवेक का प्रयोग नहीं किया; जो

उन्होंने कहा वही मान लिया, जो उन्होंने कहा वैसा ही कर दिया तो क्या यह स्वतन्त्रता है । नहीं, वास्तव में स्वतन्त्रता तभी है, जब हम स्वयं विचार करें । हमें परामर्श एवं मन्त्रणा करनी चाहिए और जो निर्णय हो, उसी के अनुसार कार्य करना चाहिए । कई बार कहा जाता है कि 'जो हमारे धर्म गुरु ने कह दिया, जो फतवा दे दिया, यही परम सत्य है ।, यह बात गांधी के चिन्तन के विरुद्ध है । यह बात दयानन्द के चिन्तन के विरुद्ध है । दयानन्द ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि जो सत्य है, हम उसी का ग्रहण करें । किसी प्रकार के पुर्वाग्रह अथवा पक्षपात में हम लिप्त न हों । आज के वर्तमान संदर्भ में इस वक्तव्य का विशेष महत्त्व है ।

गांधी जी ने एक बात और कही थी—"रचनात्मक कार्य के लिए शासन से अनुदान स्वीकार करने के मैं विरुद्ध हूं और न हमें वर्ष-प्रतिवर्ष जनता से ही रकम मांगनी चाहिए ।" वास्तव में जो संस्थाएँ सरकार के अनुदान पर चलती हैं वे सरकारी हो जाती हैं । वहाँ पर हम अपने स्वतंत्र मन्तव्य नहीं रख सकते और जो असरकारी संस्थाएँ होती हैं, वे ही वास्तव में असरकारी हैं । इस सन्दर्भ में मैं स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, आचार्य प्रभात आश्रम मेरठ का स्मरण कराना चाहता हूं जिन्होंने कहा था—आपने बच्चों का निर्माण करने की जिम्मेदारी मुझे दी है । यह कार्य आपके सहयोग से होगा और अवश्य होगा । इस कार्य के लिए मैं सरकार का दरवाजा नहीं खटखटाऊंगा । यहाँ हमारा उद्देश्य वेतन और सुविधा-भोगी होना नहीं है । यहां हमारा उद्देश्य है—साधना और तपस्या के द्वारा नई पीढ़ी का निर्माण । गांधी जी की यह बात भी आज प्रासंगिक है ।

एक विचित्र बात कहना चाहता हूं कि ऐसा क्यों होता है कि महापुरुष अपने समय में वट वृक्ष की तरह छाए रहने के बाद अपनी यात्रा के अन्तिम पड़ाव तक आते-आते अप्रासंगिक हो जाते हैं । क्या इससे इन महापुरुषों का महत्त्व कम हो जाता है । कदाचित् नहीं । शायद यह ऐतिहासिक अनिवार्यता है । गांधी से पहले भारत की राजनीति पर तिलक, लाजपतराय, विपिनचन्द्र पाल, मोतीलाल नेहरू आदि दिग्गजों का वर्चस्व था । लेकिन गांधी के आते ही इन तमाम बड़े नेताओं का प्रभामण्डल फीका पड़ गया । ऐसा सभी संस्थाओं में होता है । परिवर्तन संसार का अनिवार्य नियम है । गर्म राष्ट्रवाद के प्रतीक अचानक ठंडे पड़ गए और शान्ति की बात करने वाला गांधी सबसे ऊँचा हो गया । वह अचानक गर्म लोहा बन गया । उसकी शांन्ति में भी गर्मी थी । टैगोर और रोम्यां रोला जैसे महापुरुष जो काव्य की रमणीयता तथा समस्वरता के द्वारा विश्व मानव की खोज में तल्लीन थे, उसकी कार्य पद्धति से उद्वेलित हुए थे । असहयोग आन्दोलन तथा अपनी सरकार के विरुद्ध विद्रोह के स्वरों को भले ही वे अहिंसात्मक थे, वे पचा नहीं पाए । उन्हें रामकृष्ण परम हंस और विवेकानन्द का दर्शन तो पसन्द आया था, पर वे विद्रोह के स्वर में बोलने वाले दयानन्द और गांधी से उखड़े-उखड़े से रहे । भले ही आगे चलकर वे भी उनके हिमायती बने और उनका असहयोग प्रतिकार में बदला, सविनय अवज्ञा में बदला और आगे चलकर

"करो या मरो" में बदला। इस स्थिति तक आते-आते गांधी लाजपतराय हो गए थे, वे दयानन्द हो गए थे, उन्होंने पूर्ण स्वराज्य की मांग कर दी थी।

वह गांधी भी बाद के दिनों में भारत की दुर्दशा को रोक नहीं पाया था। स्व० श्रीमन्नारायण ने लिखा है कि अपने अन्तिम दिनों में गांधी जी ने कहा था—"साम्प्रदायिक घृणा और हिंसा से आज दिल्ली जल रही है। मेरी अपील का उन पर कोई असर नहीं पड़ता। एक समय था जब मेरी आवाज का जनता पर जादू सा असर था। मालूम पड़ता है, आज वह सारी शक्ति समाप्त हो गयी है।" गांधी की यह असहायता ऐतिहासिक अनिवार्यता थी।

आज भी देश में यही साम्प्रदायिक विद्वेष की स्थिति है। कश्मीर में तो शुरू से ही है, पंजाब में पिछले आठ साल से है। भारत के अन्य स्थानों पर भी है। कुछ लोग इस आग में ईंधन और तेल डालकर इसे ज्यादा भड़का रहे हैं। कश्मीर की ताजा स्थिति भयावह है। विदेशी शक्तियां आतंकवादियों को सहयोग दे रही हैं और आतंकवादियों की जड़ें वहां की घाटी में मौजूद हैं। एक ऐसा विश्वास बन चुका है कि गणराज्य को चलाने वाले कोई सही काम नहीं करते। उनके हर काम की आलोचना होती है।

परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि किसी प्रकार के तुष्टीकरण की प्रवृत्ति को छोड़कर, ठोस कदम उठाए जाएं, जो राष्ट्रीय अखण्डता में सहयोगी हों। शुभं भवतु।

—डॉ. धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 4-2-90)

सुनो भाई ! पूर्ण परमात्मा न आता और न जाता है। जो तुम मन्त्रबल से परमेश्वर को बुला लेते हो तो उन्हीं मन्त्रों से अपने मरे हुए पितृ के शरीर में जीव को क्यों नहीं बुला लेते ? और शत्रु के शरीर में जीवात्मा का विसंजन करके क्यों नहीं मार सकते ?

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ऋषिवर दयानन्द

भारत भू का यह सौभाग्य रहा है कि जब-जब देश पर संकट छाये, विदेशियों ने आक्रान्त किया, अन्ध-विश्वासों और रूढ़ियों की जड़ें गहरी हो गयीं अथवा आपस में ही राजनेताओं एवं सामान्य जनता में लड़ाइयां हो गयीं, उस समय ऐसे महापुरुषों का जन्म हुआ जिन्होंने असत्य के विरुद्ध संघर्ष किया तथा सत्य की स्थापना की, अविद्या का नाश किया, अन्धकार का नाश किया तथा विद्या और प्रकाश की ओर बढ़ने के लिए जनमानस को उत्प्रेरित किया। ऐसे ही महापुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती भी थे, जिन्होंने अपने अमिट पद-रेखायें आने वाली पीढ़ियों के लिए छोड़ी हैं। उनका सन्देश अमर है। आज की परिस्थितियों में भी, जब देश पर संकट के बादल छाए हैं, पड़ोसी देश आक्रामक बने हुए हैं, राष्ट्र की एकता और अखण्डता को खतरा है, अन्ध विश्वासों का विषधर अपना फन उठाए खड़ा है, हमें उस वीर संन्यासी योद्धा का स्मरण करना चाहिए तथा इन विभीषिकाओं की चुनौती को स्वीकार करते हुए, उनकी शिक्षा तथा उनके बताए मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

स्वामी दयानन्द सरस्वती एक महान् समाज सुधारक, प्रखर क्रान्तिवादी तथा राष्ट्र की ओजस्विता के प्रबल समर्थक महापुरुष थे। उनके हृदय में विदेशी राज्य को उखाड़ फेंकने तथा स्वराज्य की स्थापना करने के लिए वैसी ही प्रचण्ड अग्नि धधक रही थी जैसी कि उनके हृदय में आध्यात्मिकता का सन्देश दिग्-दिगन्त तक फैलाने की थी अथवा सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए थी।

योगी अरविन्द ने कहा था कि स्वामी जी महाराज की आत्मा में, ईश्वर का निवास था, उनकी आंखों में दूरदृष्टि थी, उनके हाथों में शक्ति थी तथा वे प्रकाश के अग्रदूत थे और मानव शिल्पी थे। उन्होंने घोषणा की थी कि संसार अन्ध विश्वास और अज्ञान की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, मैं उन्हीं बेड़ियों को तोड़ने और लोगों को दासता से मुक्ति दिलाने के लिए आया हूँ, लोगों को उनकी स्वाधीनता से वंचित रखना मेरे उद्देश्य के सर्वथा विपरीत है। स्वामी जी महाराज की इच्छाएँ स्वहित तक सीमित नहीं थीं। वे तो मानवमात्र का कल्याण चाहते थे। उन्होंने कहा था, मैं अकेला ही मोक्ष प्राप्त कर लूं, इससे क्या लाभ होगा। मेरी हार्दिक इच्छा है कि सारी मनुष्य जाति मोक्ष प्राप्त करे।' कितनी उदात्त भावनायें उस महामना ऋषिवर की थीं।

आज उनके जन्मोत्सव को आयोजित करते हुए, हमारा कर्तव्य है कि इन मानवीय भावनाओं के प्रचार प्रसार के लिए हम संकल्प लें। सभी को समानता का अधिकार दिलाएँ। बिना किसी भेदभाव के सबको समान शिक्षा, समान रोजगार और उन्नति के समान अवसर दें। राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के बाधक तत्त्वों का पूरी शक्ति से विरोध करें। सती प्रथा, बाल विवाह, दहेज, अनमेल विवाह की कुरीतियों को जड़ से मिटा दें। अन्धविश्वासों और ढोंगों को अपने से दूर भगाएँ। राष्ट्र को सुदृढ़ करें।

स्वामी जी महाराज का जन्मदिन 12 फरवरी को है। उस दिन हरियाणा सरकार ने राजकीय अवकाश घोषित किया हुआ है। हमें प्रयास करना चाहिए कि सम्पूर्ण देश में स्वामी जी महाराज के सम्मान में राजकीय अवकाश हो।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 11-2-90)

हे मनुष्य-ईश्वर से डर।

जो कुछ इस संसार में जगत् है उस सबमें व्याप्त होकर जो नियन्ता है वह ईश्वर कहाता है, उससे डर कर तू अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत कर, उस अन्याय को त्याग और न्यायाचरण रूप धर्म से अपने आत्मा से आनन्द को भोग।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सर्वविध स्वतंत्रता के उपासक स्वामी श्रद्धानन्द

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज उन महान् विभूतियों में एक थे जो देश और धर्म की सेवा करते हुए, मनुष्य मात्र को परतन्त्रता की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए, सभी भारतीयों को एक सूत्र में पिरोने के लिए, दलितों का उद्धार कराने के लिए, महिलाओं का कल्याण करने के लिए, भटके हुओं को रास्ता दिखाने के लिए, अपना धर्म छोड़कर अन्यत्र गए हुए लोगों को शुद्ध करने के लिए, युवा-पीढ़ी को संस्कारवान बनाने के लिए आजीवन मेहनत करते रहे। भारत की सांस्कृतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए—तथा इन्हीं क्षेत्रों में भी व्याप्त परतन्त्रता की शृंखला को तोड़ने के लिए उन्होंने उस कठिन समय में भी गुरुकुल की स्थापना की थी। उनका यह गौरवमय कार्य विदेशी आधिपत्य को एक चुनौती थी। हम आज भौगोलिक दृष्टि से तो स्वतन्त्र हैं, परन्तु हमारा चिन्तन अभी भी गुलामी के आयने में से झांकता प्रतीत होता है। इसका निदान केवल मात्र भारतीय धर्म, आचार-विचार एवं संस्कृति की शिक्षा देने से ही सम्भव है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी सरस्वती, पूर्व नाम महात्मा मुन्शीराम का जन्म 22 फरवरी 1856 को जिला जालंधर पंजाब के तलवन ग्राम में हुआ। इस अवसर पर स्वामी जी महाराज की स्मृति में नमन करते हैं और परमात्मा से कामना करते हैं कि हम उस मार्ग पर चलें जो कल्याण मार्ग के पथिक का मार्ग है। हम भी उसी राह के राही बने।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 28-2-90)

परमात्मा से डरकर सत्य बोल।

हे कल्याण की इच्छा करने हारे पुरुष! जो तू "मैं अकेला हूं" ऐसा अपने आत्मा में जानकर मिथ्या बोलता है सो ठीक नहीं है किन्तु जो दूसरा तेरे हृदय में अन्तर्यामीरूप से परमेश्वर पुण्यपाप का देखने वाला मुनि स्थित है उस परमात्मा से डरकर सदा सत्य बोला कर।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सीताष्टमी

आराधना का उल्लास श्रद्धा से ही अर्जित किया जा सकता है। उत्प्रेरक तत्व की तरह बौद्धिक विवेचन उस अर्जन में सहायक तो हो सकता है, लेकिन अपनी एकाकी उपस्थिति में वह निष्क्रिय ही सिद्ध होता है। इसलिए आराधना की भावभूमि में रहते हुए, लोग जो चर्चाएँ करते हैं, वे बौद्धिक दृष्टि से भले ही बेस्वाद हों, लेकिन स्वभाव के दृष्टि से वे उल्लास बढ़ाती ही हैं। उदाहरण के लिए फाल्गुन बदी अष्टमी के दिन सीताष्टमी का पर्व मनाते हुए जानकी के चरित और गुणों की चर्चा प्रभुभक्तों में एक आह्लाद की भावना को जन्म देती है।

स्त्री जाति को विधाता ने दलित, दिव्य, मृदु, मधुर गुणों की राशि बनाया है। यह कहा गया है कि यदि मनुष्य में नारी के गुण आ जाए तो वह देवता हो जाता है। मधुर स्वभाव, देवत्व की प्रसाद-प्रवृत्ति, सभी की कल्याण कामना—ये भावनाएँ स्त्रियों में होती हैं और मनुष्य इन्हीं गुणों को पाने की आकांक्षा करता है। नारी दया की अवतार, प्रेम की परमधारा, सौन्दर्य की प्रतिमा, मधुरता की मूर्ति है। वह संसार का मूल है। वह गृहस्थाश्रम की जीवन शक्ति है।

जिस नारी जाति की इतनी महिमा है। सभ्य समूहों में जिसका समादर है। आदि सृष्टि से समस्त संसार में सर्वोत्कृष्ट और आदर्श रूप में किस देवी ने इस वसुन्धरा को अपने जन्म से पवित्र किया था, यह प्रश्न मानव समाज की शिक्षा के लिए इतिहास की दृष्टि से अत्यावश्यक और महत्त्वपूर्ण है। इसके उत्तर के लिए सारे संसार के प्राचीन और अर्वाचीन स्त्री रत्नों के चारु चरित्रों की तुलनात्मक दृष्टि से जांच पड़ताल की जाए तो सर्वसम्मति से एक ही नाम निर्धारित होगा और वह तत्त्वज्ञानी-शिरोमणि मिथिलाधिपति राजर्षि विदेह जनक की आत्मजा और सूर्यकुल कमल दिवाकर मर्यादा पुरुषोत्तम महाराजा रामचन्द्र की धर्मपत्नी सती शिरोमणि श्री सीता जी का प्रातः स्मरणीय पवित्र नाम है।

आओ हम सीताष्टमी के पर्व को मनाते हुए, माता सीता के गुणों का ध्यान करें और उन्हें अपने जीवन में लाने का प्रयास करें।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 18-2-90)

बहुमुखी प्रतिभा के धनी महर्षि दयानन्द सरस्वती

महर्षि दयानन्द सरस्वती का परिव्राजक, संसार उद्धारक और विश्वप्रेमी रूप आर्य जनता को स्वीकार्य एवं ग्राह्य है। संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, यह उद्घोषणा करने वाला व्यक्ति सभी के लिए स्वीकार्य होगा ही। उन्हें इस स्थिति तक पहुँचाने वाली घटना शिवरात्रि के रात्रि जागरण के समय हुई 'मूषक घटना' सर्वविदित है। क्या कारण है कि प्रतिवर्ष शिवरात्रि के अवसर पर हम स्वामी दयानन्द सरस्वती को स्मरण करते हुए भी, क्यों उद्वेलित नहीं होते और शिवत्स की प्राप्ति के लिए अग्रसर नहीं हो पाते। हम क्यों जड़ पाषाण हो गए हैं। हमारी मनुष्यता कहां छिपी हुई है। स्वामी जी महाराज के गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द जी महाराज जैसे गुरु हमें क्यों नहीं मिलते।

वास्तव में हम गुण-कीर्तन के आदी बन गए हैं। जैसे गुरुद्वारों, मन्दिरों में कीर्त्तन होते हैं, उसी प्रकार हम भी कीर्त्तन करते हैं। हम यह भी नहीं जानते कि हम क्या कर रहे हैं। हमें उन शब्दों के अर्थ भी पता नहीं, उन शब्दादेशों को अपने जीवन में उतारने की बात तो बहुत दूर है। हम महर्षि दयानन्द सरस्वती का गुणगान भी इसी प्रकार कर लेते हैं। उनके नाम पर कुछ समारोह कर लेते हैं। एक दूसरे की प्रशंसा करते हैं और भूल जाते हैं कि हमें कल भी कुछ करना है। आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान महाशय धर्मपाल जी ने एक बार कहा था कि हमें आर्यसमाज या वेदिक धर्म सप्ताह में केवल एक दिन याद आता है। बाकी छः दिन हम सोए रहते हैं। क्या ऐसे धर्म का काम हो सकेगा। वास्तव में यदि हम धार्मिक हैं, यदि उस परिव्राट का स्मरण करते हैं, यदि हमें उसका वह विश्वप्रेमी रूप प्रिय है और यदि हम भी संसार का उद्धार होने की कामना करते हैं तो हमें अपने आप को त्याग, तपस्या, कठिन परिश्रम की भट्टी में तपाना होगा। हमें अपने अन्दर वही तड़प महसूस करनी होगी, जो तड़प 'मूलशंकर' के मन में शिवरात्रि के अवसर पर थी।

सुप्रसिद्ध चिन्तक रोम्यां रोलां ने रामकृष्ण परम हंस का जीवन-चरित्र लिखा था। उसमें उन्होंने एक अध्याय ऐसा भी सम्मिलित किया है जिसमें उन्होंने भारत की जनता के कल्याण करने वाले, समाज सुधारकों के संक्षिप्त परिचय दिए हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है कि "वह पुरुष सिंह के समान था जिसको यूरोप के लोग जब भारत के विषय में विचार करते हैं तो भूल जाते हैं। परन्तु एक दिन आयेगा, जब वे विवश होंगे, उसको याद रखने के लिए। क्योंकि ऋषि दयानन्द में ऐसे गुणों का समावेश था, जिनका एक व्यक्ति में होना कठिन होता है।

वह विचारक और कर्मयोगी होने के अतिरिक्त, जन्म से ही नेतृत्व की क्षमता रखता था।" रोम्यां रोलां ने केशवचन्द्र सेन को ईसाइयत की ओर झुकते दिखाया है। इस बात को प्रमाणित करने के लिए उन्होंने केशव बाबू के पत्रों की नकलें भी अपनी पुस्तक में दी हैं, परन्तु महर्षि दयानन्द के लिए उन्होंने लिखा था—"दयानन्द ने अकेले ही देश के आक्रमणकारियों के विरुद्ध अपना झण्डा बुलन्द किया और ईसाई पन्थ के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। उसकी भारी और तीक्ष्ण तलवार ने उसे दबा दिया।" वह ऋषि अकेला था। वह किसी के सामने झुकता न था। क्या आज हमारे अन्दर वही साहस है ? ऋषि बोधोत्सव हमें आत्मालोचन एवम् आत्म-विश्लेषण की प्रेरणा देता है। आर्यसमाज एक आन्दोलन है, पाखण्ड और अन्धविश्वासों के विरुद्ध, कुरीतियों के विरुद्ध, अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध तथा हर प्रकार के शोषण के विरुद्ध,। यह आन्दोलन है, इसीलिए जनता से जुड़ा हुआ है और जनता से जुड़ाव के कारण ही इसमें बुराइयों के विरुद्ध लड़ने की शक्ति है। आज भी यह संगठन मद्य निषेध की बात करता है, भारतीय भाषाओं को व्यवहार में लाने की बात करता है, और गोरक्षा की बात करता है। और हमें पूर्ण विश्वास है कि हम अपने इस त्रिसूत्री अभियान में अवश्य सफल होंगे। एक समय था जब आर्यसमाज का प्रत्येक सदस्य स्वाधीनता संग्राम से जुड़ा था। आज भी प्रत्येक सदस्य राजनीति में भले ही कोई रुचि न ले, पर वह किसी भी स्तर पर भ्रष्टाचार और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए तत्पर है।

भारत ने पहली स्वाधीनता की लड़ाई 1857 में लड़ी थी। हमारे कुछ विद्वान् कहते हैं कि शिवाजी और राणा प्रताप की लड़ाइयां भी स्वाधीनता के लिए थीं। निस्सन्देह वे लड़ाइयां भी स्वाधीनता के लिए थीं। 1857 की लड़ाई अंग्रेजों के विरुद्ध और दासता से मुक्ति पाने के लिए थी। यह कहा जाता है कि 1857 की लड़ाई में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सक्रिय भूमिका निभायी थी। हम उनके अनुयायी हैं। वे हमारे आदर्श पुरुष हैं। अनुयायियों की इच्छा होती है कि वे हर अच्छी बात को अपने इष्ट के चरित के साथ जोड़ दें। हम भी जोड़ते हैं, पर कुछ विद्वानों ने फिर प्रश्न उठाया कि इसके साक्ष्य लाओ। इस विषय पर गम्भीर विवेचन की अपेक्षा थी। इस विषय पर लिखने के लिए हमने सुधी विद्वान् पं० क्षितीश कुमार वेदालंकार से प्रार्थना की और उन्होंने इस विषय पर एक शोधपूर्ण लेख हमें दिया है। हम उनके आभारी हैं। हमें विश्वास है कि उनका यह लेख, आने वाले समय के लिए एक ऐतिहासिक दस्तावेज होगा।

इस विशेषांक में हमें आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वानों—स्वामी आनन्द बोध सरस्वती, स्वामी वेदमुनि परिव्राजक, आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, प्रो० भवानीलाल भारतीय, पं० मनोहर विद्यालंकार, भगवानदेव चैतन्य, डा० जबरसिंह सेंगर, पं० यशपाल आर्यबन्धु आदि का योगदान मिला है। नारी जाति के ऊपर स्वामी दयानन्द के उपकार-—इस विषय पर गम्भीर शोधपूर्ण लेख डा० शशिप्रभा ने गहन परिश्रम से तैयार किया। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज द्वारा गठित परोपकारिणी

सभा क्यों बनी उसका कार्यक्षेत्र क्या है, और वह क्या-क्या कर रही है—इस पर विश्लेषण कर रहे हैं उस सभा के मन्त्री श्री गजानन्द जी आर्य। महर्षि दयानन्द और हिन्दी भाषा पर, सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने लिखा है। हमारी हार्दिक इच्छा थी कि रुशदी और दयानन्द के लेखन के सम्बन्ध में एक तुलनात्मक लेख हम दे पाते। विद्वान् लेखकों ने कहा कि रुशदी और दयानन्द के लेखन के सम्बन्ध में अधिक समय की अपेक्षा है। हमें आशा है कि किसी आगामी अंक में इस विषय पर लेख दे सकेंगे।

मुझे यह कहने में सन्तोष की अनुभूति हो रही है कि अधिकांश वैदिक विद्वान् लेखकों और कवियों ने हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर तदनुरूप समय से हमें अपनी बहुमूल्य रचनाएँ भेजीं, जिन्हें हम इस अंक में सम्मिलित कर पाये हैं। अनेक विद्वानों की रचनाएँ हमें इतनी देर से प्राप्त हुई हैं कि हम समयाभाव के कारण उन्हें स्थान नहीं दे पाये हैं। हम प्रयत्न करेंगे कि उन रचनाओं को आगामी अंकों में समय-समय पर प्रकाशित कराते रहें।

आर्थिक सहयोग के लिए सभा के वरिष्ठ उपप्रधान महाशय धर्मपाल जी, उप-प्रधाना श्रीमती ईश्वरीदेवी जी धवन, श्री सुशील कुमार जी महाजन तथा अन्य आर्य महानुभावों ने विशेष उदारता दिखायी, एतदर्थ मैं उनका कृतज्ञ हूं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने अनेक दिशाओं में निरन्तर और एक साथ कार्य किया। वह महान् समाज सुधारक, ऋषि दयानन्द आज इस पर्व पर हमें बारम्बार याद आते हैं। आओ हम उनके जीवन एवं कार्यों से प्रेरणा लें तथा चारों ओर व्याप्त अज्ञानान्धकार की कालिमा को दूर करके, स्वर्णिम प्रकाश प्रसार के लिए प्रयत्नशील हों।

मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 25-2-90)

चमड़ी जलाना तप नहीं।

यथार्थ शुद्ध भाव, सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करना, मन को अधर्म में न जाने देना, बाह्य इन्द्रियों को अन्यायाचरणों में जाने से रोकना अर्थात् शरीर इन्द्रिय और मन से शुभ कर्मों का आचरण करना, वेदादि सत्य विद्याओं का पढ़ना पढ़ाना, वेदानुसार आचरण करना आदि उत्तम धर्मयुक्त कर्मों का नाम तप है। धातु को तपाके चमड़े को जलाना तप नहीं कहाता।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

अमर शहीद पं० लेखराम

इस वीर भोग्या वीरप्रसू भारतभूमि पर अनेक महापुरुषों ने जन्म लिया और मानवमात्र के कल्याण के लिए अपने को समर्पित कर दिया। राष्ट्र, जाति और धर्म के लिए अपने जीवन का बलिदान करने वालों की परम्परा भी सुसम्पन्न एवं सुदीर्घ है। सम्पूर्ण विश्व इस बात का साक्षी है कि जिसने भी मानवता को नई दिशा दी, उसे अनेक कष्ट भोगने पड़े और विधर्मियों की गोली या छुरी या संगीन का शिकार होना पड़ा। चाहे ईसा हो या गांधी, दयानन्द हो या श्रद्धानन्द—सभी इसी बलिपथ के राही बने। अमर शहीद लेखराम की भी नियति यही रही।

सन् 1897 के फरवरी मास में एक गठे बदन का मुस्लिम युवक पण्डित लेखराम के घर पहुँचा। उसने बताया कि पहले वह हिन्दू था। दो वर्ष पहले मुसलमान बना था। वह पुनः हिन्दू धर्म की शरण में आना चाहता है। धर्मवीर लेखराम के लिए इतना परिचय पर्याप्त था। वह युवक पण्डित लेखराम के साथ रहने लगा। सभी जगह उनके साथ जाता। अनेक हितैषियों ने पण्डित लेखराम को सचेत भी किया। 6 मार्च 1897 का दिन उस युवक ने चुना। सन्ध्याकाल जब पण्डित जी अपना दैनन्दिन लेखन कार्य करके जरा उठे, अंगड़ाई ली तो इस युवक ने अपनी छुरी उनके पेट में घुसेड़ दी। पण्डित जी ने आह तक न की। किसी को पता भी न लग पाया। दुष्ट हत्यारा साफ बच निकला।

पण्डित लेखराम का शहीद दिवस सभी आर्यजनों के लिए प्रेरणा का दिन है। एक बालक वीर हकीकतराय था। उसे भी यह नियति भोगनी पड़ी थी। हम हकीकतराय का स्मरण श्रद्धा से करते हैं। गुरु गोविन्दसिंह के पुत्रों का स्मरण श्रद्धा से करते हैं। उसी श्रद्धा से इस पवित्र दिन शहीद लेखराम का स्मरण करते हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि 365 दिन और चौबीसों घण्टे, साठों मिनट और साठों सेकेण्ड उसे स्मरण करें तथा वैदिक धर्म की पताका को दिग् दिगन्त तक ले जाने के लिए प्रयत्नशील रहें।

पण्डित जी ने मरते समय कहा था कि तकदीर और तहरीर के कार्य को बन्द न होने देना। हमारा प्रयास है कि यथाशक्ति इस कार्य में सहयोग देते रहें। आर्यसन्देश के माध्यम से तथा आर्यसमाजों के सत्संगों एवं समारोहों के माध्यम से हम यह कर रहे हैं। आर्यसन्देश के विशेषांक, आर्यजाति को प्रेरणा देने के लिए हैं कि वे भी इस प्रशस्त पुण्य पथ पर बढ़े चलें।

वीर लेखराम का जन्म चैत्र शुक्ला 8, संवत् 1915 विक्रमी को ग्राम सैयदपुर, तहसील चकवाल, जिला जेहलम में हुआ था। उनकी शिक्षा 6 वर्ष की आयु में उर्दू और फारसी पढ़ने के साथ प्रारम्भ हुई। उन्हें चाचा के पास पेशावर पढ़ने के लिए भेजा गया, परन्तु चाचा पुलिस की नौकरी में थे और उनके स्थानान्तरण होते रहते थे, अतः पुनः गाँव में ही बुला लिया गया। 21 दिसम्बर 1875 को लेखराम पुलिस में नौकर हो गए। उस समय उनकी आयु मात्र 17 वर्ष की थी। पुलिस का कार्य उनके अनुकूल न था। वे निरन्तर ईश्वर भक्ति की ओर प्रवृत्त रहते थे। प्रारम्भ में उनकी प्रवृत्ति पौराणिकता की ओर थी। शनैः शनैः उनका मन छानबीन के लिए उत्सुक हुआ। उन्होंने अनेक ग्रन्थ मंगाए। उनका तुलनात्मक अध्ययन किया। उन्होंने ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ भी पढ़े। बस फिर क्या था। यहां से उनकी जीवन धारा ही बदल गयी। उन्होंने पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना कर दी।

उनका सर्वप्रथम ऋषि से साक्षात्कार अजमेर में हुआ। उनसे बात-चीत करने के बाद तो वे बस दयानन्द के हो गए। उन्होंने रात-दिन आर्यसमाज का कार्य किया। 35 वर्ष की आयु तक विवाह नहीं किया। आर्यसमाज पेशावर की ओर से एक मासिक पत्र 'धर्मोपदेश' प्रारम्भ किया।

वे लिखते थे, व्याख्यान देते थे तथा शुद्धि के कार्यों में रात-दिन लगे रहते थे। उनके व्याख्यानों और शास्त्रार्थों की धूम मची थी। 24 दिसम्बर 1884 को उन्होंने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और अपना जीवन आर्यसमाज को अर्पित कर दिया।

ऋषि दयानन्द ने उन्हें अनेक पत्र लिखे होंगे। पर दो पत्र उपलब्ध हैं। एक में पण्डित लेखराम को गोरक्षा विषयक प्रार्थना पत्र पर हस्ताक्षर कराने के लिए कहा गया था। दूसरे में हिन्दी प्रचार के लिए कमीशन को 'मेमोयर' भेजने के विषय में कहा गया था। लेखराम ने दोनों कार्य उत्साहपूर्वक किए।

लेखराम का आर्यसमाज को अभूतपूर्व योगदान है-- ऋषि का जीवन चरित। यह कार्य उन्होंने सुदीर्घ साधना करके, उन सभी स्थानों का भ्रमण करके जहां पर ऋषि दयानन्द गए थे—किया। जहां-जहां भी लेखराम गए, वहां-वहां उन्होंने वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार भी किया। स्वामी श्रद्धानन्द के साथ मिलकर उन्होंने कुम्भ के मेले पर प्रचार किया। सिन्ध में भी उन्होंने धर्म-प्रचार किया। उन्होंने लरकाना में शुद्धि कार्य किया। जब ऋषि की जीवनी लिखने के सिलसिले में वे राजपूताने गये तो यहां पर भी वेद प्रचार में संलग्न रहे। काठियावाड़ में जाकर भी उन्होंने आर्यसमाज को बढ़ाने की दिशा में कार्य किया।

वे खानपान की शुद्धता पर बल देते थे। उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए— करनाल में मिथ्या ज्योतिष का खंडन, कोटा में व्याख्यान, मुजफ्फरनगर में अन्धविश्वासों का खंडन, सियालकोट में सिखों की रक्षा, मालेर कोटले में शास्त्रार्थ, मरो का उत्सव, बलूचिस्तान में वेद प्रचार, अजमेर में जान पर खेलकर कब्र परस्ती और

मर्दुम परस्ती का खण्डन, गुलाम अहमद कादियानी के शिष्यों से टक्कर। लेखराम को इन महान् कार्यों के लिए सदैव याद किया जायेगा।

उन्होंने छोटी बड़ी लगभग 33 पुस्तकें लिखीं। वे आर्य संस्कृति के महान् रक्षक थे। उनका जीवन सदाचार और सादगी से परिपूर्ण था।

उनके शहीद दिवस पर हमारी विनत श्रद्धाञ्जलि।

—डा० धर्मपाल
(—आर्यसन्देश, 4-3-90)

परमात्मा ही की भक्ति करें।

हे मनुष्यों! जो सृष्टि के पूर्व सब सूर्यादि तेज वाले लोकों का उत्पत्तिस्थान आधार और जो कुछ उत्पन्न हुआ था, है और होगा उसका स्वामी था, है और होगा, वह पृथ्वी से लेके सूर्य लोक पर्यन्त सृष्टि को बनाके धारण कर रहा है। उस सुखस्वरूप परमात्मा ही की भक्ति जैसे हम करें वैसे तुम लोग भी करो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

मिथ्यावादी वेदान्तियों से।

वाह रे झूठ वेदान्तियों! तुमने सत्यस्वरूप, सत्यकाम, सत्यसंकल्प परमात्मा को मिथ्याचारी कर दिया। क्या वह तुम्हारी दुर्गति का कारण नहीं है? किस उपनिषद् सूत्र, वा वेद में लिखा है कि परमेश्वर मिथ्यासंकल्प और मिथ्यावादी है। क्योंकि जैसे किसी चोर ने कोतवाल को दण्ड दिया अर्थात् "उलटि चोर कोतवाल को दण्डे" इस कहानी के सदृश तुम्हारी हुई।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी

आगामी 19 मार्च को महर्षि दयानन्द सरस्वती के शिष्य मुनीश्वर गुरुदत्त 'विद्यार्थी' एम० ए० का शताब्दी दिवस है। आर्यसमाज के विद्वानों, अधिकारियों को सम्भवतः इसका पता ही नहीं है। हम यह दावा करते हैं कि विश्व को आर्य बनाएँगे, परन्तु सुध तो हमें अपने देश, समाज और परिवार की तो दूर रही, अपनी स्वयं की भी नहीं है। हम अपने दैनन्दिनी कार्यों में इतने व्यस्त हैं कि हमें न तो ईश्वर-स्मरण की फुरसत है और न ही आर्यसमाज के देदीप्यमान पृष्ठों को खोलकर देखने की।

आर्यसमाज के इतिहास में बलिदानों की एक लम्बी परम्परा है। महर्षि दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द, पं० लेखराम आदि की सुदीर्घ परम्परा है। रंगीला रसूल लिखने वाले तो थे पं० चमूपति जी पर बलिदान हो गए थे, महाशय राजपाल। आर्यसमाज के सेवकों को चाहिए कि इन जाज्वल्यमान पृष्ठों को कभी-कभी खोलकर देख लिया करें। उन्हें इससे प्रेरणा मिलेगी। वे धर्म के लिए आगे बढ़ेंगे। वे "ओइम्" की पताका गौरव से फहरा सकेंगे। उनकी यज्ञ और वेद प्रचार में श्रद्धा बढ़ेगी।

यह समय है जब हम पं० गुरुदत्त का स्मरण करें। केवल स्मरण न करें बल्कि उसके कर्तृत्व से प्रेरणा लें तथा तदनुसार अपने जीवन को कर्ममय-यज्ञमय बनाएँ।

यूं तो जीने के लिए लोग जिया करते हैं,
लाभ जीवन का नहीं, फिर भी जिया करते हैं,
मृत्यु से पहले तो मरते हैं, हजारों लेकिन,
जिन्दगी उन्हीं की है, जो मरकर भी जिया करते हैं।

ऐसा ही वीर सपूत था, पं० गुरुदत्त जो मात्र 26 वर्ष की आयु में इस संसार से चला गया। यह विस्मयकारी है कि इस छोटी सी आयु में उसने कितना कार्य किया, कितना प्रचार किया, कितना साहित्य लिखा और कितनी संस्थाओं के संचालन में योग दिया। जीवन की पूर्णता का आकलन दीर्घ जीवन से नहीं महत्त्वपूर्ण कार्यों से किया जाता है। छोटे जीवन में ही पूर्णता को पा लिया था।

19 मार्च 1989 को प्रातः 7.00 बजे वह वीर चला गया। आर्यसमाज को उसका अभाव सदैव खटकता रहेगा। प्रभु से प्रार्थना है कि हम उनके मार्ग पर चलकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में सहयोगी बनें।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा इस अवसर पर आर्यसन्देश का भव्य विशेषांक "गुरुदत्त निर्वाण-शताब्दी स्मृति अंक" का प्रकाशन कर रही है। सभा का उद्देश्य है कि उस वीर पं० गुरुदत्त का सभी आर्यसमाज स्मरण करें तथा उसके कर्तृत्व से प्रेरणा लें।

—**मूलचन्द गुप्त**

(**आर्यसन्देश, 11-3-90**)

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी—

आर्यसमाज का जाज्वल्यमान नक्षत्र

मानवता की सेवा के लिए, मानव मूल्यों की स्थापना के लिए तथा असत्य के विनाश के लिए इस पृथ्वी पर अनेक महापुरुषों ने सत्कार्य किया। यह नियम है जब-जब सामाजिक जीवन में विकृति आ जाती है, उसकी निष्कृति के लिए सदात्मा पुरुष के मन में हूक सी उठती है और वह मैदान में कूद पड़ता है। यह नियम सृष्टि के आदि से है। प्रारम्भिक ऋषियों मुनियों ने सांसारिक सुख भोगों को त्याग कर, निरन्तर तपस्या के बल पर ऐसी शक्ति अर्जित की जिस से वे संसार के सभी प्राणियों के कल्याण के लिए कार्य कर सकें। ऐसे महापुरुषों को अपने जीवन में अभावों का सामना करना पड़ा, विरोध भी सहने पड़े, जीवित रहते दण्डे भी सहने पढ़े और कभी-कभी तो किसी आततायी के हाथों बलिदान भी होना पड़ा। परन्तु उन लोगों की वाणी कभी नहीं मरती, जो केवल अपने लिए जीवित नहीं रहते, बल्कि दूसरों के लिए जीते हैं, जो लोग केवल अपनी उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहते, अपितु दूसरों की उन्नति में अपनी उन्नति मानते हैं। ऐसे महापुरुषों की गणना करने लगें तो अनेक पृष्ठ लिखे जाएँगे।

यहां पर एक ऐसे महामना महानुभाव के कृतित्व का विश्लेषण अपेक्षित है जो मात्र छब्बीस वर्ष की आयु में ऐसे महत् कार्य कर गया, जिन्हें कोई विलक्षण मेधा का व्यक्ति ही कर सकता है। बीस-इक्कीस वर्ष की आयु तो अल्हड़ता तथा अबोधता की आयु ही मानी जाती है। इस महापुरुष को मात्र पांच-छः या अधिकतम सात वर्ष ही तो मिले, काम करने के लिए। इन स्वल्प वर्षों में ही वह अपने जीवन को पूर्णता की कोटि तक समुन्नत कर गया। एक 'लिली' का फूल केवल एक दिन के लिए खिलता है तथा उसी दिन मुरझा जाता है, परन्तु दुनिया उसे याद करती है। दूसरी ओर 'ओक' का वृक्ष तीन सौ वर्ष तक रहता है, पर क्या कोई उसे प्रशंसा की दृष्टि से देखता है। वह तो मात्र ईंधन या अधिक हुआ तो इमारती लकड़ी के रूप में ही प्रयोग में लाया जाता है। मनुष्य के जीवन की पूर्णता का आकलन भी इस प्रकार दिनों की संख्या से नहीं, अपितु उस के जीवन लक्ष्यों तथा उपलब्धियों से किया जाता है।

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी मात्र 19 वर्ष की आयु में आर्यसमाज बच्छो वाली लाहौर के प्रतिनिधि बन कर लाला जीवनदास के साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती के पास उन दिनों गए थे, जब वे मृत्यु शैय्या पर थे। उनका सारा शरीर फफोलों से सूजा था, पर फिर भी उनका मुख मण्डल शान्त एवं प्रसन्न मुद्रा में था। उस समय का गुरुदत्त

के ऊपर जो प्रभाव पड़ा, बस वह उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। विज्ञान का तार्किक छात्र गुरुदत्त उस दिन अविचल ईश्वर भक्त बन गया। वह प्रभुनिष्ठ हो गया। वह प्रभुमय हो गया। ऋषिवर दयानन्द के अन्तिम शब्द—'हे दयामय ! हे सर्वशक्तिमान् ईश्वर ! तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो ! अहा ! तू ने अच्छी लीला की।' आजीवन उस भक्त गुरुदत्त के कानों में गूंजते रहे।

गुरुदत्त ने अजमेर से लौट कर लाहौर में डी० ए० वी० स्कूल की स्थापना में प्राणपण से योगदान किया। उनकी इच्छा वेद, वैदिक साहित्य को शिक्षा-प्रणाली में सदैव वरीयता देने की रही थी। पर वह ऋषिवर दयानन्द का शिष्य, वैदिक धर्म का अनुयायी यहीं तक न रुका। उसने अपनी सारी शक्ति वेद प्रचार, आर्ष पद्धति से संस्कृत शिक्षण तथा वेद के वैज्ञानिक अर्थ करने पर केन्द्रित कर दी। वे कहा करते थे कि मैं ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र लिख रहा हूँ। जब कुछ मित्र पूछते कि कहां लिख रहे हो, तो उन्हें उत्तर मिलता, 'अपने जीवन में उसे क्रियात्मक रूप में लिख रहा हूँ।' सचमुच वैदिक धर्म के प्रचार और ऋषि-ऋण से मुक्त होने के लिए वाणी और लेखनी से अनवरत परिश्रम करना उसने प्रारम्भ कर दिया था। जिन लोगों ने उस ज्ञानी आत्मा का सान्निध्य प्राप्त किया है उनका कहना है कि जब वे 'वैदिक मैगज़ीन' को लिखने बैठते थे तो कई-कई दिन तक वे घर से बाहर भी न निकलते थे। जब वे पढ़ने लगते तो बिना विश्राम किए, बिना सोए कई-कई दिन पढ़ते रहते थे।

पण्डित जी ने वैदिक शब्दों की जो वैज्ञानिक व्याख्या का कोष तैयार किया था, जिसे आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय की पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित किए जाने का गौरव मिला था। टर्मिनोलोजी आफ वेदाज ने ब्रिटेन और जर्मनी के भाष्यकारों को चकित कर दिया था। दो उपनिषदों का उन्होंने ऐसा मार्मिक अनुवाद किया था, जिसे उनकी मृत्यु के बाद विश्वधर्म सम्मेलन में पढ़ा गया। 'वैदिक संज्ञा विज्ञान' शीर्षक लेख 'आर्य पत्रिका' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था, बाद में पुस्तक रूप में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक का समर्पण द्रष्टव्य है, 'अपने समय के अद्वितीय विद्वान् स्वामी दयानन्द सरस्वती की स्मृति में उनके एक सच्चे तथा श्रद्धावान् प्रशंसक गुरुदत्त विद्यार्थी द्वारा समर्पित।' यह समर्पण भाव उनके दयानन्द निष्ठ होने का कितना सुन्दर उदाहरण है।

पण्डित जी ने सामान्य जीवन के नियमों का अतिक्रमण किया और उन्हें क्षय रोग ने दबोच लिया। इस प्रकार के अतिक्रमणों से लोहे का शरीर भी अस्तव्यस्त हो सकता है। जवानी में पण्डित जी का शरीर सुडौल व पुष्ट था, परन्तु ईश्वरीय नियमों के उल्लंघन ने उसे शिथिल कर दिया। गुरु के बिना प्राणायाम का जो शरीर पर प्रभाव पड़ता है, वही उन के साथ भी हुआ। आर्यसमाज की आशाओं का केन्द्र, वह होनहार नवयुवक ऋषि दयानन्द का सच्चा अनुयायी छब्बीस वर्ष की स्वल्पायु में इस लोक से प्रयाण कर गया।

वह नवयुवक आर्य मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी वैदिक धर्म के लिए, वैदिक मान्यताओं के लिए अपने को बलिदान कर गया। उसके बलिदान शताब्दी दिवस पर हमारा कर्त्तव्य है कि वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए हम अपने को इसी प्रकार समर्पित करने का व्रत लें।

डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 18-3-90

आर्यसमाज स्थापना दिवस और आर्यों के हृदय की आग

संवत् 1932 विक्रमी (सन् 1875 ई०) की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। उस घटना को अब 115 वर्ष हो गये हैं। आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व के काल में देश की जो परिस्थिति थी उसका दिग्दर्शन इस प्रकार किया जा सकता है—

1—उस समय सामान्य जनता वेद के नाम मात्र से तो परिचित थी, किन्तु वेद के सन्देश को समझने व पठन-पाठन की परम्परा लुप्त थी।

2—वैदिक-सभ्यता के स्थान पर पाश्चात्य-सभ्यता सम्मान प्राप्त करती जा रही थी।

3—प्राचीन संस्कृत-साहित्य को अंग्रेजी-साहित्य के सामने हेय दृष्टि से देखा जाता रहा था।

4—आर्य भाषा का स्थान विदेशी भाषा लेती जा रही थी।

5—बाल-विवाह आदि सामाजिक कुरीतियों का जोर था जिसके कारण हिन्दू-जाति निर्बल हो रही थी। ब्रह्मचर्य आश्रम की सर्वथा उपेक्षा हो रही थी। अनाथों और विधवाओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी।

6—जन्मपरक जातिवाद का बोलबाला था, जिसके कारण समाज में ऊँच-नीच और आपसी भेदभाव पराकाष्ठा तक पहुंच गया था। शूद्रों को अछूत समझा जाता था और इस कारण वे बड़ी संख्या में विधर्मी बनते जा रहे थे।

7—स्त्रियों को समाज में उचित स्थान प्राप्त नहीं था। उन्हें पांव की जूती समझा जाता था। उन्हें शिक्षा देना वर्जित था।

8—एक ईश्वर की उपासना के स्थान पर नाना देवी-देवताओं का बाहुल्य था और इष्ट देवों की पृथक्मूर्तियां बनाकर उनकी उपासना करने से समाज धार्मिक दृष्टि से विशृंखलित होता जा रहा था।

आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व देश की दशा का ऊपर जो संक्षिप्त चित्रण किया गया है उससे स्वतः यह कल्पना की जा सकती है कि आर्यसमाज का जन्म न हुआ होता तो देश आज भी उसी अवस्था में होता। पिछले 115 वर्षों में देश के धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक और राजनीतिक क्षेत्र में जितनी व्यापक क्रान्ति हुई है उसमें सब से अधिक योग आर्यसमाज का ही है, इस बात को आर्यसमाज के विरोधी भी शतमुख से स्वीकार करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत का जो संविधान तैयार

किया गया, उस पर और स्वराज्य आन्दोलन पर भी ऋषि दयानन्द के विचारों की ही व्यापक छाप है, यह बात भी आज सर्वमान्य है।

विगत 115 वर्षों में आर्यसमाज के आन्दोलन ने जितना विस्तार पाया है, वह किसी भी धार्मिक संस्था के इतिहास की दृष्टि से अभूतपूर्व है और प्रत्येक आर्य उस पर गर्व कर सकता है। न केवल भारत भर में, प्रत्युत भारत के बाहर विदेशों में भी जहां-जहां भारतीय बसते हैं, उन सब स्थानों पर, संस्था के रूप में आर्यसमाज का ही स्थान सर्वोपरि है। आर्यसमाजों, समाज मन्दिरों, स्कूल-कालिजों, गुरुकुलों और दिन-प्रतिदिन बढ़ती आर्य जनों की संख्या आर्यसमाज की सफलता की सूचक है। यह सब सफलता आर्य-बन्धुओं के उत्साह का ही परिणाम है। इतना ही क्यों, देश भर में आर्यसमाजी होना व्यक्ति की कर्मशीलता का प्रमाण पत्र माना जाता है।

परन्तु यह सब तस्वीर का एक पक्ष है। जहां कार्य की दृष्टि से आर्यसमाज का और संख्या की दृष्टि से आर्यसमाजियों का इतना विकास हुआ है, वहां हमें स्पष्ट रूप से यह भी स्वीकार करना चाहिए कि आर्यसमाजियों में उत्साह की वह आग अब दिखाई नहीं देती जो पुराने आर्यसमाजियों में थी। अपने सिर पर कफन बांध कर मैदान में निकलने वाले आर्यसमाजी अब कहां चले गए। कहां चले गए वे आर्य भाई और बहनें जो अपने सुख दुःख की परवाह बिना किये वैदिक धर्म के प्रचार की मिशनरी भावना से ओत प्रोत होकर दिन रात सिर पर कफन बांधे घूमा करते थे, देश और जाति के उद्धार की भावना से अहर्निश बेचैन रहते थे।

देश के राजनैतिक वातावरण में पनपी अवसरवादिता स्वार्थ-परस्ती, सिद्धान्त-हीनता और विघटनकारी मनोवृत्ति धीरे-धीरे आर्य जगत् पर भी अपनी काली छाया डालने में सफल हो गयी और आर्यसमाज भी उन सब रोगों का शिकार होता चला गया जिनको दूर करने के लिए उसका जन्म हुआ था। किसी भी अन्य धार्मिक या राजनैतिक संस्था से तुलना करने पर आर्यसमाज आज भी अद्वितीय है, अपनी समस्त कमजोरियों के बावजूद आज भी अन्य संस्थाएं आर्यसमाज के पासंग में भी आने की हिम्मत नहीं कर सकतीं, परन्तु क्या आर्यसमाज के लिए यही श्रेय की बात रह गई कि हम कहते फिरें कि औरों से तो हम अब भी अच्छे हैं? आर्यसमाजियों के पौरुष के अनुरूप यह बात नहीं है।

आर्यसमाज का उद्देश्य था 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।' सारे संसार को आर्य बनाने का उद्देश्य लेकर हम चले थे। परन्तु सारा संसार तो क्या, हम किसी एक देश को भी आर्य नहीं बना सके। एक देश की बात भी बहुत दूर है। हम किसी एक प्रान्त को भी आर्य बना सके? एक प्रान्त की बात भी बहुत दूर है, क्या हम किसी एक जिले को भी पूर्णत: आर्य बना सके! अब हमें जिला भी दूर लगता है। क्या हम किसी एक गांव के बारे में ही यह दावा कर सके कि अमुक गांव पूर्णतः आर्यसमाजी बन गया है।

बात सुनने में कड़वी लग सकती है। जितना महान् हमारा उद्देश्य है, उसकी तुलना में हमारे हृदय की आग उतनी महान् नहीं है। आर्यसमाज स्थापना दिवस पर

हमें इस बार आत्मनिरीक्षण करके उसी आग को फिर धधकाना चाहिए, जिस आग की एक झलक सात समुद्र पार बैठे श्री एन्ड्रू जक्सन महोदय ने देखी थी और कहा था—

"मैं एक आग देखता हूं, अनन्त प्रेम की आग, जो सार्वभौम है और सार्वत्रिक है···जिसमें संसार भर का ईर्ष्या-द्वेष जलकर भस्म हो जाएगा···जिसे ईसाई और मुसलमान तथा अन्य मतावलम्बी बुझाने के लिए दौड़ेंगे पर बुझा नहीं पाएंगे···और वह आग सारे संसार में फैल जाएगी···वह सर्वग्राही आग—स्वर्ग की आग—जग-जग को आत्मसात् करके सबको पवित्र बना देगी।"

कहां है वह आग ! उस आग को धधकाने की जरूरत है।

मूलचन्द गुप्त
(आर्य सन्देश, 25-3-90)

परमेश्वर, आदि ऋषियों का गुरु।

जैसे जंगली मनुष्य सृष्टि को देखकर भी विद्वान् नहीं होते और जब उनको कोई शिक्षक मिल जाय तो विद्वान् हो जाते हैं, और अब भी किसी से पढ़े बिना कोई भी विद्वान् नहीं होता। इस प्रकार जो परमात्मा उन आदि सृष्टि के ऋषियों को वेद विद्या न पढ़ाता और वे अन्य को न पढ़ाते तो सब लोग अविद्वान् ही रह जाते। जैसे किसी के बालक को जन्म से एकान्त देश, अविद्वानों या पशुओं के संग में रख देवें तो वह जैसा संग है वैसा ही हो जायगा। इसका दृष्टान्त जंगली भील आदि हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

शक्तिशील और सौन्दर्य के धनी मर्यादा पुरुषोत्तम राम

मर्यादा पुरुषोत्तम राम को हम आदर्श महापुरुष के रूप में स्वीकार करते हैं। उनके सत्य और शील को अपने जीवन में अपनाना चाहते हैं। उनके त्याग और सोहार्द को आज भी प्रासंगिक मानते हैं। जब हम अच्छे राज्य की बात कहते हैं तो रामराज्य हमारे मुख पर आ जाता है। महात्मा गांधी ने अनेक बार राम के महत्त्व को समझाने की कोशिश की है, यहां तक कि मरते समय भी उनके मुख से "हे राम" ही निकला था। आज इस बात पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है कि क्या राम का नाम लेना साम्प्रदायिक घोषित नहीं कर दिया गया है? क्या इस धर्मनिरपेक्षता के समय में राम की कोई आवश्यकता है? क्या हम अपने जीवन में राम के सत्य, शील और मर्यादा को कोई स्थान देते हैं?

यह प्रश्न कठिन है और वास्तव में रामत्व को हम जीवन से दूर कर रहे हैं। यह तो उचित ही है हम राम को स्मरण करें, हम उसके रामत्व को स्मरण करें। राम से बड़ा राम का नाम—गांधी के साथ भी अन्ततः जो राम रहा वह सम्भवतः राम नहीं रामत्व था। राम के गुणों को प्राप्त करने की अदम्य लालसा थी। राम का चरित्र और व्यक्तित्व संसार में रहकर जीने की क्षमता और करूणा प्रदान करता है। राम की सामान्यता और सामान्य धर्मनिष्ठा किसी को संसार को छोड़ने की प्रेरणा नहीं देती। राम ने सुग्रीव को राज्य दिया और राम ने विभीषण को भी राज्य दिया। उसने किसी को वैराग्य का सन्देश तो दिया ही नहीं। हनुमान् को उनका सबसे बड़ा भक्त माना जाता है। उसे भी यही उपदेश दिया कि संसार को छोड़ो या संसार से पलायन मत करो। संसार की सेवा में ही मेरी आराधना मानो।

हमारे व्रत पर्व और उत्सवों का विशेष योगदान हमारे जीवन को व्यवस्थित बनाने में है। भारतीय जन समाज में वर्ष में दो बार नवरात्र का आयोजन किया जाता है। चैत्र में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को वासंतिक नवरात्रि के रूप में मनाया जाता है और आश्विन में शुक्ल प्रतिपदा से शारदीय नवरात्र। वासंतिक नवरात्रि को भगवान् राम की आराधना से जोड़ा गया। राम मर्यादा के प्रतीक हैं, और धर्म तथा संस्कृति के संवाहक। रामनवमी इसी चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी के दिन है। इसी दिन भगवान् राम ने इस पृथ्वी पर जन्म लिया था। हमारा कर्तव्य है, उस महापुरुष का स्मरण करें और अपने जीवन की वृत्तियों को आदर्श बनायें तथा सत्य शील एवं मर्यादा के मार्ग का अवलम्बन करें।

—डॉ० धर्मपाल

आर्यसन्देश, 1-4-90

महान् क्रान्तिकारी श्यामजी कृष्ण वर्मा

महान् क्रान्तिकारी श्याम जी कृष्ण वर्मा स्वतन्त्रता-समर के अमर सेनानी, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् बहुमुखी प्रतिभा के धनी, प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों के प्रेरणा-स्रोत महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। उनका जन्म 4 अक्टूबर 1857 को गुजरात के कच्छ जिले में माण्डवी नामक ग्राम में हुआ था। वे प्रारम्भ से ही प्रतिभाशाली छात्र थे।

1874-75 में महर्षि दयानन्द सरस्वती बम्बई आए। उनके विद्वता पूर्ण भाषण की सर्वत्र धूम थी। श्याम जी कृष्ण वर्मा उनके दर्शनार्थ ही गये और उनके विलक्षण व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके शिष्य बन गये। आपने वेदों का स्वाध्यायए किया और 1877 से 1878 तक आर्यसमाज के प्रचारक रहे। सन् 1878 में आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष सर्व मौनियम विलियम भारत आए। वे श्याम जी कृष्ण के संस्कृत भाषा में दिए गए व्याख्यान से बहुत प्रभावित हुने और उन्हें सहायक संस्कृत प्राध्यापक बनाकर इंग्लैण्ड ले गए।

इंग्लैण्ड में रहकर श्याम जी कृष्ण वर्मा अध्ययन-अध्यापन तक ही सीमित न रहे। उन्होंने वहां से एक मासिक-पत्रिका का सम्पादन किया और इण्डिया हाउस की स्थापना की। यही इण्डिया हाउस आगे चलकर देशभक्त क्रान्तिकारियों की गति-विधियों का केन्द्र बना। 31 मार्च सन् 1930 को उस महापुरुष का देहान्त हुआ जिसका जीवन अन्याय, शोषण पराधीनता और अन्धबिश्वासों के विरु द्ध लड़ाई लड़ में समर्पित रहा।

उनकी पुण्य तिथि पर हम अपने विनीत श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं।

—डॉ० धर्मपाल

आर्यसन्देश, 1-4-90

शास्त्रार्थ महारथी पं॰ रामचन्द्र देहलवी

पं॰ रामचन्द्र देहलवी का जन्म मध्य प्रदेश के नीमच शहर में 1881 ईस्वी की रामनवमी के दिन हुआ था। और इसीलिए उनका नाम रामचन्द्र रखा गया। जीविका निर्वाह के लिए रामचन्द्र दिल्ली आए। यहाँ पर पहले नौकरी की और फिर अपने श्वसुर की दुकान पर कार्य करने लगे। रामचन्द्र देहलवी की पत्नी का निधन उस समय हो गया था, जब वे केवल 36 वर्ष के थे। यद्यपि अनेक प्रस्ताव पुनर्विवाह के आए परन्तु वैदिक धर्म का प्रभाव उन्हें अकेले ही जीवन यात्रा के पथ पर साहस पूर्वक चलने की प्रेरणा देता रहा।

उन दिनों चांदनी चौक के फव्वारे पर दो दिन मुसलमान और दो दिन ईसाई अपने-अपने धर्म का प्रचार करते थे। पं॰ रामचन्द्र देहलवी ने धर्म के ऊपर किये गये इन कटाक्षों को सुना और उस से प्रेरित हो उन्होंने भी उसी दिन से सोच लिया कि उन्हें भी वैदिक धर्म का इसी तरह प्रचार करना चाहिए। उन्होंने भी उसी स्थान पर प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। उनके व्याख्यानों में इतनी भीड़ होती थी कि यातायात में बाधा पड़ने लगी और उनसे आग्रह किया गया कि वे अपने व्याख्यानों के लिए गांधी ग्राउण्ड को अपना लें। बस यहीं पर 1910 से 1925 तक उनके व्याख्यानों की धारा अबाधगति से चलती रही। उन्होंने विधिवत् कुरान का अध्ययन किया और ईसाई-मत का भी। वैदिक धर्म के उत्कृष्ट प्रवक्ता तार्किक उच्चकोटि के शास्त्रार्थ महारथी पं॰ रामचन्द्र देहलवी की छवि दिग्दिगन्त में फैल गयी। हैदराबाद में उनके व्याख्यानों ने अभूतपूर्व जागृति फैलाई। और निजाम सरकार ने तो उन्हें अपने राज्य से ही निष्कासित कर दिया था। अत्यधिक वृद्ध होने पर भी उन्होंने धर्म प्रचार के कार्य से मुंह नहीं मोड़ा। 2 फरवरी 1968 को दिल्ली में उनका निधन हुआ। पं॰ रामचन्द्र देहलवी ने अनेक ग्रन्थों की रचना की जो वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार में में अपनी विशिष्ट भूमिका को रेखांकित करते हैं।

प्रभु से प्रार्थना है, कि आर्यसंस्कृति के प्रकाश पुञ्ज, आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न, वेद-सन्देश वाहक, शास्त्रार्थ महारथी पं॰ रामचन्द्र देहलवी जैसे कर्मवीर विद्वान् नेता सदैव इस भारतीय वसुन्धरा पर अवतीर्ण होते रहें।

—डॉ॰ धर्मपाल

आर्यसन्देश, 1-4-90

महाशय धर्मपाल

दानवीर महाशय धर्मपाल का 67 वां जन्मदिन इस वर्ष आर्यसमाज स्थापना दिवस में मिल गया है। महाशय धर्मपाल का जन्म 27 मार्च 1923 को स्यालकोट में हुआ था। उनके पूज्य पिता उन्हें अंगुली पकड़ कर समाज मंदिर में ले जाते थे। आर्यसमाज के संस्कार उन्हें घुट्टी में मिले थे। इसलिए महर्षि दयानन्द को ये अपना प्रेरक और गुरु मानते हैं।

सरल सहज स्वभाव, हंसता मुसकराता चेहरा, साधारण परिधान, नम्र एवं उदार व्यवहार सभी को प्रभावित करता है। उनका जीवन अनाथ दीन-हीन जनों के कल्याण में लगा और मानव मूल्यों की स्थापना में सतत प्रयत्नशील हैं।

इस समय माता चन्ननदेवी नेत्र चिकित्सालय, जनकपुरी, चलता फिरता हस्पताल और अनेक विद्यालय जनता की सेवा में समर्पित हैं। वे अपने नाम को अपने जीवन में सार्थक करते हैं। वे शाकाहारी, प्रति-दिन यज्ञ करने वाले, दान और सेवा और ईश्वर-भक्ति करने वाले ईश्वर भक्त हैं। प्रभु-भक्ति में मस्त होकर अपनी सुधबुध विसार कर भजन गाना उनकी अपनी विशिष्टता है। उन्होंने वेदप्रचार विभाग की स्थापना, महाशय चुन्नीलाल धर्मार्थ ट्रस्ट के अन्तर्गत की हुई है। आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान महाशय धर्मपाल स्वयं धार्मिक और याज्ञिक हैं ही, उनका पूरा परिवार भी उनके पदचिह्नों पर चल रहा है।

'आर्यसन्देश" परिवार की ओर से उन्हें हार्दिक बधाई। और प्रभु से कामना है कि वे स्वस्थ और निरोग रहते हुए 100 वर्षों से भी अधिक जीयें तथा इसी प्रकार मानवता की सेवा करते रहें।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 1-4-90

वैशाखी

वैशाखी पर्व सामाजिक और धार्मिक समरसता का प्रतीक है। यह देश की एकता एवम् अखण्डता को बनाए रखने वाला पर्व है। साथ ही यह अपने में गौरवशाली इतिहास की प्रेरक स्रोतस्विनी को भी आत्मसात् किए हुए है। इसे मेष-संक्रांति, संवत् सारडी अथवा विष्णु चैत्रांशु नामों से भी अभिहित किया गया है। यह चैत्र के उत्तरार्ध में एवं वैशाख के पूर्वार्ध में उस दिन पड़ता है जिस दिन सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है। यह संयोग ही है कि अंग्रेजी महीने के अनुसार भी इसकी तिथि वही होती है। इसका कारण है कि जो भी कलैण्डर सूर्य और पृथ्वी की गति से नियमित होते हैं, उनमें एकरूपता होता है।

यह उल्लास से मनाया जाने वाला पर्व है। रबी की फसल पककर खेतों में तैयार है और किसान मस्ती में झूम उठते हैं। वे नाचते गाते, अपने इष्ट की वन्दना पूजा करते और निकट के जलस्थान में स्नान करते हैं। यह त्योहार किसी भी विशेष देवता से जुड़ा नहीं है। पंजाब और उत्तर पश्चिम भारत में यह विशेष रूप से मनाया जाता है। महाराष्ट्र के कोंकण मलाबार क्षेत्र में भी यह उत्सव मनाया जाता है। बौद्ध धर्म के अनुयायी मानते हैं कि इस दिन बोध गया में भगवान् बुद्ध को सम्बोधि प्राप्त हुई थी। सिखों के लिए इसका विशिष्ट महत्त्व है। इसी दिन सन् 1699 में गुरू गोविन्दसिंह ने आनन्दपुर में खालसा पन्थ की शुरूआत की थी। गुरु अमरदास ने भी इस दिन साधू संगत को एक स्थान पर एकत्र होने का आदेश दिया था। सामान्यत: सभी नये कार्य इस दिन प्रारम्भ किए जाते हैं।

भारत के स्वाधीनता संग्राम के साथ भी यह दिन जुड़ा हुआ है। सन् 1919 में वैशाखी के दिन ही जलियांवाला बाग में जनरल डायर (पंजाब गवर्नर ओडिवियर) के हुक्म से अन्धाधुन्ध गोलियां बरसाकर सैकड़ों-हजारों निरपराध भारतीयों को मौत के घाट उतार दिया था। वे सरकार के विरोध में वहां पर एक जनसभा कर रहे थे। इस घटना ने देशवासियों में एक नई जान डाल दी थी और उनका स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए उत्साह और अधिक बढ गया था।

13 अप्रैल 1749 को सरदार जस्सासिंह आलूवालिया ने अहमदशाह अब्दाली का विरोध किया था और पंजाब को अफगान साम्राज्य बनने से बचाया था। सन् 1775 में सिखों ने मुगलों से संघर्ष करके इसे मुस्लिम साम्राज्य होने से बचाया था। और 13 अप्रैल 1801 को महाराजा रणजीतसिंह का राजतिलक हुआ था।

यह दिन देश की एकता और अखण्डता बनाए रखने के लिए व्रत का दिन है।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 8-4-90

उत्तर प्रदेश और बिहार में हिन्दी

दुनिया भर में यह सौभाग्य हिन्दुस्तान को ही प्राप्त है, जहाँ अपनी ही मातृ भाषा अपनाने के लिए आन्दोलन करने पड़ते हों। जहाँ कि जिला स्तर की अदालतों से लेकर उच्चतम न्यायालय तक सब काम अंग्रेजी में होता है। वकील अंग्रेजी में जिरह करता है। न्यायाधीश अंग्रेजी में फैसला सुनाता है और जन साधारण (मुवक्किल) मुंह बाये कभी वकील की ओर देखता है और कभी न्यायाधीश की ओर। क्या देश की अदालतें इस बात से अनभिज्ञ हैं कि अंग्रेजी में अदालतों की कार्यवाही 95 प्रतिशत से अधिक मुवक्किलों के पल्ले पड़ती ही नहीं हैं। क्या यह सब न्याय की सम्पूर्ण प्रक्रिया का मजाक नहीं है। यही नहीं केन्द्रीय तथा राज्यस्तर के प्रायः सभी सरकारी विभागों में हिन्दी और हिन्दी वालों को 'अपत्रैत' व 'अछूत' समझकर सौतेला व्यवहार किया जाता है इतना ही नहीं कुछ शहरी लोगों ने तो अंग्रेजी को प्रतिष्ठाचिह्न का दर्जा दे दिया है।

सुखद समाचार है कि उत्तर प्रदेश के नये मुख्यमन्त्री श्री मुलायम सिंह यादव ने पहले देश में फैलते जा रहे महंगे अंग्रेजी-माध्यमी स्कूलों को बन्द करने की बात कही और उसके बाद उन्होंने प्रदेश के सरकारी दफ्तरों से अंग्रेजी को हटाकर हिन्दी को अनिवार्य बना दिया। श्री यादव ने 25 मार्च को डाक्टर राममनोहर लोहिया की स्मृति में आयोजित एक समारोह में सरकारी कामकाज हिन्दी में शुरू करने की घोषणा की साथ ही मुख्यमन्त्री के आदेश पर राज्य के मुख्य सचिव श्री राज भार्गव ने 26 मार्च को सभी सरकारी विभागों को सारे कार्य हिन्दी में ही करने के आदेश दिये। यद्यपि 1952 से ही उत्तर प्रदेश की भाषा हिन्दी कर दी गयी थी, लेकिन उस पर अमल नहीं हो सका। उस आदेश को पुनर्जीवित करके श्री यादव ने निश्चित रूप से अपनी जबरदस्त राजनीतिक इच्छा शक्ति का परिचय दिया है।

ठीक इसी प्रकार बिहार के नये मुख्य मन्त्री श्री लालू प्रसाद यादव ने भी अंग्रेजी को विदायी देकर सम्पूर्ण सरकारी कार्य हिन्दी में करने का निर्देश दे दिया है। यहाँ भी 1950 में बिहार राजभाषा अधिनियम बनाकर हिन्दी को सरकारी कामकाज की भाषा बनाने का प्रयास हुआ था, मगर चाल कछुए वाली ही थी।

इन सुखद समाचारों को पढ़कर भी हमें शक है कि इन आदेशों पर पूरी तरह से अमल हो भी पाएगा या नहीं। जिस प्रकार अंग्रेजी-अखबार, अंग्रेजी माध्यम के स्कूल और कालेज, ईसाई-मिशनरियों के संगठन और अंग्रेजी भक्त प्रशासनिक अधि-

कारियों का वर्ग बौखला रहा है, वह किसी न किसी बहाने अंग्रेजी का बोझ भारतीय जनमानस पर लादे ही रखेगा। काले अंग्रेज यह बर्दाश्त नहीं कर सकते कि उन्हें कल अनुवादकों और टाईपिस्टों के सामने खड़ा होना पड़ेगा।

अब समय आ गया है कि अन्य हिन्दी भाषी प्रदेशों—मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात की सरकारें भी उत्तर प्रदेश और बिहार का अनुसरण कर एक झटके में अंग्रेजी का मोह त्याग कर राष्ट्र भाषा हिन्दी में कार्य शुरू कर देवें, फिर देखें कि अन्य प्रदेश भी धीरे-धीरे अपनी अपनी प्रादेशिक भाषाओं को लेकर अंग्रेजी का मोह छोड़ देवेंगी।

जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं कि हमें इन नये आदेशों के पूरी तरह अमल होने पर शक है। अतः इन दोनों प्रदेशों के यादव मुख्यमन्त्रियों से हमारा विनम्र निवेदन है कि वे इस विषय पर अफसरशाही के साथ संघर्ष में भी अपनी राजनीतिक इच्छा शक्ति को और दृढ़तापूर्वक सामने लायें—समस्त हिन्दी जगत् उनकी पीठ पर होगा। दोनों मुख्य मन्त्रियों को कुछ कठिन निर्णय तुरन्त लेने होंगे, जैसे—सरकारी दफ्तरों में भरे हुए अंग्रेजी टाइपराइटरों और कम्प्यूटरों को नीलाम कर, नये हिन्दी टाइपराइटरों की आपूर्ति कराना। न अंग्रेजी टाईपराइटर होगा, न अंग्रेजी टिप्पिणियां लिखी जायेंगी और न अंग्रेजी आदेश ही। केवल इसी एक आदेश से 80 प्रतिशत कार्य हिन्दी में होने लगेगा। सरकार के सभी प्रस्ताव बजट, विवरण, टिप्पणियां, तकनीकी कार्य मूल रूप में हिन्दी में ही तैयार करने के आदेश प्रसारित किये जायें। वरना अफसरशाही तो इस तरह के आदेशों को कई बार असफल कर चुकी है।

डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 15-4-90)

वेद ज्ञान-परमात्मा की कृपा।

जैसे माता पिता अपने सन्तानों पर कृपादृष्टि कर उन्नति चाहते हैं वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा करके वेदों को प्रकाशित किया है, जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार भ्रम जाल से छूटकर विद्या विज्ञानरूप सूर्य को प्राप्त होकर अत्यानन्द में रहें और विद्या तथा सुखों की वृद्धि करते जायें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

अद्भुत प्रतिभावान् पं० गुरुदत्त विद्यार्थी

यह वर्ष पं० गुरुदत्त विद्यार्थी जी के बलिदान का शताब्दी वर्ष है। 26 अप्रैल 1864 को मुल्तान नगर (पाकिस्तान) में पंडित जी का जन्म हुआ था। कैसा संयोग है कि 26 अप्रैल को जन्मे इस वैदिक संस्कृति के अनुरागी ऋषि भक्त का जीवन भी मात्र 26 वर्ष का ही था।

पंडित जी जन्म काल से ही मेधावी थे। विद्यार्थी जीवन में ही उन्होंने नये-नये कीर्तिमान स्थापित किये। सन् 1886 में पंडित गुरुदत्त जी ने एम० ए० की परीक्षा दी और उसमें वे बी० ए० की तरह सर्वप्रथम रहे। एम० ए० में उनका विषय भौतिक विज्ञान था। एम० ए० में उन्होंने इतने अंक प्राप्त किये जितने इनसे पूर्व किसी विद्यार्थी ने प्राप्त नहीं किये थे इन्होंने नया कीर्तिमान स्थापित किया था। आश्चर्य तो यह था कि अध्ययन के दिनों में वे आर्य समाज के कार्यक्रमों एवं उत्सवों में भी जाते रहे थे। इनके सहपाठियों ने इन्हें कभी शिक्षा के विषयों की पुस्तकें पढ़ते नहीं देखा था। यह पण्डित जी की अद्भुत प्रतिभा का ही उदाहरण है। दो तीन वर्ष पंडित जी ने गवर्नमेन्ट कालेज लाहौर में भौतिकी के प्रोफेसर के रूप में अध्यापन भी किया। यह पहले भारतीय थे जिनको यह पद प्राप्त हुआ था, इससे पहले यहां के सब प्रोफेसर अंग्रेज ही थे। पण्डित जी ने अनुभव किया कि विज्ञान के प्रोफेसर के रूप में सेवा करने के कारण वैदिक धर्म प्रचार एवं योगाभ्यास में बाधा आ रही है। अतः सेवा से त्यागपत्र दे दिया। पंडित जी को अतिरिक्त सहायक कमिश्नर पद पर नियुक्ति हेतु प्रस्ताव प्राप्त हुआ दिनांक 12 अक्टूबर 1887 को लाहौर के जिलाधीश ने इन्हें एतदर्थ बुलाया, परन्तु पंडित जी ने उक्त प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। ऋषि ऋण से उऋण होने के लिए जो त्याग का उदाहरण पंडित जी के जीवन में दिखाई देता है उसकी उपमा अन्य ऋषि भक्तों में कदाचित ही दृष्टिगोचर होती है।

प्रायः देखा गया है कि विज्ञान के विद्यार्थी अध्यापन में अरुचि रखते हैं। ईश्वर की सत्ता में इन लोगों का विश्वास प्रायः नहीं होता। पं० गुरुदत्त भी ईश्वर की सत्ता के प्रति पूर्ण आस्थावान नहीं थे। अजमेर में ऋषि दयानन्द जी की अत्यन्त प्रभावशाली मृत्यु दृश्य को देखकर इनके हृदय में ईश्वर की सत्ता के प्रति अटूट विश्वास जाग्रत हुआ। इस घटना ने इनके जीवन को नयी दिशा दी। इसके पश्चात का इनका जीवन महर्षि दयादन्द के अपूर्ण कार्यों को पूर्ण करने के संकल्प उसके कार्यान्वियन में ही व्यतीत हुआ।

अजमेर से लाहौर पहुंचकर पंडित जी ने स्वामी दयानन्द के शिक्षा विषय विचारों को कार्यान्वित करने में लाला लाजपत राय एवं महात्मा हंसराज आदि महा-

पुरुषों के साथ मिलकर दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना से आरम्भ किया इसकी सफलता के लिए इन्होंने रात्रि-दिवा अनथक परिश्रम किया। स्थान-स्थान पर प्रवचनों से जनता में जागृति उत्पन्न हुई और कुछ काल में ही पर्याप्त द्रव्य एवं धन संग्रह हो गया। दुख है कि डी० ए० वी० कालेज में ऋषि आज्ञा के अनुकूल संस्कृत को प्रमुख स्थान न मिलने के कारण इन्हें कालेज से विरत होना पड़ा। कालान्तर में पंडित जी ने एक उपदेशक श्रेणी खोली और अष्टाध्यायी पढ़ना पढ़ाना आरम्भ किया इसमें छोटी-बड़ी आयु के सभी विद्यार्थी आते थे। इस श्रेणी के एक विद्यार्थी गुरुदत्त के मित्र एक्टा असिस्टेन्ट कमिश्नर महोदय भी थे। पंडित जी संस्कृत का उद्धार कर इसे जन सामान्य की भाषा बनाकर वेदादि आर्षग्रन्थों को लोकप्रिय कर चहूँ दिशाओं में वैदिक धर्म की पताका फहराना चाहते थे। काल को पंडित जी का यह विचार स्वीकार नहीं था। इससे पूर्व की यह कार्य आगे बढ़ता, वेदों एवं आर्य ग्रन्थों के अनुरागी यह जीवन हमसे छिन गया। मात्र 26 वर्ष की ही आयु पंडित जी की थी। इस अल्प जीवन काल में पंडित जी ने प्रवचनों, लेखन आदि के माध्यम से वैदिक धर्म की जो सेवा की, वह अकथनीय है। पंडित जी का सृजित साहित्य-सम्प्रति अप्राप्य है। बलिदान शताब्दी वर्ष के अवसर पर उनका समस्त अप्राप्य साहित्य ग्रन्थावली के रूप में प्रकाशित किया जाना चाहिए। पंडित जी के 127 वें जन्मदिवस पर उनके निर्मल, निस्वार्थ एवं त्यागपूर्ण जीवन का स्मरण करते हुए उनके अपूर्ण कार्यों को पूर्ण करने का संकल्प सभी आर्यबन्धुओं को लेना चाहिए। यही उनके जन्मदिवस एवं बलिदान शताब्दी वर्ष में उनको श्रद्धांञ्जलि होगी।

—डॉ० धर्मपाल
(आर्य सन्देश, 22-4-90)

ऐसे नाम स्मरण का कुछ फल नहीं।

नाम स्मरणमात्र से कुछ भी फल नहीं होता। जैसा कि मिशरी मिशरी कहने से मुंह मीठा और नीम नीम कहने से कड़वा नहीं होता, किन्तु जीभ के चाखने ही से मीठा वा कड़वापन जाना जाता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सत्यार्थ प्रकाश

महाभारत से लेकर गत शताब्दी तक का समय "आर्य राष्ट्र के पतन का समय है। निस्सन्देह, इस कालावधि में भी अनेक महान आत्मा आर्यावर्त की इस पुण्य भूमि पर जन्मी, परन्तु महर्षि वेदव्यास के पश्चात् महर्षि दयानन्द पर्यन्त किसी "ऋषि आत्मा" ने जन्म नहीं लिया, जो परमेश्वर कृत वेदों की पवित्र वाणी का साक्षात् प्रचार करता। आचार्य शंकर भी नवीन मतों सम्प्रदायों की स्थापना में भटक गये।

वर्तमान युग में युगद्रष्टा महर्षि दयानन्द ने पुनः वेदज्ञान का साक्ष किया और पुनः वेदधर्म की स्थापना की।

जैसे राजर्षि मनु ने मानव "धर्मशास्त्र बनाया' वैसे ही देव दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' बनाया है। इसमें सत्य का प्रकाश किया है। क्योंकि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, इसलिये इस "सत्यार्थ प्रकाश" में वस्तुतः "वेदधर्म" का प्रतिपादन है। इस महान ग्रन्थ में महर्षि ने अपने पूर्ववर्ती राजर्षि मनु कृत "मनुस्मृति" और ब्रह्मर्षि वेदव्यास के महाभारतान्तर्गत "विदुर नीति" का आश्रय लिया है।

सत्यार्थ प्रकाश वैदिक वांगमय के सभी ग्रन्थों का सार प्रस्तुत करता है। इसे एक बार आद्योपान्त ध्यानपूर्वक पढ़ लेने पर कोई व्यक्ति किसी के जाल में नहीं फंस सकता हैं। ऐसा कोई प्रश्न या सिद्धान्त नहीं जिस पर सत्यार्थ प्रकाश में प्रकाश न डाला गया हो। ऐसा कोई अंधविश्वास नहीं है जिसका उसमें खण्डन न किया गया हो। वैदिक धर्म के सभी मन्तव्यों की, वेदादि ग्रन्थों के प्रमाणों के आधार पर विशद् व्याख्यायें उसमें मिलती हैं। पं० गुरुदत्त विद्यार्थी ने इसीलिये कहा था 18 बार सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने पर सदैव उसमें से नवीन-नवीन मार्गदर्शन ज्ञान उनको प्राप्त होते रहे।

सभी सम्प्रदायों में सत्यार्थ प्रकाश के कारण ही सुधार की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई प्रत्येक देश एवं समाज पर इसका व्यापक क्रान्ति का असर हुआ है। वस्तुतः हजारों नहीं लाखों नहीं वरन् करोड़ों मनुष्यों को सत्यार्थ प्रकाश से प्रेरणा मिली है तथा भविष्य में भी मिलती रहेगी।

यद्यपि सत्यार्थ प्रकाश ग्यारह शताब्दियों से भी पूर्व लिखा गया, परन्तु इसमें जिन मानव-मूल्यों की स्थापना की गयी है, वे शाश्वत सनातन हैं। अतः जितनी उपादेयता इस ग्रन्थ की पहल रही है, इस भोगवादी चकाचौंध के युद्ध में कहीं उससे अधिक इसके प्रचार और प्रसार की आवश्यकता है।

आज के भूले-भटके मानव को कल्याण मार्ग की दिशा में अग्र होने के लिये सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय करना उतना ही आवश्यक है, जितना कि जीवन के लिए भोजन।

—डॉ० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 92-4-90)

धधकता काश्मीर

भारत का स्वर्ग काश्मीर ज्वालामुखी के मुख पर है। काश्मीर की घाटी में सन्नाटा है, स्थिति विस्फोटक बनी हुई है, भय और आतंक का वातावरण चारों ओर व्याप्त है। डल झील के किनारों पर मातम का सा दृश्य उपस्थिति है। देश-विदेश से आने वाले लाखों सेनानियों ने मुंह फेर लिया है। सभी होटल मोटल, और बाग बीरान लग रहे हैं। विदेशी धन और बारूद के बल पर विदेशों में प्रशिक्षित आतंकवादियों की गतिविधियों के कारण, उमंगों के साथ प्रेम-गीत गाने वाली वहाँ की सड़कों पर अकाल-मृत्यु का ताण्डव नृत्य चल रहा है। भारत के राष्ट्रीय-पर्वों को काले दिवस के रूप में मनाना, भारतीय-ध्वजा और संविधान को चौराहों पर लाना, भारतीयों-विशेष रूप से गैर-मुस्लिमों को पलायन करने के लिए मजबूर करना—क्या यह राष्ट्र द्रोह नहीं है? यदि है, तो फिर केन्द्रीय सरकार-राष्ट्र-द्रोहियों से निपटने के लिये किस मुहूर्त की प्रतीक्षा कर रही है।

आर्यसमाज अपने जन काल से ही उन शक्तियों से टक्कर लेता रहा है, जो राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की दुश्मन रही हैं। आर्यसमाज का उज्जवल-इतिहास आर्य-बलिदानियों की गाथाओं से भरा हुआ है। आर्य समाज के शीर्षस्थ नेताओं ने समय-समय पर सरकार को चेताया है, विदेशी-कुचक्रों से सावधान किया है, साथ ही कठोर कार्यवाही करने पर बल दिया है। परन्तु सरकार की तुष्टि करण-नीति और कछुआ चाल ने कश्मीर घाटी को 'मौत की घाटी' बनने दिया है।

अभी भी समय है। सरकार यदि राष्ट्रीय-भावना को सर्वोपरि मानकर, आर्य समाज की इन मांगों को पक्के इरादों से लागू करे तो काश्मीर और वहां के निवासी पूर्णतः राष्ट्रीय धारा से जुड़ सकते हैं—

1—पाकिस्तान की सीमा के साथ-साथ सुरक्षा-पट्टी बनाकर अवकाश प्राप्त सैनिक परिवारों को वहां बसाया जाय।

2—पूरे राज्य में सैनिक शासन लागू किया जाय।

3—राष्ट्र-द्रोही तत्वों के समूलोच्छेदन के लिये प्रभावी कार्यवाही की जाय।

4—धारा-360 अविलम्ब समाप्त कर, वहां के निवासियों को राष्ट्रीय धारा से जोड़ा जाय।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्य सन्देश, 6-5-90)

सेनाएं नहीं आर्यवीर दल चाहिए

देश में सेनाओं का जोर जिस तेजी से बढ़ता जा रहा है वह चिन्ता का विषय है। इस समय देश में कुल मिलाकर 50 से अधिक सेनाएँ हैं।

जिन राज्यों में कोई सेना नहीं है। ऐसे संगठनों की कमी नहीं है जो सैनिक अर्द्धसैनिक ढंग से व्यवहार करते हैं। कई स्थानों पर तो ऐसे संगठन तोड़-फोड़ और हिंसा की कार्यवाहियों में इतना अधिक भाग लेते हैं कि सेनाओं के नाम से प्रचलित संगठन भी उतना नहीं कर सकते होंगे। अन्तर केवल इतना ही है कि संगठनों के साथ 'सेना' शब्द लगा हुआ नहीं है।

सेना शब्द के प्रति यह आकर्षण किस बात की निशानी है ? सबसे पहले तो यही कि अहिंसा के प्रति उनकी आस्था नहीं है और अपने किसी विशिष्ट प्रयोजन की सिद्धि के लिए वे वैधानिक रास्ता नहीं अपनाना चाहते, सेना शब्द से ही इस बात की ध्वनि निकलती है कि 'बेलट' (मतपत्र) के बजाय वे 'बुलेट' (बन्दूक की गोली) को अधिक महत्त्व देते हैं। जो लोग इस प्रकार की सेनाओं के सैनिक बनने की प्रतिज्ञा करते हैं उनसे कानून और व्यवस्था के प्रति वफादार रहने की कैसे आशा की जा सकती है। जो सेनाएं किसी राजनीतिक दल से बंधी हुई हैं, उनका उद्देश्य तो स्पष्ट है—वे सारे देश को उस राजनैतिक दल के शासन के नीचे लाना चाहती हैं। जिन सेनाओं का सम्बन्ध किसी राज्य विशेष या भाषा-विशेष से है, उनकी संकीर्णता को किसी मनमोहक नारे से छिपाया नहीं जा सकता। कुछ सेनाएं कुछ व्यक्तियों के नाम पर ही बनाई गई हैं। उनके सामने भी समय राष्ट्र का सही चित्र उपस्थित हो, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

बात को स्पष्ट करने के लिए कुछ सेनाओं का नाम ले देना ही काफी है। लीजिए गिनिए— हिन्दू राष्ट्र सेना, हिन्दी सेना, भूमि सेना, सुभाष सेना, शान्तिसेना, अन्ना सेना, विजय सेना, क्रांतिसेना, भीमसेना, तमिलसेना, लचित सेना, शिवसेना, लालसेना इत्यादि। क्या इनमें से किसी भी सेना के सामने राष्ट्र की व्यापक समस्याएं हैं ? क्या इनमें से किसी ने भी अपनी संकीर्णता के खोज में से निकल कर किसी भी समस्या पर राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार करने का प्रयत्न किया है ?

राष्ट्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वत खोरी, अनैतिकता और अर्थपरायणता को मिटाने के लिए उक्त सेनाओं में से किसी ने भी कभी कोई पग उठाया है। शराबखोरी तस्करी, जुआ और व्यभिचार की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को रोकने के लिए उन सेनाओं के

सैनिकों ने क्या कभी अपनी कनिष्टिका अंगुलि भी हिलाई है ? या ये सेनाएं इन बुराइयों को बुराइयां ही नहीं समझती ?

बेकारी दूर करने के लिए, भिक्षावृत्ति समाप्त करने के लिए और जनता को आर्थिक मुक्ति दिलाने के लिए आन्दोलन करने वाले तो बहुत हैं, पर जनता को आलस्य और कमजोरी से मुक्ति दिलाने के लिए किसकी आवाज सुनाई देती है ? चाहे मन्त्री हो, या संसत्सदस्य हो, अफसर हो या सरकारी कर्मचारी हों, सर्वत्र अधिकारों के लिए तो हाहाकार मचा हुआ है, पर देश के प्रत्येक नागरिक का कुछ कर्तव्य भी हैं, इसकी ओर कौन ध्यान दिलाएगा।

आज देश को ऐसे ही संगठन की आवश्यकता है जो देश की इस विकृत चिंतन धारा को बदलने का ठेका ले। किसी राज्य या राजनीतिक दल के स्वार्थों के पीछे राष्ट्रीय हितों का बलिदान करने की किसी की हिम्मत न हो—जो संगठन ऐसा कर सके, आज उसी की राष्ट्र को आवश्यकता है।

आर्यसमाज ऐसी ही संस्था थी—सब स्वार्थों और संकीर्णताओं से ऊपर, मानव की नैतिकता के उच्च धरातल, पर प्रतिष्ठित करने वाली युवकों को विशेष रूप से प्रेरित करने के लिए आर्यवीर दल की स्थापना इसी निमित्त की गई थी। पर आज आर्य जनता की उत्साह-शून्यता के कारण आर्यवीर दल भी···।

आज देश को विघटन के पथ पर अग्रसर करने वाली, तरह-तरह की सेनाओं की तो भरमार है पर समस्त देश को एकता के सूत्र में बांधकर कुरीतियों पाखण्डों, अन्धविश्वासों और अनैतिकताओं से बचाकर स्वर्णिम भविष्य की ओर ले जाने वाला आर्यवीर दल शिथिल पड़ा हुआ है।

पिछले दिनों स्थान-स्थान पर आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया गया है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से नववर्ष भी प्रारम्भ हो गया है। क्यों न इस नए वर्ष में समस्त आर्य जनता मिलकर आर्यवीर दल को इतना तेजस्वी, और क्रियाशील बना दे कि समस्त विघटनवादी, स्वार्थी संकीर्ण और दूषित विचार-धाराओं की समर्थक ये सेनाएं उसके तेज के सामने फीकी पड़ जाएं।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 13-5-90)

आर्यावर्त आर्यों का है।

हम अपने स्वर्णिम इतिहास के आधार पर उज्जवल भविष्य के लिए वर्तमान में रहते हैं। इसलिए यदि किसी जाति का भविष्य बिगाड़ना हो तो उसके अतीत के इतिहास को बिगाड़ कर यह काम बड़ी सरलता से किया जा सकता है। यद्यपि अतीत को पूर्णतया मिटाना किसी प्रकार भी सरल नहीं होता परन्तु उसके सुन्दर स्वरूप को विकृत कर उसके प्रति द्वेष,घृणा उत्पन्न करना सम्भव है।

अंग्रेजों के भारत आने का उद्देश्य इस देश पर केवल शासन करना न था अपितु ईसाइयत का प्रचार कर, इस देश को भी ईसा भूमि बनाना था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने सर्वप्रथम यहां के लोगों में फूट डालने की राजनीति अपनाई और यहां की संस्कृति और इतिहास को बिगाड़ने का बीड़ा उठाया। उन्होंने वेद में आए "आर्य" और "दस्यु" शब्दों के वास्तविक अर्थों को न समझकर जान बूझकर यह सिद्ध करने की कोशिश की कि आर्य नाम से पुकारे जाने वाले लोग भारत के मूल निवासी नहीं हैं बल्कि यहां के असली मालिक वे हैं, जिन्हें आदिवासी अथवा पिछड़ी जातियाँ कहा जाता है और उत्तर भारतीय "आर्य" लोग विदेशी हैं, अक्रान्ता हैं— जिन्होंने दक्षिण के लोगों को उत्तर से खदेड़ा था। यह सब दक्षिण के लोगों के मन में उत्तर भारतीयों के प्रति घृणा उत्पन्न करने का प्रयास था।

यह धारणा पाश्चात्य विद्वानों की कोरी कल्पना के सिवाय कुछ भी नहीं है। इस धारणा के न तो पुष्ट ऐतिहासिक प्रमाण ही हैं और न ही भाषा, शास्त्रीय आधार पर यह सिद्ध हुआ है।

पहले मुसलमानों ने भारतीय इतिहास को नष्ट किया, फिर अंग्रेजों ने उसे विकृत किया और स्वतन्त्रता के बाद एक ओर साम्यवादी लोग तो दूसरी ओर भारत की तथाकथित धर्मनिरपेक्ष सरकारें अपने-अपने ढंग से भारत के स्वर्णिम इतिहास और संस्कृति को तोड़ने मरोड़ने में संलग्न है।

सौभाग्य से पिछले दिनों भारतीय इतिहास संकलन योजना समिति द्वारा आयोजित इतिहास दिवस पर एक विशेष सभा में भारत के प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा० एन० आर० बराड पाण्डे ने निश्चय पूर्वक महर्षि दयानन्द की मान्यताओं का समर्थन करते हुए कहा कि 'आर्य" बाहर से नहीं आए, अपितु आर्य भारत में रहने वाले उन लोगों को कहते हैं जो सभ्य लोग थे।

वेद में आए आर्य और दस्यु शब्द गुणवाचक हैं: जातिवाचक नहीं। आर्य वह हैं—जो श्रेष्ठ हैं, कुलीन हैं, सज्जन, सभ्य और साधु प्रकृति के है। इसके विपरीत अनार्य अर्थात् अनारी, अनाड़ी, मूर्ख, कम समझ या असभ्य के लिए प्रयुक्त होता है, जिसे दूसरे शब्दों में दस्यु कहा जा सकता है।

—डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 20-5-90)

जब तक जीवे-कर्म करे, आलसी न हो।

परमेश्वर आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो।

देखो सृष्टि के बीच में जितने प्राणी अथवा अप्राणी हैं वे सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं।

जैसे पिपीलिका आदि सदा प्रयत्न करते। पृथ्वी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि सदा बढ़ते घटते रहते हैं। वैसे यह दृष्टान्त मनुष्यों को भी ग्रहण करना योग्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ईसाईयों का भारत में षड्यन्त्र

अंग्रेजों के राज्य में ईसाई पादरियों ने लाखों भोले-भाले पिछड़े वर्ग के हिन्दुओं को ईसाई बनाया था। अंग्रेजों को भारत पर अपना शासन सुदृढ़ करने के लिए हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन कराना हितकार था। किन्तु भारत स्वतन्त्र होने पर भी भारत सरकार ने ईसाई पादरियों को जैसे का तैसा बनाये रखा। उन्हें पहिले जैसी सुविधाएं भी दी गई। इसी कारण धीरे-धीरे ईसाइयों ने असम के नागा क्षेत्र में नागा जाति के भारतीयों को ईसाई बनाकर भारत विरोधी बना डाला। जो नागा लोग भारत भक्त थे और अपने को भीम के पुत्र घटोत्कच के वंशज मानते थे। वे भारत भक्त नागा ईसाई बनने के पश्चात् विदेशी पादरियों द्वारा भड़काये जाने पर भारत के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करने लगे। यही स्थिति मिजोरम में भी बन गई।

अब नागालैण्ड और मिजोरम पूर्ण रूप से ईसाई राज्य बन चुके हैं। बल्कि कहना चाहिए कि यह दोनों राज्य ईसाई धर्म के ऐसे सुदृढ़ दुर्ग बन गए है कि अब वहां से असम के कई क्षेत्रों में अलगाववाद भड़काने के लिए षड्यन्त्र चलाए जाते हैं। वास्तविक स्थिति यह है कि नागालैण्ड और मिजोरम कहने मात्र के लिए भारतीय राज्य हैं। वास्तव में तो दोनों राज्यों में यूरोपीय ईसाई चर्च का ही साम्राज्य है। जिनके पीछे यूरोप की बड़ी शक्तियां कार्य कर रही हैं। शक्तियों के प्रभाव का लाभ उठाकर बंगलादेश और बर्मा के क्षेत्रों में ऐसे अड्डे बनाए गए हैं जहां असम तथा अन्य क्षेत्रों के ईसाई प्रेरित उग्रवादी संगठनों को प्रशिक्षण एवं हथियार प्राप्त कराये जाते हैं। मणिपुर, त्रिपुरा के विद्रोही गुटों को शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किया जाता है। शस्त्रों का प्रशिक्षण दिलवाया जाता है। इन्ही केन्द्रों में बोड़ो विद्रोहियों को और उल्फा विद्रोहियों को प्रशिक्षण आदि दिया जाता है।

नागालैण्ड में एक शक्तिशाली सैनिक संगठन बनाया जा चुका है, जिसका नाम है—"नेशनल सोसियलिस्ट कौंसिल आफ नागालैण्ड" वास्तव में यह चर्च की सेना है जिसे अत्याधुनिक शस्त्रास्त्रों से लैस किया गया है। पिछले वर्ष इस सैनिक संगठन ने असम की सीमा में घुसकर एक हिन्दू ग्राम पर आक्रमण किया था। असम के उल्फा विद्रोहियों को शस्त्र इसी संगठन ने दिए।

यह संस्था भारत भर में विद्रोह की आग फैला रही है। झारखण्ड के 21 जिलों के बहुत बड़े क्षेत्र को भी ईसाई राज्य बनाने के प्रयत्न पिछले 40 वर्षों से चल रहे हैं।

हरिजनों से ईसाई बने लोगों के लिए भी हरिजनों को दी जाने वाली सुविधाओं की मांग को लेकर ईसाई पादरियों ने आन्दोलन चला रखा है। यदि उनकी यह मांग भारत की धर्मनिरपेक्ष सरकार द्वारा मान ली जाती है, तो हरिजन भाइयों को ईसाई बनाने के काम में ईसाई पादरियों को बड़ा लाभ होगा। अधिक संख्या में लोग ईसाई बनने लगेंगे और भारत के इसाई करण के सपनों को जल्दी साकार कर पायेंगे।

दुर्भाग्य से भारत की धर्मनिर्पेक्ष सरकारों ने विदेशी ईसाई पादरियों द्वारा किए जा रहे इन भारत विरोधी कार्यों को समाप्त करने का कभी प्रयास नहीं किया। अब समय आ गया है, कि हम आर्यजन उठ खड़े हों और अपने परिवारों से हजारों युवकों को अपने देश हिन्दुस्तान और आर्य (हिन्दू) समाज की रक्षा के लिए अपना जीवन समर्पित कर देने की सौगन्ध दिलायें, अन्यथा आने वाली पीढ़ियां हम पर हसेंगी।

— मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 27-5-90)

नाम स्मरण का प्रकार।

नाम स्मरण इस प्रकार करना चाहिये। जैसे 'न्यायकारी' ईश्वर का एक नाम है इस नाम से इसका अर्थ है कि जैसे पक्षपात रहित होकर परमात्मा सबका यथावत् न्याय करता है वैसे उसको ग्रहण कर न्याययुक्त व्यवहार सर्वदा करना, अन्याय कभी न करना। इस प्रकार एक नाम से ही मनुष्य का कल्याण हो सकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

फीजी में भारतीय दूतावास

फीजी की राजधानी सूवा में भारतीय दूतावास के द्वारों पर 24 मई के दोपहर बाद ताले पड़ गए हैं। दूतावास से भारतीय ध्वज उतार लिया है। कारण वहां समर्पित अंतरिम सरकार ने 23 मई को आदेश दिया था कि भारतीय दूतावास चौबीस घंटों के अन्दर बन्द किया जाय।

विचारणीय है, कि फीजी की कुल जनसंख्या मात्र सात लाख पन्द्रह हजार है, जिसमें आधे से भी अधिक भारतीय मूल के लोग पिछली एक शताब्दी से भी अधिक समय से बसे हुए हैं, जिन्होंने अत्यधिक कठिन परिस्थितियों में जी-तोड़ मेहनत मज़दूरी करके उस देश की अर्थव्यवस्था को मजबूती से खड़ा किया है। आज सूवा की सैनिक सरकार भारत पर वहां के विपक्ष को सहायता देने का आरोप लगा कर, राजनयिक सम्बन्ध तोड़ने पर कटिबद्ध है।

वास्तव में यदि भारत सरकार ने कोई सक्रिय सहायता अथवा वहां की सरकार के विरुद्ध कोई अभियान चलाया होता, तो फीजी की सरकार को भारतीय दूतावास के विरुद्ध आंख उठाने की हिम्मत न हुई होती। विदेशों में बसे भारतवासियों की ओर से आंखें मूंद रखने वाली हमारी धर्मनिरपेक्ष सरकार का केवल इतना कसूर है कि राष्ट्रमंडल में उसे फिर से शामिल नहीं होने दिया।

अफसोस इस बात का है कि फीजी जैसा पिद्दी-सा देश भारतीयों की आधी आबादी को नचाये जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में यदि अपनी स्थिति के अनुरूप हमारा दबदबा भी हो और हमारी विदेश नीति में हमारी ताकत की अभिव्यक्ति होती हो तो विदेशों में बसे भारतीयों और हमारे राजनयिकों के साथ इस प्रकार का दुर्व्यव्हार नहीं किया जा सकता। परन्तु हमारी विदेश नीति का यह हाल है कि अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी फीजी में रह रहे साढ़े तीन लाख से अधिक भारतवासियों के सामान्य अधिकारों पर अनदेखी हो रही है। और हमारी सरकार गाहे-बगाहे विरोध-पत्र देने के अतिरिक्त और कोई ठोस कदम उठाने की स्थिति में नहीं है।

लगभग दो करोड़ भारतवासी भारत के बाहर भिन्न देशों में बसे हुए हैं और वहां की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में अपना जीवन खपा रहे हैं। ये लोग विश्व राजनीति में भारतीय संस्कृति, सभ्यता और शक्ति के सच्चे सन्देश वाहक हो सकते हैं मगर जब हमारी सरकार की निगाहों में उनकी कोई गरिमा न हो तो दूसरे

देशों से क्या आशा की जा सकती है। भारतवासियों (प्रवासी भारतीयों) के नाम पर हमारे यहाँ केवल यूरोप और अमेरिका में बसे धनपति भारतवासियों का ख्याल रखा जाता है।

भारत सरकार को चाहिए कि सबसे पहले अपनी विदेशनीति पर नए सिरे से पुनर्विचार करें और फिर अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर फीजी में पनप रहे नस्लवाद के विरुद्ध विश्व में जनमत तैयार करने में कोई कसर न छोड़े। इसके साथ ही फीजी में जब तक लोकतान्त्रिक सरकार की स्थापना न हो, जब तक सभी प्रकार के आर्थिक प्रतिबन्ध उस पर लगाये जायें।

—डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 3-6-90)

वेद और व्यास जी।

जो कोई यह कहते हैं कि वेदों को व्यास जी ने इकट्ठे किये, यह बात झूठी है क्योंकि व्यास जी के पिता, प्रपितामह, प्रतिमाह पराशर शक्ति, वशिष्ठ और ब्रह्मा आदि ने भी चारों वेद पढ़े थे। यह बात क्योंकर घट सके।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

साम्प्रदायिकता का भूत

देश की राजधानी दिल्ली में पिछले दिनों साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलन का बड़े विशाल स्तर पर आयोजन किया गया। राष्ट्रीय समाचार-पत्रों ने भी सम्मेलन में पधारे राजनीतिज्ञों और उनके द्वारा अलापे गये रागों को बड़ी खूबसूरती के साथ भारत की निरीह जनता के सम्मुख रखा।

भारत का धर्मनिरपेक्ष स्वरूप इसकी एकता और अखण्डता की गारण्टी है—यह बात देश का हर राजनीतिज्ञ महात्मा गांधी के युग से कहता चला आ रहा है। सत्ताधारी या सत्तापक्ष के सहयोगी राजनीतिज्ञों के अनुसार साम्प्रदायिक केवल वह हिन्दू है, जो गैर हिन्दुओं के सभी अपराधों, उनकी अराष्ट्रीय गतिविधियों, अलगाववाद, आतंकवाद, लूटपाट, धार्मिक-कृत्यों में हस्तक्षेप, प्रलोभनों द्वारा धर्म-परिवर्तनों, विदेशी शक्तियों से साठ-गांठ के विरुद्ध मुंह खोल देता है। अथवा भारतीय संस्कृति, सभ्यता व आदर्शों की दुहाई हो।

दुर्भाग्य भारत वर्ष में रह-रहे हिन्दुओं का ही कहा जा सकता है, कि जो अपने ही देश में अपनी संस्कृति, भाषा, वेषभूषा और अपने आदर्श महापुरुषों को अपनाने के लिए अपनी ही सरकार के आगे गिड़गिड़ाने के लिए मजबूर हैं और इस देश की धर्मनिरपेक्ष सरकार के नेता उन्हें दुत्कार रहे हैं, और धमकी दे रहे हैं कि शंकराचार्य की तरह गिरफ्तार कर लेंगे।

उधर दूसरी ओर कुर्सी के भूखे ये नेतागण अब्दुल्ला बुखारी शहाबुद्दीनों व आजमखानों की चापलूसी कुछ इस तरह कर रहे हैं, मानों यही सब राष्ट्रभक्त हैं, और इन्हीं के सहारे इनकी सरकार और सारा राष्ट्र चल रहा है।

समय परिवर्तनशील है—राजनीति के आकाओं को यह नहीं भूलना चाहिये।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 3-6-90)

विश्व पर्यावरण दिवस

हमारे पर्यावरण पर मंडराते खतरों के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है। इसे बिगाड़ने के मनुष्य के प्रयासों से सावधान रहने की बात भी कई बार कही गई है। लेकिन प्रकृति से मनुष्य की छेड़छाड़ पर जितनी चिन्ता व्यक्त की जाती है, इतनी उसकी रक्षा करने पर कोई ध्यान नहीं देता। ओजोन की छतरी में छेद, ग्लेशियरों का पीछे खिसकना, वनों की अन्धाधुन्ध कटान, हवा में घुलती जहरीली गैसें—ये सभी हमारे सामने गंभीर खतरे हैं। हमारी सरकार, हमारे सरकारी अधिकारी, हमारे सभी उच्च वर्गीय लोग पर्यावरण को बिगाड़ने में लगे हैं। बांध बनाने के विरुद्ध प्रतिदिन प्रदर्शन होते हैं। विकास आवश्यक है। विकास अनिवार्य है। विकास अपरिहार्य है। लेकिन विकास किसी की जान लेकर नहीं किया जा सकता।

सूर्य इस संसार की आत्मा है। सूर्य की किरणें प्राकृतिक महोषधि हैं। परन्तु इसकी गर्मी विषाक्त प्रभाव छोड़े तो क्या होगा ? सूर्य की किरणें कैंसर जैसे रोगों से लड़ने की क्षमता समाप्त कर दे तो क्या होगा ? समुद्र के किनारे बसे शहरों का क्या होगा यदि इसी गति से पहाड़ों की बर्फ पिघल कर समुद्र के स्तर को ऊंचा उठाती रही। ये प्रश्न हमारे सामने हैं। पर इनमें सूर्य का क्या दोष है।

वेदों में सूर्य के महत्त्व को प्रतिपादित करने वाली अनेक ऋचाएं उपलब्ध हैं। आवश्क हैं कि हम ऋचाओं को पढ़ें, जानें, मनन करें तथा तदनुसार आचरण करें।

सूर्यस्ताधि पतिमृत्यो रूद्रायच्छतु रश्मि मिः।

(अथर्ववेद, 5-30-15)

अधिष्ठाता सूर्य अपनी प्रखर किरणों से तुम्हें मृत्यु से बचाए। वेदों की यह उक्ति आध्यात्मिक रूप से तो सत्य है ही, यह वैज्ञानिक रूप से भी सच है।

प्रदूषण अवश्यभावी है। आदि मानव के सामने तो कोई समस्या नहीं होनी चाहिए थी, पर उस समय भी प्रदूषण था। इसलिए मलमूत्र को गढ्ढे में दाबने की बात हमारे ग्रंथों में प्राप्य है। यह प्रदूषण एयर कंडीशनरों, कारखानों की चिमनियों वाहनों आदि ने और भी ज्यादा बढ़ा दिया है। प्रकृति में विद्यमान वृक्षों (औषधियों-वनस्पतियों) में जो विष (प्रदूषण) हो जाए, तो उसे सभी दिव्य जल मिलकर दिव्य शक्तियों द्वारा दूर करें, ऐसी कामना एक वेदमंत्र में प्राप्य है—

यच्छल्मलो भवति यन्नदीषु यदोसधीभ्यः परिजायते विषम् । विश्वेदेवो निरितस्तत्सृवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्सरु :॥

मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह जितना प्रदूषण फैलाता है, उतना अपने कार्य-व्यापारों तथा यज्ञादि के द्वारा दूर भी करें। यज्ञादि प्रदूषण-निवारण के श्रेष्ठतम साधन हैं। यज्ञ जो करेगा, उसकी रुचि जंगलों की रक्षा, पशुपालन, सादगी तथा अहिंसा की ओर ही प्रवृत्त होगी।

इसलिए प्रदूषण रहित विश्व की कल्पना हम यज्ञादि तथा वृक्षारोपन, पशु-पालन, आदि के द्वारा ही कर सकते हैं।

डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 10-6-90)

पाप पुण्य का फल प्रदाता परमात्मा।

जैसे कोई चोर डाकू स्वयं बन्दीघर में जाना नहीं चाहता, दाता उसको अवश्य भेजता है, धर्मात्माओं के सुख की रक्षा करता, भुगाता, डाकू आदि से बचाकर उनको सुख में रखता है, वैसा ही परमात्मा सबको पाप पुण्य के दुःख और सुख रूप फलों को यथावत् भुगाता है।

पंजाब के राज्यपाल

पंजाब व जम्मू कश्मीर के राज्यपालों की जो दुर्गति पिछले कुछ वर्षों से हो रही है, उससे यह माना जा रहा था, कि कोई भी स्वाभिमानी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति पंजाब के राज्यपाल के पद पर आना नहीं चाहता।

पिछले दिनों पंजाब के राज्यपाल श्री निर्मल कुमार मुखर्जी को हटाने का संकेत मिलते ही, श्री मुखर्जी ने अपना त्यागपत्र सरकार को भेज दिया था, परन्तु तब तक सरकार उनके उत्तराधिकारी का चयन नहीं कर पायी थी। अनेक नाम उभरे जिनमें यशवन्तसिंह, पी. के. कौल, रवीन्द्र वर्मा, जे. एम. कुरेशी, एन. वसंत, श्याम सुन्दर महापात्र पूर्व महालेखाकार श्री टी. एन. चतुर्वेदी और श्री बी. जी. देशमुख के नाम राजनैतिक गलियारों तथा समाचार-पत्रों में खूब उछाले गये।

अंततोगत्वा राज्यपाल के सदस्य राजनीति के पुराने खिलाड़ी, जनता दल के वरिष्ठ नेता श्री वीरेन्द्र वर्मा को राज्यपाल पद पर नियुक्ति की घोषणा से पंजाब के राज्यपाल की खोज का कार्य पूरा हो गया है यद्यपि पिछले डेढ़ दो महीने से श्री वीरेन्द्र वर्मा के नाम की चर्चा थी, परन्तु तब वे वहाँ जाने के अनिच्छुक थे। परन्तु अब उनका कहना है कि—"राष्ट्रीय हित में मैंने राजनैतिक छोड़कर यह महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी स्वीकार की है।"

राज्यपाल नियुक्त किये जाने के बाद श्री वर्मा ने अनौपचारिक वार्ता में बताया कि वे पंजाब में जनसेवक की भूमिका निभायेंगे, राजनीतिज्ञ की नहीं। वे राजनीति के क्षेत्र से दूर रहकर पंजाब के लोगों की सेवा करेंगे। उनका कहना है कि वे पंजाब में सभी वर्गों और समुदायों के लोगों का विश्वास जीतने का प्रयास करेंगे। हिन्दू-सिख एकता के लिए रचनात्मक पग उठायेंगे। राजनिवास में शानशौकत की जिन्दगी के बजाय गांवों में जायेंगे और वहां के लोगों की दिक्कतों को समझकर आवश्यक कदम उठायेंगे।

भारतीय-संस्कृति के कट्टर समर्थक श्री वीरेन्द्र वर्मा पश्चिमी उत्तर प्रदेश की ऐतिहासिक नगरी शामली के एक विख्यात् किसान परिवार जो महर्षि दयानन्द सरस्वती के मिशन आर्यसमाज की सेवाओं के लिए कई पीढ़ियों से समर्पित रहा है, से सम्बन्धित है। इन पंक्तियों का लेखक जब श्री वर्मा जी से उनके शयन कक्ष में मिला, तो कक्ष में वर्मा जी की चारपायी के सिरहाने की ओर दीवार पर महर्षि दयानन्द सरस्वती का एक बड़ा सा चित्र, शीशे के फ्रेम में जड़ा हुआ लगा था। वर्मा जी ने मेरी जिज्ञासा को भांप कर कहा कि आप हमारे पूरे परिवार और विशेष-

कर हमारे ताऊजी स्व० चौ० मामराज सिंह और पिताजी स्व० श्री० रघुवीर सिंह द्वारा आर्यसमाज के लिए की गई सेवाओं से भली भांति परिचित हैं। मैं यद्यपि पचास वर्षों से सक्रिय राजनीति में रहा हूं। फिर भी महर्षि स्वामी दयान्द सरस्वती के हिन्दू जाति पर किये गये उपकारों को सदैव याद रखने के लिए उनका यह चित्र अपने साथ रखता हूँ।

श्री वर्मा जी ने कहा उन्होंने अपने राजनैतिक जीवन में कुर्बानी देकर इस भारी जिम्मेवारी को स्वीकार किया है। परन्तु वे भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीय एकता और अखण्डता से किसी प्रकार का समझौता नहीं करेंगे।

आशा है, वर्मा जी पंजाब के हिंसामय वातावरण को समाप्त कर वहाँ प्रेम और भाई-चारे का वातावरण तैयार करने में सफल होंगे।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 17-6-90)

अब तक अर्यावर्त देश से शिक्षा नहीं गई थी तबतक मिश्र यूनान और यूरोप देश आदिस्थ मनुष्यों में कुछ भी विद्या नहीं हुई थी, और इंगलेंड के कुलुम्बस आदि पुरुष अमेरिका में जबतक नहीं गये थे तब तक वे भी सहस्रों, लाखों करोड़ों वर्षों से मूर्ख अर्थात् विद्याहीन थे, पुनः सुशिक्षा के पाने से विद्वान हो गये हैं, वैसे ही परमात्मा से सृष्टि की आदि में विद्या शिक्षा की प्राप्ति से उत्तरोत्तर काल में विद्वान् होते आये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

इन सैट-एक डी-सफल प्रक्षेपण

भारतीय वैज्ञानिकों की ऐतिहासिक सफलता का प्रतीक

भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन और फोर्ड एरोस्पेस कारपोरेशन के वैज्ञानिकों के संयुक्त दल ने सैट-एक डी को सफलतापूर्वक भू-स्थैतिक कक्ष में पहुंचा दिया। वैज्ञानिकों ने हसन में मुख्य नियंत्रण सुविधा से उपग्रह के सौर आवरण को खोल दिया। इस सम्पूर्ण कार्य में केवल छः घन्टे का समय लगा। इनसैट-एक डी के पाँचों सौर पैनलों को खोलने में भी सफलता मिल गयी है। यह प्रसन्नता की बात है कि उपग्रह की सभी कार्य प्रणालियाँ सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं। उपग्रह को इस प्रकार स्थित किया गया है कि सौर पैनल सूर्य की ओर रहे जिससे की पूर्ण सौर ऊर्जा लगभग एक किलोवाट, नियमित रूप से प्राप्त की जा सके।

भारतीय संचार उपग्रह इनसैट एक-डी को 12 जून को पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया गया था। इस उपग्रह को अमेरिका में फ्लोरिड़ा स्थिति केप केनेवरल से एक डेल्टा राकेट के द्वारा छोड़ा गया था। यह उपग्रह पृथ्वी से लगभग सवा दो सौ किलोमीटर की ऊँचाई पर पृथ्वी की कक्षा में स्थापित है। इनसैट एक शृंखला का यह चौथा उपग्रह जुलाई के पहले सप्ताह में पूरी तरह कार्य करना शुरू कर देगा।

इस इनसेट के सफल प्रक्षेपण से देश की वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपलब्धियों के प्रति राष्ट्रीय जागृति एवं गौरव की भावना में वृद्धि हुई है। इसकी आवश्यकता का आकलन इस बात से किया जा सकता है कि दूर संचार और मौसम के वैज्ञानिक केवल इसलिए काम करते रहे क्योंकि इनसैट 1—'बी' अपनी आयु पूरी करने के बाद काम कर रहा था। इनसैट एक-ए और एक-सी तो काल बाह्य हो ही चुके थे और यदि 'एक-बी' काम न कर रहा हो तो भारी मूल्य चुकाकर हमें दूसरे देशों से सूचनाएं लेनी पड़ती। तेरह साल पहले आन्ध्र में तूफान आया था। उस समय दस हजार लोग मारे गए थे। उस समय तूफान की पूर्व सूचना पाने का हमारे पास कोई साधन न था। अब की बार तूफान आया। वैज्ञानिक तकनीकी उपलब्धियों के कारण हमें इसकी पूर्व जानकारी थी तो अबकी बार लाखों लोगों को सुरक्षित स्थानों पर पहले पहुँचा दिया गया।

यह इनसैट वन-डी-जहाजों की उड़ानों और खेती की समृद्धि के लिए मौसम सम्बन्धी जानकारी भेजेगा, करोड़ों भारतीयों को एक साथ दूरदर्शन के कार्यक्रम दिखाएगा तथा सुदूर एवं भीतरी इलाकों को परस्पर दूरसंचार से जोड़े रखेगा।

यह हमारे वैज्ञानिकों की गौरव पूर्ण उपलब्धि है जिससे राष्ट्र की समुन्नति परिलक्षित होती है।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 24-6-90)

जैसे वर्तमान समय में हम लोग अध्यापकों से पढ़ ही के विद्वान् होते हैं। वैसे परमेश्वर सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न हुए अग्नि आदि ऋषियों का गुरु अर्थात् पढ़ाने हारा है। क्योंकि जैसे जीव सुषुप्ति और प्रलय में ज्ञान रहित हो जाते हैं वैसा परमेश्वर नहीं होता। उसका ज्ञान नित्य हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

जो परमात्मा वेदों का प्रकाश न करे तो कोई कुछ भी न बना सके। इसलिये वेद परमेश्वरोक्त हैं। इन्हीं के अनुसार सब लोगों को चलना चाहिये, और जो कोई किसी से पूछे कि तुम्हारा क्या मत है तो यही उत्तर देना कि हमारा मत वेद अर्थात् जो कुछ वेदों में कहा है। हम उनको मानते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

फिजी और भारत

भारत का फिजी के लिए चिन्तित होना स्वाभाविक ही है । फिजी में भारतीय मूल के 48 % लोग हैं, मलयेशियन मूल के लोग 46% है, परन्तु वहाँ की संसद के 70 स्थानों में से मलयेशियन मूल के लोगों को 38 तथा भारतीय मूल के लोगों को केवल 27 सीटें दिए जाने की बात कही जाए तो इसका जो परिणाम होना चाहिए, वही होगा । भारत की प्रतिक्रिया स्वाभाविक ही थी । । नस्ल भेद के आधार पर इस प्रकार के पक्षपात को भारत ने स्वीकार नहीं किया । भारत ने दृढ़ता दिखाई और फिजी को राष्ट्रमण्डल में पुनः प्रवेश नहीं मिला । भारत का यह स्पष्ट मत कि अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर फिजी की रंगभेदी नीति का पर्दाफाश किया जाएगा, स्वागत योग्य है ! इस घोषणा से फिजी सरकार का चिढ़ना भी स्वाभाविक है । फिजी सरकार ने भारतीय दूतावास को बन्द कर दिया । इस निर्णय के विरुद्ध सम्पूर्ण फिजी में हड़ताल रही । बाजार, स्कूल, कालेज, व्यावसायिक संस्थान, प्रतिष्ठान बन्द रहे । भारत सरकार ने फिजी की सशक्त भर्त्सना की तथा प्रजातन्त्र की पुर्नस्थापना के लिए तथा रंगभेद नीति के विरुद्ध अपना समर्थन देने के निश्चय को दुहराया ।

भारत ने सदा ही रंगभेद नीति का विरोध किया है । अफ्रीका, फिलिस्तीन, नामीबिया, दक्षिण अफ्रीका में भारत की नीति से इसका स्पष्ट परिचय मिलता है । बावाण्ड्रा की सरकार को भारतीय मूल के लोगों ने चुना था । उसे अपदस्थ कर्नल राबुका ने किया । यदि बावाण्ड्रा अपनी निर्वासित सरकार बताते हैं तो भारत को चाहिए कि इसे मान्यता दे तथा अन्य देशों से भी इसे मान्यता दिलाए । भारत के बुद्धिजीवियों का भी कर्त्तव्य है कि वे खुलकर अपनी बात कहें । जो भारतीय दूसरे देशों में रहते हैं, वे भी इसके महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं । इन्हें चाहिए कि वे संयुक्त राष्ट्र संघ, राष्ट्र मंडल एवं मानव अधिकार आयोग तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के समक्ष प्रदर्शन करके, फिजी सरकार की रंगभेद नीति के विरुद्ध अपनी आवाज उठाए । भारत वर्ष में आर्यसमाज प्रारम्भ से ही इस दिशा में प्रयत्नशील है । सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री स्वामी आनन्दबोध सरस्वती प्रत्येक स्तर पर अपनी आवाज उठाते रहे हैं । वर्तमान सरकार को भी बाध्य किया जाना चाहिए कि वह विदेशों में बसे भारतीय मूल के लोगों की रक्षा करें । यदि आज चूक गए तो कल यही स्थिति मोरीशस, सुरीनाम तथा अन्य देशों में भी हो सकती है । आज फिजी में भारतीयों को ईसाई बनाने पर जोर दिया जा रहा है, कल यह अन्य देशों में भी होगा । आर्यसमाजों का विस्तार इन सभी देशों में है । वहाँ पर भी आर्यसमाजों को इस दिशा में अपनी आवाज बुलन्द करनी चाहिए ।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश 1-7-90)

विराट दृष्टि अपनायें

संस्कृत साहित्य में सीख दी गई है कि कुल का हित उपस्थित होने पर व्यक्ति को अपने निजी स्वार्थ त्याग देने चाहिए। जब ग्राम या नगर का व्यापक हित उपस्थिति हो तो उसके सम्मुख एक परिवार या अनेक परिवारों को अपने स्वार्थों की तिलांजलि दे देनी चाहिए। जब एक प्रदेश का प्रश्न हो तो एक या अनेक गांवों के संकुचित हितों की उपेक्षा कर देनी चाहिए। इसी तरह जब सम्पूर्ण राष्ट्र के वर्तमान या भविष्य का प्रश्न उपस्थित हो तो एक प्रदेश या अनेक प्रदेशों के हितों को गौण स्थान देना चाहिए। इसी प्रकार जब सम्पूर्ण मानवता का प्रश्न हो तो एक देश के संकुचित स्वार्थ को महत्ता नहीं दी जा सकती।

इस समय देश के सम्मुख अनेक प्रश्न हैं, अनेक समस्याएँ हैं। छोटे-छोटे दल एवं प्रदेश अपने पृथक अस्तित्व एवं स्वार्थ के लिए बड़े हितों की निरन्तर उपेक्षा कर रहे हैं। देश के पूर्वोत्तर, पश्चिमोत्तर एवं दक्षिणी भागों में अलगाववादी शक्तियाँ सिर उठा रही हैं। आज विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में जो किताबी शिक्षा दी जा रही है, वह अर्थकारी विद्या है। उसका एक मात्र लक्ष्य पैसा है। सारे दल, सब प्रदेश भोग, सुख एवं स्वार्थ पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हैं। हरेक को अपनी-अपनी पड़ी है, किसी को देश-धर्म एवं मानवता की पर्वाह नहीं है। स्थिति बड़ी भयावह है।

स्वभावतः जिज्ञासा होती है कि स्थिति के सुधार के लिए क्या किया जाए? समस्याओं के समाधान एवं स्थिति के सुधार के कुछ तात्कालिक एवं अस्थायी उपाय हो सकते हैं। देश में सुदृढ़ केन्द्रीय शासन की प्रतिष्ठा से अलगाववादी प्रवृत्तियों का अन्त हो सकता है। पिछले कुछ वर्षों में केन्द्र में शासन बदलते रहने से केन्द्रीय सत्ता उतनी सुदृढ़ नहीं हैं, जितनी कि वह आज से पन्द्रह वर्ष पहले थी। जल्दी या देर में केन्द्रीय शासन सुदृढ़ होगा, परन्तु उससे भी बड़ा प्रश्न भावात्मक एकता और विराट या बड़ी इकाई के लिए छोटी इकाई के संकुचित हितों के त्याग का है। इस तरह की भावना एवं वृत्ति उसी स्थिति में जाग्रत हो सकती है जब माता की घुट्टी से छोटे-बड़े शिक्षणालयों में व्यक्ति, परिवार, गांव, प्रदेश के संकुचित हितों के स्थान पर देश, मातृभूमि एवं मानवता के प्रति उत्सर्ग की भावना ओत-प्रोत की जा सके। यह कोई छोटा कार्य नहीं है। यह कार्य आर्यसमाज जैसी लोकोपकारी, राष्ट्र एवं समाज में परिवर्तन की अलख जगाने वाली संस्थाओं द्वारा ही किया जा सकता है। पिछली शताब्दी में महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनके भक्तों ने संकुचित स्वार्थों के स्थान

पर स्वदेश, स्वधर्म एवं मानव जाति के कल्याण का बीड़ा उठाया था। वही काम अब आर्यसमाज को अग्रसर करना होगा।

इस समय सम्पूर्ण मानवता एवं पृथ्वी तल के संहार का प्रश्न भी मुंह बाए खड़ा है। पूँजीवादी और साम्यवादी राष्ट्र आधुनिकतम शस्त्रास्त्रों के अनन्त भण्डार बढ़ाते जा रहे हैं। उनकी एक आकस्मिक टक्कर से पृथ्वी पर सर्वनाश की विभीषिका ताण्डव-नृत्य कर सकती है। आधुनिक मानव अपनी संहारक शक्तियों से कब भस्मा-सुर-सरीखा स्वयं अपने को नष्ट कर डाले, यह कहा नहीं जा सकता। आज की भोगवादी पश्चिमी संस्कृति एवं सभ्यता विनाश के कगार पर अवस्थित है। वह स्वतः भस्म न हो जाए, उसके जो नवीन वैज्ञानिक प्रगति के तत्त्व हैं, वे सुरक्षित हों, उनके साथ पूर्व अध्यात्म चिन्तन एवं दार्शनिक तत्त्वों का सार भाग समन्वित हो सके, इसके लिए आज का मानव को "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः" त्याग एवं परोपकार पूर्वक जीवन व्यतीत करने का व्रत संकल्प करना होगा।

आज दिल्ली में लघुभारत समाया हुआ है। यह लघु भारत विशाल भारत विराट मानवता के कल्याण के लिये प्रवृत्त हो सके, इसके लिए प्रारम्भ से ही आज के बच्चों, बाल एवं युवा वर्ग में नई प्रेरणा एवं सन्देश देना होगा। आर्यसमाज का इस सम्बन्ध में विशेष दायित्व है। समाज के नेतृवृन्द, लेखकों एवं शिक्षकों को पुरानी एवं नई पीढ़ी में संकुचित वृत्ति छोड़कर विराट दृष्टि अपनाने और उसे कार्यान्वित करने की प्रेरणा देनी चाहिये, तभी स्थिति का स्थायी समाधान सम्भव है।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 8-7-90)

ऋषि प्रणीत ग्रन्थ ही पढ़ना।

ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को इसलिये पढ़ना चाहिये कि वे बड़े विद्वान् सब शस्त्र-वित् और धर्मात्मा थे और अनृषि अर्थात् जो अल्प शास्त्र पढ़े हैं और जिनका आत्मा पक्षपात सहित है उनके बनाये हुए ग्रन्थ भी वैसे ही हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

हिन्दू राष्ट्र नेपाल

चिन्ता का विषय है कि नेपाल के बनने वाले नए संविधान में नेपाल को हिन्दू अधिराज्य न रखकर धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित करवाने के प्रयत्न चल रहे हैं, इस संसार में नेपाल ही एक मात्र हिन्दू राज्य है, जबकि ईसाई तथा मुस्लिम बहुसंख्या वाले अनेक राष्ट्र "ईसाई राष्ट्र" अथवा मुस्लिम राष्ट्र" हैं अथवा ईसाईयत या इस्लाम उनका राष्ट्र धर्म माना जाता है।

हिन्दू स्वभाव से ही सर्व-धर्म-समभाव की भावना रखते हैं और किसी अन्य धर्मावलम्बी के प्रति भेदभाव नहीं बरतते। अतः हिन्दू राष्ट्र होते हुए भी नेपाल में ईसाईयों या मुसलमानों को अपने धर्म तथा विश्वास के अनुसार धार्मिककृत्य करने अथवा अपनी धार्मिक मान्यताओं का पालन करने की स्वतन्त्रता रही है। इसके विपरित अनेक मुस्लिम देशों में हिन्दुओं के प्रति भेदभाव बरता जाता है। वहां हिन्दुओं को मन्दिर बनाने, धार्मिक साहित्य मंगवाने, सार्वजनिक स्थानों पर या घरों के अन्दर भी पूजा-पाठ करने या धार्मिक-कृत्य करने की भी अनुमति नहीं होती। कुछ मुस्लिम देशों में हिन्दू लोग अपने मृत सम्बन्धियों का दाह संस्कार भी नहीं कर सकते। आश्चर्य की बात है कि जो व्यक्ति नेपाल के संविधान में परिवर्तन लाकर उसे धर्म-निरपेक्ष बनाने की बातें करते हैं, उन्होंने मुस्लिम देशों में हिन्दुओं के विरुद्ध होने वाले भेदभाव के बारे में कभी कोई आवाज नहीं उठाई है।

इससे अधिक भयावह स्थिति क्या होगी। कि संयुक्त राष्ट्र और अमरीका नेपाल पर आवश्यक दवाव डालकर यह प्रयत्न कर रहे हैं कि वहां धर्मान्तरण के लिए पूरी छूट दी जाए। नेपाल में चिरकाल से धर्मान्तरण पर प्रतिबन्ध है। इस प्रतिबन्ध को उठाने के लिए ईसाईयों द्वारा प्रयत्न किया जा रहा है। इस प्रतिबन्ध के होते हुए भी, ईसाईयों की जो जनसंख्या सन् 1950 में 10 थी वह बढ़कर अब 40 हजार से अधिक हो चुकी है। यदि धर्मान्तरण पर से प्रतिबन्ध हटा दिया गया तो ईसाई मिशनरी गरीब तथा भोली-भाली जनता को विभिन्न प्रलोभन देकर ईसाई बनाने का काम बहुत बड़े पैमाने पर करने लगेंगे। इससे नेपाल को अपनी अखण्डता बनाए रखना कठिन हो जाएगा और वहां उसी प्रकार की विषम परिस्थितियां पैदा हो जाएंगी। जो भारत के उन भागों में पैदा हुई हैं, जहां व्यापक रूप में धर्मान्तरण हुए हैं। अतः यह नेपाल के अपने हित में होगा कि वह धर्मान्तरण पर चिरकाल से चले आ रहे प्रतिबन्ध को हटाने की कोई बात स्वीकार न करें।

गौवंश का कृषि आधारित देशों के लिए बड़ा महत्त्व है। संसार के समस्त हिन्दू गऊ का सम्मान धार्मिक आधार पर भी करते हैं। नेपाल में गऊ हत्या पर बहुत पहले से प्रतिबंध रहा है तथा गऊ वंश की हत्या करने वाले अपराधी को कठोर दण्ड देने की व्यवस्था रही। इस प्रतिबंध को हटवाने के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे हैं। वे प्रयत्न भी किसी भांति उचित नहीं हैं।

नेपाल की जनता एवं सरकार को चाहिए कि उपयुक्त विषयों में नेपाल की जो मान्यताएं रही हैं, उन पर दृढ़ रहे। जनता की इच्छाओं के अनुसार वहाँ जिस प्रकार का भी संविधान बनाया जाए, उसमें नेपाल को "हिन्दू राष्ट्र" बने रहना चाहिए। तथा उसमें धर्मान्तरण तथा गौवंश की हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध जारी रहना चाहिए।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, (15-7-90)

आर्यों को वेद ही मानना।

वेद अर्थात् जो जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है, उसे उसका यथावत् करना छोड़ना मानते हैं। जिस लिये वेद हमको मान्य है इसलिये हमारा मत वेद है। ऐसा ही मानकर सब मनुष्यों को विशेष आर्यों को एक मत होकर रहना चाहिये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

पर्यावरण और ओजोन परत

वायुमण्डल में खतरनाक गैसों की मात्रा बढ़ने से वायु मण्डलीय कवच ओजोन परत क्षत हो गयी है। इससे वातावरण में गर्मी बढ़ गयी है और ऋतुओं का क्रम बदल गया है गर्मी के कारण बर्फ पिघल रही है। पानी को नदियों व नहरों के द्वारा नियन्त्रण में नहीं रखा जा रहा है। इससे समुद्र की सतह भी ऊपर उठ रही है। ओजोन की परत को क्षति पहुंचाने वाली गैसें मुख्यत: क्लोरो-फ्लोरो कार्बन गैस और ग्रीन हाउस गैस हैं। भारत के ऊपर भी दूसरा दुष्प्र भाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यदि समय रहते समुचित प्रबन्ध न किए गए तो काफी कठिनाई आएगी। पर्यावरण का सबसे बड़ा दुश्मन पेट है जो प्राकृतिक पर्यावरण के साथ-साथ सामाजिक पर्यावरण को भी प्रदूषित करता है। ओजोन की परत को जो क्षति पहुंची है। उसके लिए भारत जिम्मेदार नहीं, बल्कि विश्व के उन्नत देश इसके लिए जिम्मेदार हैं। इस जिम्मेदारी में भारत की कुछ हिस्सेदारी हो सकती है। मांट्रियल प्रोटोकोल में भारत सम्मिलित हो गया है अब संभव है कि इस दिशा में कुछ सही किया जा सके। भारत इस मांट्रियल संधि पर आंख मूंदकर हस्ताक्षर तो नहीं करेगा। ओजोन की छतरी को अमीर देशों ने ज्यादा नुकसान पहुंचाया है वहीं पर ज्यादा प्रशीतन उद्योग हैं। इसका खामीयाजा भी उन्हें ही ज्यादा भुगतना चाहिए। परन्तु जो नुकसान होगा वह भारत में ही समान रूप से होगा। यदि आज प्रशीतन उद्योग को भारत बन्द कर दे अथवा चीन बन्द कर दे तो जो क्षति होगी उसे कौन पूरा करेगा। यह भरपाई अमीर देशों को करनी चाहिए। यह सन्तोष की बात है कि लन्दन की बैठक में अमीर देशों ने भारत और चीन के तर्कों को समझा है। और सोलह करोड़ डालर की प्रारम्भिक राशि से एक अन्तर्राष्ट्रीय कोष बनाने का निर्णय लिया है जिसमें से चार-चार करोड़ भारत और चीन को मिलेगा।

भारत की पर्यावरण राज्य मन्त्री श्रीमती मेनका गांधी ने अपने पक्ष को पर्याप्त तार्किक ढंग से रखा। यह सन्तोष की बात है कि वे इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। रासायनिक हथियारों पर रोक भी इसी से जुड़ा प्रश्न है। श्रीमती गांधी को चाहिए कि भारतीय संस्कृति और वैदिक दर्शन के अध्येताओं से भी पर्यावरण प्रदूषण समाधान हेतु समितियाँ आमन्त्रित करें। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में प्रदूषण रोकने की विधियां उपलब्ध हैं। जो मनुष्य जीवन को नियमित एवं नियन्त्रित करती हैं। भारतीय आयुर्विज्ञान तो प्रत्येक को गुणकारी एवं लाभकारी मानता है। सम्भव है कि सरकारी प्रयासों से ही यह पर्यावरण की समस्या हल हो सके।

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 15-7-90)

हमारी शतुर्मुर्ग सरकार

पिछले दिनों राष्ट्रीय समाचार पत्रों में सुप्रसिद्ध पत्रकार डा० कैलाश चन्द के वक्तव्य प्रकाशित हुए थे। इसमें उन्होंने लिखा था कि भारत के प्रधान मंत्री श्री वी० पी० सिंह ने जामा मस्जिद के पुनरुद्धार के लिए 50 लाख रुपये दिए। पता लगा है कि वहाँ पर एक सुरंग है जो जामा मसजिद से लाल किला तक जाती है। यह सुरंग कश्मीरी आतंकवादियों के लिए खोजी जा रही है। इसी कार्य के लिए शाही इमाम को अरब देशों ने भी सहायता की है। यह प्रश्न विचारणीय है कि क्या सरकारी अनुदान का उपयोग साम्प्रदायिकता के संवर्धन के लिए तथा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को तोड़ने के लिए किया जाना चाहिए। यह सुनिश्चित है कि भारत सरकार पर शाही इमाम का प्रभाव है। प्रभाव होना भी कोई बुरी बात नहीं है। परन्तु प्रभाव का उपयोग-प्रयोग मानव कल्याण के लिए होना चाहिए, न कि साम्प्रदायिक, जातीय एवं क्षेत्रीय प्रान्तीय विद्वेष फैलाने के लिए। डा० कैलाशचन्द्र ने श्री मुफ्ती मोहम्मद सईद की राष्ट्र निष्ठा पर भी प्रश्न चिन्ह लगाया है। आज इस बात की आवश्यकता है कि हम अपने नेताओं की धर्म निरपेक्षता का सही विश्लेषण करें। कश्मीर में हिन्दुओं के साथ जो सुलूक हो रहा है, उसको शक्ति देने वाली नियामक हस्तियाँ कहां से उन गतिविधियों को नियंत्रित कर रही हैं, यह भी विचारणीय प्रश्न है। जो धमकियाँ आज कश्मीर में मिल रही हैं, वह धमकियाँ पिछले कई वर्षों से पंजाब से मिल रही हैं। हमारी सरकार शुतुर्मुर्ग की तरह आँखें बन्द करके, रेत में चोंच दबाए सोच रही है कि हमें कोई नहीं देख रहा है। भारत सरकार फिजी के लिए, नेपाल के लिए, दक्षिण अफ्रिका के लिए, कुवैत के लिए, ईरान के लिए तो आँसू बहा सकती है, पर उसे दिल्ली में आए विस्थापित हिन्दू, पंजाबी कश्मीरी दिखाई नहीं दे रहे हैं, उसे श्रीलंका के तमिल दिखाई नहीं दे रहे हैं।

मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 22-7-90)

हरिजन समस्या

हरि अनन्त, हरि कथा अनन्त। वास्तव में, हमारे देश में जातियता प्रान्तीयता धार्मिक असहिष्णुता, साम्प्रदायिकता संकीर्णता की समस्याएं शाश्वत हैं। जब कभी सवर्णों के अधिकारों पर चोट लगी, उन्हें हरिजनों को त्रास देने में तत्पर पाया गया! यहां तक कि सरकारी कर्मचारी भी इसमें पीछे नहीं रहे। अन्त्यजा वर्णोत्पन्नाता को धर्मान्तरण भी सुधार नहीं पाया। अन्य धर्मों में उन्हीं को सम्मान मिला, जो उच्च वर्ण में जन्मे थे। यद्यपि हमारे सभी धार्मिक ग्रन्थ गुण कर्म स्वाभावानुसार विभाजन की बात कहते हैं। पर ये बातें मात्र शाब्दिक रह गयी हैं। व्यवहार में कुछ और है।

पिछले दिनों दिल्ली के नबीकरीम दुलारे के तोताराम जाटव के बेटे की बारात हरियाणा के कालड़ावास गांव में गयी थी। दूल्हा के घोड़ी पर चढ़ने का गांव के ऊंची जाति के लोगों ने विरोध किया। बारातियों के न मानने पर उन्हें मारा और पीटा भी। पूरी घटना का विवरण तो राष्ट्रीय समाचार पत्रों में छप चुका है। आवश्यकता यह जानने की है कि भारत को स्वाधीन हुए चालीस से अधिक वर्ष हो गए। जब हम स्वाधीनता की लड़ाई लड़ रहे थे, उस समय हमारा यह नारा था कि स्वतंत्र भारत में सबको समानता का अधिकार दिया जाएगा। ये सब नारे आज थोथे (यूटोपिया) सिद्ध हो रहे हैं। क्या किसी को समानता का अधिकार मिल पाया। जार्ज ऑरवेल के उपन्यास 'दि एनीमल फार्म' में इस नव समाजवादी व्यवस्था का बड़ा ही अच्छा चित्रण है। एक जमींदार से एक कृषि फार्म को पशुओं ने छीन लिया। कहिए की प्रशासन अभिजात्य मनुष्य से हटकर सामान्य पशु के हाथ में आ गया। वहां पर कई नियम सिद्धान्त बनाए गए। उनमें एक सिद्धान्त था—सब पशु समान हैं। व्यवस्था बहुत अच्छी चल निकली। कुछ दिन बाद, जिन पशुओं के हाथ में प्रशासन था, उन्होंने सोचा कि वे तो विशिष्ट हैं। उन्हें विशेष सुविधाएं मिलनी चाहिए। उस पशु-संसद में उन्होंने अपनी सुविधाएं बढ़ाली और ऊपर दिए गए नारे को इस प्रकार संशोधित कर दिया—'सब पशु समान हैं। पर कुछ पशु दूसरों की अपेक्षा ज्यादा समान हैं।

इस कथा का तात्पर्य स्पष्ट है कि राजकीय व्यवस्था बदल जाने के बाद भी सामन्तीय व्यवस्था में कोई अन्तर नहीं आता। हरिजनों को अधिकार देने की बात केवल मंच पर की जाती है। हरिजन नेता भी मंचीय अवधारणा को भुनाने में लगे हैं। वे समान अधिकार की बात करते हैं, पर पंचतारा होटलों में रहते हैं और मर्सिड़ीज में घूमते हैं, तथा विदेशी हवाई यात्राएं करते हैं।

आज भी उच्च जाति में जन्में लोगों का ही प्रत्येक संगठन में प्रभुत्व है। वह संगठन चाहे सरकारी हो या गैर सरकारी। सरकार ने हरिजनों को जो पदोन्नति की सुविधा दी है, उससे असंतोष बढ़ा है। और साथ ही बढ़ी है समय पाते ही विद्वेष को मूर्त्त रूप देने की भावना। बारात पर अत्याचार संभवतः ऐसी ही किसी मानसिक विकृति का प्रदर्शन है।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग के चेयरमैन और सांसद श्री रामधन इस घटना से बहुत दुःखी हैं और वे इसकी सी-बी आई जाँच की मांग कर रहे हैं। यह माँग उन्हें करनी भी चाहिए। इस घिनोनी घटना के पीछे जो सामाजिक घिनौनापन है उसके लिए चिन्ता करना स्वाभाविक है। इसके निदान का प्रयास भी स्वाभाविक हैं। पर क्या वे इस दिशा में वास्तव में प्रयत्नशील हैं, अथवा केवल मंचों से बड़ी-बड़ी राजनैतिक बातें कह कर ही, वे अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं। पिछले दिनों आगरा में भी तो जाटवों के साथ ऐसा ही अन्याय हुआ है। वहाँ के सामाजिक राजनैतिक प्रतिनिधि क्यों चुप हैं? क्या इसके पीछे की परिस्थितियों का विश्लेषण किसी ने किया है। वहाँ के हरिजनों ने घोषणा कर दी कि वे सब मुसलमान बन जाएंगे। क्या मुसलमान बनकर उनकी समस्या सुलझ जाएगी। वहाँ पर भी तो सैयद हैं। क्या वे सबको समानता का अधिकार देंगे। एक और नई समस्या जन्म ले रही है। आरक्षण का विरोध देश के अलग-अलग कोनों से आना प्रारम्भ हो गया आरक्षण की व्यवस्था इसलिए की गई थी कि जो सदियों से दलित रहे हैं, वे समानता प्राप्त कर लें। पर जब वे समानता माँगते हैं तो उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। यह कैसा न्याय है कि मारें भी और रोने न दें।

वैदिक सामाजिक व्यवस्था यह है कि गुण कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण व्यवस्था निर्धारित की जाए। मनुस्मृति में भी इस अवधारण को मान्यता मिली है—'शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्। क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च"। (मनु 10-65) अर्थात शूद्र कुल में उत्पन्न व्यक्ति गुण कर्म के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य हो सकता है।

अब आवश्यकता इस बात की है, जो भी घिनौनापन है, उसे बदल दिया जाए सभी को समानता दी जाए, सारा समाज शोषण मुक्त हो। हमारा कर्म मानवता मय हो। सभी लोग निडर होकर आपस में मिलकर चलें—संगच्छध्वम् संवदध्वम् संवोमनांसि जानताम्।'

—डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 22-7-90)

नारी उत्पीड़न

दूरदर्शन पर प्रतिदिन दिखाया जाता है कि बेटे को बेटी की अपेक्षा ज्यादा सुविधाएं दी जाती हैं। माँ को वह भोजन नहीं दिया जाता, जो अन्य सदस्यों को। सास बेटे की ससुराल से आए लड्डू अपनी बहू को नहीं देती क्योंकि उसने बेटा नहीं बल्कि बेटी पैदा की है। यह भेद-भाव कब तक चलता रहेगा। हम तो यह उद्घोष किया करते थे—यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता'। कहां गया हमारा यह उद्घोष। सब समाप्त हो गया। सभी को बेटा चाहिए। दी स्वोर्ड आफ टीपू सुलतान के कई धारावाहिक में पुत्रेष्णा इतनी बलवती है कि वह हैदर को दूसरा विवाह करने के लिए विवश कर देती है। 42 वर्षीय पिता ने अपनी दो अबोध बच्चियों की मिट्टी का तेल डालकर हत्या कर दी। कानपुर की तीन बहनों ने फांसी लगाकर आत्म हत्या कर ली। शराब के नशे में चूर पिता ने अपनी पुत्री के साथ बलात्कार किया। लूत की दोनों बेटियों ने अपने पिता को शराब पिलाई थी। क्या वही अन्तिम व्यवस्था पुनः इस संसार में नहीं लौट रही है। बहुराष्ट्रीय कम्पनी के एक अधिकारी ने अपनी पांच वर्षीय बेटी को चंडीगढ़ के एक पार्क में छोड़ दिया था। ये सारे समाचार हमारे राष्ट्रीय समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए हैं। ये हमें क्या बताते हैं। यहीं की बेटियों को आज भी सम्मान जनक स्थान अपने परिवार में नहीं मिलता।

दक्षेक (सार्क) दक्षिण ऐशियाई क्षेत्रीय सहयोग परिषद् ने इस वर्ष को बालिका वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय लिया है। भारत भी इस परिषद् का प्रभावी सदस्य है। भारत में लड़कियों की मृत्यु दर अधिक है। यहाँ की जनसंख्या का अनुपात 1000:933 है। कई स्थानों पर लड़कियों को जन्म लेते ही मार दिया जाता है इसका प्रमुख कारण यह है कि बालिका को दूसरी श्रेणी का नागरिक समझा जाता है। उसे वे सुविधाएं नहीं मिलतीं जो लड़के को मिलती हैं।

पिछले दिनों दिल्ली के सफदर जंग अस्पताल में एक सर्वेक्षण किया गया था। उसके अनुसार बेटे को हल्का सा कुछ हो जाए, एक दम अस्पताल में लाया जाता है, बल्कि नर्सिंग होम में दाखिल करा दिया जाता है इसके विपरीत लड़की की हालत बिगड़ जाने पर ही अस्पताल लाया जाता है। उसे जनरल बार्ड में रखा जाता है।

भ्रूण परीक्षण ने भी लड़कियों के साथ बड़ा अत्याचार किया है। लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत बड़ी असमानता है। लड़कियों की शिक्षा और जीवन का मन्तव्य विवाह माना जाता है। एक एम. एस. सी. प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण छात्रा भी इस भयावहता से आक्रान्त दीख पड़ती है।

कुछ क्षेत्रों में समान कार्य के लिए समान मजदूरी भी नहीं मिलती है। यह वैज्ञानिक सत्य है कि निरन्तर कार्य करते रहने की क्षमता स्त्री में अधिक होती है। पुरुष थोड़ा काम करके विश्राम चाहता है। स्त्री बुनने का, कताई का, बीनने का, सेंवई बनाने का कार्य, निरन्तर बिना किसी विश्राम के करती रह सकती है। सड़क के किनारे पड़े सिकलीगर लोहे के औजार बनाते हैं। वहाँ पर 'घन' चलाने का भारी काम स्त्री करती है। उसके शरीर में पुरुष की अपेक्षा लोच अधिक होता है।

आवश्यकता इस बात की है कि माता-पिता तो अपने व्यवहार को ठीक करें ही, लड़कियाँ और महिलायें भी अपने अधिकारों को पाने के लिए संघर्ष करें। वीमेन लिबरेशन जैसे आन्दोलन वहां तक ठीक हैं, जहां तक नैतिकता एवं सामाजिकता का उल्लंघन नहीं होता। नारियाँ सदाचारी हों, उच्छृंखल नहीं। परन्तु उनके अधिकार उन्हें अवश्य ही मिलने चाहिए। क्या कारण हैं कि हम उन्हें समानता का अधिकार नहीं दे पाते। वे भी हमारी सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था का समान एवं अविभाज्य अंग हैं।

डा० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 22-7-90)

वेद सबके लिए।

जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र सूर्य और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाये हैं वैसे वेद भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

अंग्रेजी हटायें

हमारी भारतीय भाषाएं, तेलुगू, मलयालम, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, बंगाली, असमियाँ, संस्कृत, पंजाबी, सिन्धी, उर्दू, उड़िया एवं हिन्दी को अपने-अपने प्रांत में प्रतिष्ठित करना एवं राष्ट्रभाषा-सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करना आर्यसमाज के अंग्रेजी हटाओ हिन्दी लाओ आन्दोलन का उद्देश्य है।

अंग्रेजों की गुलामी से हम मुक्त हुए किन्तु हमारी भाषाओं को अभी भी अंग्रेजी भाषा की चेरी बनकर अपना अस्तित्व बचाना पड़ रहा है। कुछ प्रान्तों में तो अंग्रेजी हटाकर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का कार्यारंभ हो चुका है किन्तु अभी भी देश पर अंग्रेजी भाषा का शिकंजा जकड़ा हुआ है। शासकीय क्षेत्र, शैक्षणिक क्षेत्र, निजी संस्थानों, कारखानों और जन सामान्य के दैनिक व्यवहार से अंग्रेजी को हटाना है।

भाषणों से, शासकीय प्रयासों से लेख लिखने, गोष्ठियाँ करने, औपचारिक सम्मेलनों से 'हिन्दी दिवस मनाने' से अभी तक हम देश को अंग्रेजी भाषा की गुलाम से मुक्त नहीं करा पाये हैं। देश पर अंग्रेजी भाषा का लदा रहना "राष्ट्रीय कलंक" है। अभी भी हमारे मध्य अंग्रेजी की पैरवी करने वाले विद्यमान हैं। उनके मन में भी यह भावना भरनी होगी कि अंग्रेजी हटाना राष्ट्रभक्ति का कार्य है। यदि सख्त शब्दों में कहें तो अंग्रेजी भाषा को बनाये रखने का विचार देशद्रोह समझा जाना चाहिये।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 29-7-90)

गोवा में प्राईमरी शिक्षा के माध्यम रूप में अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त

गोवा सरकार ने यह निर्णय लिया है कि गोवा प्रान्त के सभी सरकारी तथा गैर सरकारी स्कूलों की प्राईमरी शिक्षा का माध्यम 'कोंकणी, अथवा 'मराठी' होगा। 'कोकणी' और 'मराठी' को प्राईमरी शिक्षा के माध्यम के रूप में शैक्षणिक सत्र 1990-91 से प्रारंभ किया जा रहा है। अंग्रेजी की अनिवार्यता को पूर्णत: समाप्त कर दिया गया है। इस संक्रमण काल में सरकार द्वारा निर्धारित प्रक्रिया को अपनाया जाएगा। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि दिल्ली प्रदेश में हिन्दी भाषा की सामयिक उपयोगिता एवं प्रासंगिकता को सेंट जेवियर पब्लिक स्कूल के प्रशासकों ने बहुत पहले समय लिया था। वहाँ पर शिक्षा का माध्यम हिन्दी है।

सरकारी तथा गैर सरकारी स्तरों पर यह प्रयास किया जाना चाहिए कि शिक्षा उस माध्यम से दी जाए, जो बालक की मातृभाषा हो। बालक जो अभिव्यक्ति मातृ भाषा में दे सकता है, वह किसी भी अन्य भाषा में नहीं।

महात्मा गाँधी ने हिन्दी भाषा के प्रवर्तन तथा शराब के निषेध की बात, कलम की नोक से करने की घोषणा की थी, पर स्थिति आज बदतर होती जा रही है। सामाजिक संगठनों का दायित्व है कि वे सक्रिय होकर इस दिशा में प्रयास करें।

पिछले लगभग दो वर्ष से संघ लोक सेवा आयोग की प्रतियोगिता परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता को समाप्त करने के लिए संघर्ष पूर्ण सत्याग्रह आन्दोलन चल रहे हैं। इस आन्दोलन को पहली सरकार के नेताओं का भी आश्वासन मिला था, तथा इस सरकार के नेताओं का भी। धार्मिक संगठनों एवं सामाजिक संगठनों का भी सहयोग इस आन्दोलन को मिलता रहा है। परन्तु हमारी सरकार इस ओर से उदासीन ही है। स्वाधीनता प्राप्ति के पूर्व राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, सम्पूर्णानन्द, राजेन्द्र प्रसाद, महात्मा गांधी, राममनोहर लोहिया तथा अन्य अनेक राष्ट्रीय नेता भारतीय भाषाओं तथा विशेष रूप से हिन्दी भाषा के प्रवर्तन का स्वप्न देखा करते थे। वह स्वप्न आज तक भी साकार नहीं हो पाया है। समझौता वादी नीतियाँ सदा ही इसका मार्ग अवरुद्ध करती रही हैं।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री इस दिशा में बधाई के पात्र हैं। उन्होंने अपनी लोहिया वादी अवधारणा का सशक्त परिचय दिया है। हमें विश्वास है कि उत्तर प्रदेश का प्रशासन अन्य प्रान्तों के लिए मार्ग दर्शक का कार्य करेगा। दक्षिणी प्रान्तों में भी हिन्दी का विरोध नहीं है। विरोध यदि कहीं है तो वह हमारी मानसिकता में है, जिसे दूर करने का अब समय आ गया है।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 29-7-90)

भक्ति संगीत

पिछले दिनों लोकसभा में एक महत्त्वपूर्ण घोषणा की गयी। सूचना एवं प्रचार मंत्री श्री पी० उपेन्द्र ने लोकसभा में बताया कि विभिन्न धर्मग्रन्थों, तथा श्रुतियों से भक्ति संगीत का आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर प्रसारण किया जाए। उन्होंने यह भी बताया कि अभी भी आकाशवाणी के कुछ केन्द्रों से वैदिक ऋचाओं को प्रसारित किया जाता है। दूरदर्शन के कुछ केन्द्रों से शास्त्रीय तथा अर्धशास्त्रीय संगीत को प्रसारित किया जाता है।

उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर में यह बताया कि अभी सरकार के सामने ऐसा कोई प्रस्ताव विचाराधीन नहीं है कि प्रातः कालीन सभाओं में आकाशवाणी अथवा दूरदर्शन पर वैदिक मंत्रों को प्रसारित किया जाए।

माननीय मंत्री जी से यह अपेक्षा तो की ही जा सकती है कि यदि ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं है तो वे ऐसा प्रस्ताव लाए। धार्मिक सामाजिक संगठनों का भी यह कर्त्तव्य है कि वे मंत्री महोदय को इस दिशा में कार्य करने के लिए जाग्रत करें। एक पुरानी कहावत है कि बिना माँगे तो माँ भी बच्चे को दूध नहीं पिलाती।

भारत धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है। भारत धर्म विहीन राष्ट्र नहीं है। यहाँ के कण-कण में धार्मिकता ओत-प्रोत है। धर्म का सामान्य अर्थ भी यही है कि वे कार्य किए जाए, जो अपना, समाज का, तथा मानवमात्र का कल्याण करने वाले हों मनु महाराज से बताए धर्म के दस लक्षण भी हमें यही बताते हैं कि हम किसी प्रकार 'खुदी' को बुलन्द करें। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रातः कालीन उन सभाओं में धार्मिक मनतव्यों को स्थान दिया जाए जो सार्वभौमिक सार्वकालिक तथा सार्वजनीय हों। इस कसौटी पर वैदिक मंत्र खरे उतरते हैं। वेदों का प्रभाव सार्वभौमिक है। वे मानव मात्र के कल्याण के लिए हैं। अतः वैदिक मंत्रों का आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर प्रसारण भ्रातृत्व एवं सह अस्तित्व की विचारधाराओं को वांछित आयाम प्रदान करेगा।

मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 29-7-90)

आर्य समाज संगठित है।

पिछले दिनों कुछ राष्ट्रीय समाचार पत्रों में आर्यसमाज दो धड़ों में बँटा। इस शीर्षक से एक समाचार प्रकाशित हुआ था। समाचार पत्र वालों को जैसा कि पत्रकारों का स्वभाव होता है, कुछ नया चाहिए। उन्हें मावलंकर हाल में 14-15 जुलाई को आयोजित कार्यक्रम में अवश्य ही कुछ नवीनता दिखलाई दी। आर्यसमाज सौ वर्ष से भी पुराना संगठन है। उसके सुनिश्चित नियम, सिद्धान्त एवं संविधान हैं। यह सार्वभौम संगठन है। नगर नगर में आर्य समाजें हैं। उनके प्रतिनिधि प्रान्तीय सभाओं का गठन करते हैं तथा प्रान्तीय सभाओं तथा विदेशों की आर्यसमाजों/प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधि सार्वदेशिक सभा की साधारण सभा के सदस्य होते हैं।

समाचार पत्रों में यह समाचार दे देना कि राष्ट्रीय स्तर पर आर्यसमाज दो धड़ों में विभाजित हो गया है, बेमानी है। जो लोग मावलंकर हाल में इकट्ठे हुए थे, वे आर्यसमाजों के प्रतिनिधि नहीं थे, वे प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधि नहीं थे, वे सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि भी नहीं थे। वे लोग वहां पर अपनी व्यक्तिगत स्थिति में गए थे। वे किसी नए संगठन को बनाने गए थे। वे पुराने संगठन को दो धड़ों में विभाजित करने वाले कौन होते हैं ?

भारतीय आर्यसमाज की स्थापना उन्होंने की। प्रत्येक व्यक्ति को नया संगठन खड़ा करने का अधिकार है, पर वह आर्यसमाज जैसे पूर्व प्रचलित स्थापित नाम का दुरुपयोग करे, यह अधिकार उन्हें कहां से मिल गया ?

कुछ कुण्ठाग्रस्त लोग जो अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति के लिए आगे आते हैं, उन्हें इस पवित्र संस्था के मंच का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। उस अधिवेशन में भी बताते हैं कि तपोपूत सन्यासी स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती ने अपनी सुष्ठु शैली में आर्यसमाज की मान्यताओं एवं आधार भूत धारणाओं को प्रस्तुत किया था, परन्तु वहाँ तो विशेष प्रयोजनों से जुड़े उच्छृंखल लोग जमा थे। उन्होंने उनकी बात पर ध्यान न दिया। हां जो स्वामी जी से सहमत थे, वे वहाँ से बाहर आ गए।

जब भारतीय आर्यसमाज की स्थापना की घोषणा हुई तो वहाँ पर केवल गिने-चुने व्यक्ति रह गए। प्रारंभ में बताते हैंकि 700 प्रतिनिधि थे, पर दिन ढलते सारा हाल खाली हो गया। जो बाहर आए, उन्होंने अपने को ठगा सा महसूस किया। जो अन्दर थे, वे किं कर्त्तव्य विमूढ़ थे।

अनेक बार नई संस्थाएँ बनाने के प्रयास किए गए। पुरानी चलाना तो कठिन है। वे नई कहा से चलाएंगे। पुरानी तो संभाल नहीं पाए, नया कहां से संभालेंगे।

एक पुरानी कहावत है कि तुम सबको कुछ समय के लिए मूर्ख बना सकते हो, कुछ को ज्यादा समय के लिए मूर्ख बना सकते हो, पर सबको सारे समय के लिए मूर्ख नहीं बना सकते ! आर्य सभा बनाई गई थी। घोषणा की गई थी कि हरियाणा का राज्य दयानन्द को थाली में परोसकर भेंट करेंगे। कहां गया, वह थोथा नारा। संघर्ष के लिए क्रान्ति के लिग उच्छंृखल समूह नहीं, संगठित शक्ति चाहिए।

आर्यसमाज एक पवित्र संगठन है। छुद्र स्वार्थी तत्त्वों से सावधान रहने की आवश्यकता है।

—डा. धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 5-8-90)

जिसको पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है उसका पढ़ना पढ़ाना व्यर्थ है।

जो स्त्रियों को पढ़ने का निरोध करते हों वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थपरता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

अर्थ सहित वेद पढ़ना चाहिए।

जो वेद को स्वर और पाठमात्र पढ़ के अर्थ नहीं जानता वह जैसा वृक्ष डाली, पत्ते, फल, फूल अन्य पशु धान्य आदि का भार उठाता है, वैसे भारवाह अर्थात् भार का उठाने वाला है, और जो वेदों को पढ़ता और उनका यथावत् अर्थ जानता है। वही सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होके देहान्त के पश्चात् ज्ञान के पापों को छोड़ पवित्र धर्माचरण के प्रताप से सर्वानन्द को प्राप्त होना है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रेरणा स्रोत

महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के स्वराज्य विषय के विचारों से आर्यजगत् भलीभाँति परिचित है। 'स्वराज्य' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग महर्षि दयानन्द ने किया था। जबकि दादा भाई नौरोजी को तो यह शब्द 1906 में याद आया। स्वामी जी के एतद् विषयक विचार उनके ग्रन्थों में यतस्ततः विकीर्ण हैं। 1857 में तो स्वामी जी ने स्वयं यहाँ से वहां घूम घूमकर जन-जागरण का कार्य किया था। यह क्रान्ति असफल हुई थी, पर ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने मनोयोग पूर्वक इस विफलता के कारणों का विश्लेषण किया तथा स्वराज्य प्राप्ति को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती 'यथाराजा, तथा प्रजा' सिद्धान्त में के विश्वास करते थे। उनकी मान्यता थी कि यदि राजा लोग स्वाधीनता के महत्त्व को एक बार समझ लें तो देश को स्वाधीन कराने में अधिक कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा। अपने जीवन की संध्या में उन्होंने रात-दिन यही कार्य किया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 'पूना' में 50 व्याख्यान दिए थे। इनसे से 15 व्याख्यानों को श्री महादेव गोविन्द रानाडे ने लिपि बद्ध कराया था। इन व्याख्यानों में छः व्याख्यान भारत वर्ष के प्राचीन गौरव एवं वर्तमान दुर्दशा के सम्बन्ध में है। महर्षि दयानन्द सरस्वती की इस व्याकुलता को आज कितने आर्यसमाजी समझ पाते हैं। आर्यसमाज के समारोह, उद्घाटन, विमोचन, वार्षिकोत्सव, श्रावणी के अवसर पर वेदकथाओं का आयोजन, मात्र परम्परा का निर्वाह मात्र रह गए हैं। कितने लोग हैं जो इनके प्रति संवेदन शील हैं ? अधिकारी सोचते हैं कि क्या फर्क पड़ता है कि कौन आया, कौन गया। सभी कार्यक्रमों का निश्चित उद्देश्य होना चाहिए। साप्ताहिक "आर्यसन्देश" का एक उद्देश्य है कि अपने पाठकों को समय समय पर वर्तमान सन्दर्भों के प्रति सचेत करना। हम गीत गाते हैं कि हम थे। अरे ! हम आज क्या हैं ?

हमारे नेताओं में होड़ लगी है कि लाल किले पर झण्डा कौन फहराएगा। कोई इस बारे में नहीं सोचता कि मनुष्य को सच्चरित्र होना चाहिए, उसे राष्ट्रवादी होना चाहिऐ।

क्या आज कोई रनाड़े की विद्वता व बहुमुखी प्रतिभा, देश भक्ति चरित्र व विशेषताओं से प्रभावित होकर, अपने को समुन्नत करने का प्रयास करता है ? जब रानाड़े के सम्पर्क में गोखले आये, तो उन्होंने रानाड़े को अपना गुरू माना। और

उन्हीं के बताए मार्ग का अनुसरण किया। रानाड़े पहले से ही महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग का अनुसरण कर रहे थे।

1916 में गांधी भारत आये। वे अने राष्ट्रीय नेताओं से मिले। उन्हें गोखले की नीतिमत्ता एवं कुशलता ने प्रभावित किया। उन्हें उनके प्रति 'प्रथम' दर्शन में आसक्ति हुई थी। उन्होंने गोखले को अपना गुरू माना। महात्मा गांधी ने गोखले के लिये लिखा था—'राजनीतिक कर्मी में मैं जो-जो गुण चाहता था, उन सभी गुणों के निधान मुझे वही लगते थे। स्फटिक जैसे निर्मल, मेमने जैसे मृदुल, सिंह जैसे सूरमा, और अतिशयता के कारण दोष बन जाने की सीमा तक पहुँची हुई अहेतुर उदारता के धनी। इसमें मेरा कुछ भी आता जाता नहीं कि इसमें से वे कुछ भी न रहे हों मेरे लिए तो इतना ही काफी था कि मैं उनमें किसी भी दोष का पता नहीं पा सका जिस पर कि मैं असार आपत्ति या कुतर्क करता। मेरे लिए तो वे राजनीतिक क्षेत्र के सर्वाधिक सर्वथा पूर्ण पुरुष रहे हैं और रहेंगे।'

इस प्रकार देखते है कि महात्मा गांधी की परम्परा पीछे की ओर राष्ट्रीय भावना के क्षेत्र में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज तक जाती है और उनके माध्यम से यह गुरू विरजानन्द (1779-1868) और उनके भी गुरु स्वामी पूर्णानन्द तक पहुँचती है। गुरू पूर्णानन्द ने 5 अक्टूबर 1855 को गढ़ गंगा के मेले पर एक सभा में कहा था—'मुल्क को फिरंगी के भरोसे मत छोड़ो वे बेदीन हैं।" ये राजा नहीं बल्कि तिजारती लुटेरे हैं।' स्वामी पूर्णानन्द के गुरू थे स्वामी ओमानन्द। पर उनके विचार लिपि बद्ध उपलब्ध नहीं हैं।

राष्ट्रीय आन्दोलन की यह वैचारिक परम्परा सुदीर्घ है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इसे संभालकर रखना सीख पाएं तथा इसे संभालकर रख सकें।

—डॉ. धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 12-8-90)

आर्य सत्याग्रह हैदराबाद

सन् 1939 में आर्यसमाज ने हैदराबाद रियासत में निजामशाही के विरुद्ध धर्म युद्ध किया था। हैदराबाद का मुगल शासक आसफजाह निजामुलमुल्क नितान्त निरंकुश और बर्बर था। उसकी इच्छाएं ही धार्मिक कर्त्तव्य माना जाता था। 'तुम काफिरों के साथ तब तक लड़ते रहो, जब तक कि वे निःशेष न हो जाएं या जब तक वे तुम्हारा दीन न स्वीकार कर लें।' सुरा-2, अल बकलरा पारा-1, आयात 190 से 192.

निजामशाही में हिन्दुओं के टूटे मन्दिरों की मरम्मत करने, मन्दिरों पर कलश चढ़ाने, पुराने के स्थान पर नया कलश लगाने, पुराना झण्डा फट जाने पर नया झण्डा लगाने, घरों में हवनकुण्ड खोदने, सत्संग करने, धार्मिक प्रचार करने और यहाँ तक की अपनी सन्तानों के विवाह बिना पूर्व अनुमति के करने की स्वतन्त्रता न थी। आर्यसमाजी लोगों में जीवन था, ऊर्जा थी, विरोधशक्ति थी, मर मिटने की आन-बान थी। बस आर्यसमाज ने सत्याग्रह किया। क्या-क्या यातनाएं झेलीं ? वे अग्नि परीक्षा में किस प्रकार कूद पड़े ? यह सब कुछ आप इस अंक में पढ़ेंगे। यह निश्चित है कि आर्यों ने अपनी तेजस्विता का परिचय सफलतापूर्वक दिया।

सुधी पाठक सम्पादक की कठिनाई से परिचित हैं। हमने इस अंक को तैयार करने में क्या क्या परेशानिया उठाई, उन्हें रेखांकित करने की तो आवश्यकता नहीं है, पर यह निश्चित है कि आज इस प्रकार के साहित्यिक एवं अनुसन्धानात्मक कार्यों में कम ही लोगों की रुचि है। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने गत वर्ष घोषणा की थी कि आगामी वर्ष कम से कम आठ विशेषांक प्रकाशित किए जाएंगे और इन अंकों में सुधी विद्वानों के लिए पठनीय सामग्री प्रस्तुत की जाएगी। हमने अपने इस घोषणा को पूरा किया है। हमारे कुछ भाई यह भी कह सकते हैं कि जब किसी कि रुचि नहीं है तो पैसा क्यों खराब करते हो। पर हमें ऐसी बात सुनने का अवकाश ही नहीं है। हम तो अपने काम में लगे हैं।

हमने सभी सभाओं—सार्वदेशिक एवं प्रान्तीय सभाओं, सत्याग्रह-सेनानियों, वैदिक विद्वानों, इतिहासकारों, आर्य शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों एवं सुधी विद्वानों से बार बार प्रार्थना की है कि वे अपने लेख, जानकारी तथा चित्र भेजें परन्तु हमें अपेक्षित सहयोग नहीं मिला। पूर्व घोषणा के अनुसार हम समय पर अंक देने के लिए कृत संकल्प थे, इसलिए हमने अपने पास एवं पुस्तकालयों में उपलब्ध पुरानी पत्र-पत्रिकाओं, विद्वान लेखकों की पुस्तकों तथा मित्रों के घरों में प्राप्त सामग्री को रात-रात लगाकर पढ़ा और उसमें जो कुछ हमें पाठको को देने योग्य लगा, एक गुल-दस्ते में रखकर आपके सामने प्रस्तुत कर दिया। जैसे हैं आपके सामने हैं। अच्छा लगे अपना लेना, बुरा लगे अपना लौटा देना।

हैदराबाद सत्याग्रह से सम्बन्धित समाचार पत्रों, पत्रिकाओं पुस्तकों, अभिनन्दन ग्रन्थों, स्मरिकाओं तथा विद्वजनों के लेखों में हमें भारी विरोधाभास देखने को मिला। इन सभी लेखों में तत्थ्यात्मकता कम और अतिशयोक्तियां अधिक थीं। हमारे नेताओं की डींगे इस सामग्री में मुर्तिमान थीं। आर्यसत्याग्रह हैदराबाद में 10569 आर्यजन गिरफ्तार हुए थे और 30 से अधिक आर्य जनों ने अपने जीवन का उत्सर्ग किया था। लगभग 2000 सत्याग्रह की प्रतीक्षा में थे। ये तथ्य पुराने तत्कालीन ग्रन्थों के अनुशीलन से मिलते हैं, पर बाद के लेखकों ने इन संख्याओं को अपने ढ़ंग से पढ़ाकर 11, 15, 20 और 25 तथा यहां तक की 40 हजार तक बढ़ा दिया। हमें तथ्यात्मक जानकारी पं. इन्द्र विद्यावाचस्पवि द्वारा प्रणीत आर्यसमाज का इतिहास, से मिलती है।

अनेक तिथियों में भी पूर्वापर संगति बिठाने में बड़ी कठिनाई आई। यहां पर भी वही समस्या है। लेखकों से जो याद आया, वही लिख डाला। उन्हें अतिशयोक्ति पूर्ण चित्रण करने में यह भी याद न रहा कि महात्मा नारायण स्वामी बाद में गए। और पहले वहां पं० रामचन्द्र देहलवी गए थे।

अस्तु हमने जैसा वन पड़ा किया। यह पूर्ण इतिहास नहीं है। आर्यों के उस ओज का समयक् चित्रण करने के लिए हजारों पृष्ठों की आवश्यकता पड़ती, पर हमें तो अपने सीमित साधनों के आधार पर सीमित समय में ही कार्य करना था। यह कार्य आंध्र प्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा ज्यादा अच्छा कर सकती थी अथवा सार्वदेशिक सभा अच्छा कर सकती थी क्योंकि यह आन्दोलन उन्हीं के निर्देशन में चलाया गया था। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और उसके मुखपत्र आर्यसन्देश की तो अपनी सीमाएं हैं।

हमारी प्रार्थना पर जिन जिन वैदिक विद्वानों तथा हैदराबाद सत्याग्रह के सेनानियों ने अपने लेख एवं संस्मरण भेजे हैं, हम उनके आभारी हैं। जिन पुस्तकों का हमने इस अंक को तैयार करने में सहारा लिया तथा जिनकी छाया इस अंक के अनेकों लेखों में स्पष्ट है, उन सभी के हम आभारी हैं। पं० क्षितीश वेदालंकार, पं० ब्रह्मदत्त स्नातक, पं० कपिलदेव द्विवेदी, पं० क्षेमचन्द्र सुमन, डा० भवानीलाल भारतीय, पं० देवनारायण भारद्वाज, डा० महाश्वेता चतुर्वेदी का तो मैं नाम लेकर धन्यवाद करना चाहता हूँ क्योंकि इन महानुभावों ने लेख भी दिए और सामयिक निर्देश भी दिए।

सार्वदेशिक सभा के प्रयास से अनेक सत्याग्रहियों को पेंशन मिल चुकी है। श्री स्वामी आनन्दबोध सरस्वती, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा हैदराबाद सत्याग्रह पेंशन गैर सरकारी समिति के सदस्यों का स्मरण करना भी मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं।

इस अंक को प्रकाशित करने में श्री महाशय धर्मपाल जी जैसे दानी महानुभावों तथा आर्यसमाजों एवं संस्थाओं का भी सहयोग मिला है। हम उनके प्रति भी कृतज्ञ हैं।

कुछ सामग्री देर से प्राप्त हुई। वह इस अंक में सम्मिलित न की जा सकी। हम उन विद्वानों के प्रति क्षमा प्रार्थी हैं।

अन्त में सभी सहयोगियों का पुनः धन्यवाद एवं आभार।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 19-8-90)

आर्य सन्देश के विशेषांक

पिछले एक वर्ष में आर्यसन्देश ने डा० सत्यकेतु स्मृति अंक, ऋषि निर्वाण अंक, श्रद्धानन्द बलिदान अंक, आर्यसमाज स्थापना अंक, गुरुदत्त स्मृति अंक और अब हैदराबाद आर्य सत्याग्रह अर्द्धशताब्दी स्मृति अंक आर्यजगत् को भेंट किया है। हमें प्रसन्नता है कि आर्य विद्वानों, लेखकों, कवियों, कार्यकर्ताओं और हमारे सुधी पाठकों ने इन सभी विशेषांकों को अपना असीम प्यार दिया है।

जैसा कि प्रायः होता है, प्रेस मालिकों ने हमारे इस अभियान के मार्ग में समय-समय पर अनेक व्यवधान खड़े किए। यहां तक हुआ, जो चाहा, जहां चाहा छाप दिया। फलस्वरूप अनेक लेखकों और पाठकों को जहां असुविधा हुई, वहां हमें आत्मग्लानि का अनुभव हुआ। हमें प्रसन्नता है कि आर्यजगत की प्रमुख संस्था "सार्वदेशिक प्रेस" जिसने कई दशकों तक आर्य सामाजिक साहित्य के प्रकाशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है, ने आर्यसन्देश को नियमित रूप से प्रकाशित करने का भार स्वीकार कर लिया है।

हैदराबाद आर्य सत्याग्रह अर्धशती स्मृति अंक

"आर्य सन्देश" का 19 अगस्त, 1990 का अंक "हैदराबाद आर्य सत्याग्रह अर्धशती स्मृति अंक" के रूप में प्रकाशित कर, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने वचन को पूरा कर दिया है। 236 पृष्ठों के इस विशेषांक का लोकार्पण 17 अगस्त 1990 को विट्ठलभाई पटेल हाऊस के सभागार में समारोहपूर्वक किया गया तथा विशेषांक सभी ग्राहकों, विद्वानों, लेखकों तथा आर्य संस्थाओं को उसी दिन डाक द्वारा भेज दिया गया।

विशेषांक कैसा बना, यह राष्ट्र के कोने-कोने में बैठे हमारे विज्ञ पाठकों की प्रतिक्रियाओं से पता लगेगा। फिलहाल, दिल्ली के अनेक आर्य विद्वानों, लेखकों और कार्यकर्त्ताओं ने व्यक्तिगत रूप से मिलकर अथवा दूरभाष के माध्यम से अपनी शुभ-कामनायें प्रेषित की हैं। हम सभी के आभारी हैं।

क्षमा याचना

श्री स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डा० कपिलदेव द्विवेदी, श्री ओमप्रकाश झंवर, श्री सर्वेन्द्र शास्त्री, आचार्य वेदभूषण, कु० प्रतिभा देवदर्शनी, श्रीमती भगवती ओबराय, श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती, श्री पन्नालाल पीयूष, श्री भगवानदेव

चैतन्य, श्री गंगाप्रसाद विद्यार्थी, श्री नन्दलाल निर्भय के लेख संस्मरण, काव्य-रचनाओं के अतिरिक्त स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज, श्री घनश्याम सिंह गुप्त, पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय, लाला देशबन्धु गुप्त, प्रो० सुधाकर, पण्डित रामचन्द्र राव वन्देमातरम् द्वारा की गयी उल्लेखनीय सेवाओं का विवरण तथा अन्य अनेक तत्कालीन ऐतिहासिक घटनाओं के विवरण, जो हम तैयार कर चुके थे, समयाभाव तथा विशेषांक के पृष्ठों की निश्चित सीमा के कारण प्रकाशित नहीं कर सके। अतएव सभी विद्वान लेखकों और कवियों से हम क्षमा चाहते हैं। यदि व्यवस्था बनी, तो यह सामग्री किसी अन्य उचित अवसर पर पाठकों को भेंट करेंगे।

—मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 26-8-90)

जैसे वर्तमान समय में सभी लोग अध्यापकों से पढ़ ही के विद्वान होते हैं वैसे परमेश्वर सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न हुए अग्नि आदि ऋषियों का गुरु अर्थात् पढ़ाने हारा है क्योंकि जैसे जीव सुषुप्ति और प्रलय में ज्ञानरहित हो जाते है वैसा परमेश्वर नहीं होता। उसका ज्ञान नित्य हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

संसद की गरिमा

हमारे महान् राष्ट्र भारतवर्ष की संसद का इन दिनों इतना राजनीतिकरण हो चुका है कि उसमें विषय की गम्भीरता की परवाह कम की जाने लगी है और छोटी तथा अनावश्यक बातें बड़ी और महत्वपूर्ण मुद्दों से ज्यादा महत्वपूर्ण हो गई हैं। शून्यकाल का समय तो शायद तू-तू, मैं-मैं के लिए हो गया है।

आरक्षण के प्रश्न पर श्री वी. पी. सिंह की अल्पमत वाली सरकार दुविधा में फँसी हुई है। उन पर पक्ष और विपक्ष के सदस्यों की ओर से आरोप लगाए जा रहे हैं। इनमें तीन मुख्य हैं—(1) आरक्षण की घोषणा राजनीतिक कारणों से जल्दीबाजी में की गई है। (2) जनता दल के आन्तरिक संकट, दूसरे शब्दों में श्री देवीलाल को उपप्रधान मन्त्री पद से हटाने से पिछड़े वर्ग के गुस्से को शान्त करने के लिए ब्रह्मास्त्र का उपयोग किया गया है। (3) वोट बैंक की राजनीति का उपयोग किया गया है। इन आरोपों में कितना सत्य या सत्यांश है—यह राजनीतिज्ञ ही जाने ! इस गम्भीर प्रश्न पर राजधानी दिल्ली ही नहीं, बल्कि पूरे उत्तर भारत में भारी प्रतिक्रिया हुई है और देश का छात्र एवं युवा वर्ग सड़क पर उतर आया है। सड़क पर उठी यह आवाज, संसद में भी पहुंच चुकी है। आरक्षण-पक्ष के एक नायक श्री रामबिलास पासवान, जो केन्द्रीय सरकार के वरिष्ठ मन्त्री भी हैं, संसद की गरिमा को भूलकर जब जोश में ज्यादा बोल गए, तो भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष तथा सांसद श्री लाल कृष्ण आडवाणी को यह कहकर सरकार को उसकी सीमाएँ दिखानी पड़ीं—'यह अल्पमत सरकार है।' श्री पासवान का यह कहना कि लोकसभा में बैठे 540 संसद सदस्य देश नहीं है, जो फैसला सुना सकें कि पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण होना चाहिए या नहीं, तो फिर संसद सदस्य और संसद क्या है ? एक ओर यह अल्पमत सरकार केवल 140 सदस्यों के बूते पर सारे देश में जाति और वर्ग भेद का संघर्ष पैदा करने वाला निर्णय कर सकती है। दूसरी ओर यह भी चाहती है कि शेष 400 सदस्य मूक-दर्शक बने रहकर, केवल समर्थन में हाथ उठा दें।

प्रश्न आरक्षण के पक्ष या विपक्ष का नहीं है। प्रश्न संसद सदस्यों के सम्मान तथा संसद की गरिमा का है। भारतीय संसद देश के 85 करोड़ लोगों के भविष्य की निर्मात्री है, जहाँ उनकी आकांक्षाओं के प्रतिरूप में 540 सम्माननीय सदस्य देश की जनता की आवाजें उठाते हैं। यदि इस देश की जनता के भाग्य का निर्णय संसद नहीं करेगी, तो फिर कौन करेगा ?

राष्ट्र को सर्वोपरि मानने और नैतिक-मूल्यों पर आधारित राजनीति में विश्वास प्रकट करने वाले श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह को अपने सहयोगी मन्त्रियों और सदस्यों को संसद की मर्यादा के प्रति सचेत करना चाहिए तथा संसद की गरिमा को उच्चतम महत्व एवं सम्मान देने के लिए स्वयं उन्हें संसद से क्षमा मांगनी चाहिये। साथ ही संसद में कैसा व्यवहार अपेक्षित है, इस पर पक्ष और विपक्ष के नेताओं को गम्भीरता पूर्वक विचारना चाहिये।

— मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 2-9-90)

जो परमात्मा वेदों का प्रकार न करे तो कोई कुछ भी न बना सके। इसलिये वेद परमेश्वरोक्त हैं। इन्हीं के अनुसार सब लोगों को चलना चाहिये, और जो किसी से पूछे कि तुम्हारा क्या मत है तो यही उत्तर देना कि हमारा मत वेद अर्थात् जो कुछ वेदों में कहा है हम उसको मानते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सृष्टि रचना।

जैसे हल्दी, चूना और नींबू का रस दूर दूर देश से आकर आप नहीं मिलते, किसी के मिलाने से मिलते हैं। उसमें भी यथायोग्य मिलाने से रोरी होती है, अधिक न्यून वा अन्यथा करने से रोरी नहीं होती। वैसे ही प्रकृति परमाणुओं का ज्ञान और युक्ति से परमेश्वर के मिलाये बिना जड़ पदार्थ स्वयं कुछ भी कार्य सिद्धि के लिये विशेष पदार्थ नहीं बन सकते। इसलिये स्वभावादि से सृष्टि नहीं होती। किन्तु परमेश्वर की रचना से होती है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

राष्ट्रीय अवकाश

भारत की केन्द्रीय सरकार ने एक लम्बे समय से वर्ष में 16 राष्ट्रीय अवकाश देने की नीति निर्धारित की हुई थी। इनमें तीन राष्ट्रीय पर्व—गणतन्त्र दिवस, स्वतन्त्रता दिवस तथा गांधी जयन्ती हैं। ग्यारह विभिन्न धार्मिक पर्व हैं, जिनमें हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, व जैन आदि धर्मों, मतों के पर्व सम्मिलित हैं तथा शेष दो क्षेत्रीय उत्सवों के लिए निश्चित हैं।

यद्यपि सारी दुनियां विकास की गति को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय अवकाशों को कम कर रही है, परन्तु हमारी सरकार अपनी राष्ट्रीय नीति को बदल कर, यहां भी तुष्टिकरण की नीति को अपना कर एक बार पुनः धार्मिक अलगाव और जातिवाद को बढ़ाने पर तुल गयी है। पिछले दिनों मुस्लिमों के पैगम्बर मोहम्मद के जन्म दिन को राष्ट्रीय अवकाश घोषित कर, सरकार ने एक ओर जहां मुस्लिम सम्प्रदाय को प्रसन्न करने की कोशिश की है, वहां दूसरी ओर अन्य धर्म, मत वालों को अपने-अपने भगवानों, देवताओं और अवतारों के जन्म दिनों के अवसर पर राष्ट्रीय अवकाश की मांग करने का अवसर प्रदान किया है। इसी संदर्भ में भारतीय जनता पार्टी की यह मांग कि रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी तथा महाशिवरात्रि को राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया जाए, न्यायोचित ही कही जाएगी। परन्तु सरकार इस पर विचार करेगी ऐसी उम्मीद बहुत कम है।

मूलचन्द गुप्त
(आर्यसन्देश, 9-9-90)

जय हिन्दी ! जय हिन्द !

हिन्दी भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा बने कैसे ? देशवासी तो हिन्दी को भूलते जा रहे हैं। अंग्रेजी के व्यामोह से बुरी तरह ग्रस्त हैं। आने वाली पीढ़ी पब्लिक स्कूलों (इनमें डी० ए०वी० पब्लिक स्कूल भी सम्मिलित हैं) के जाल में फँस कर भारत को पूरी तरह इंगलैंड-अमेरिका बनाने पर उतारू हैं। सरकार और जनता दोनों ही हिन्दी से अपना काम निकाल रहे हैं। लोग हिन्दी में वोट मांग-मांग कर कुर्सियों पर जा बैठते हैं और कुर्सियों पर बैठते ही "अंग्रेजी-अंग्रेजी" पुकारने लगते हैं तथा हिन्दी वालों को पिछड़ा मानने लगते हैं। देश की लगभग नब्बे प्रतिशत जनता हिन्दी से पूर्ण परिचित है, लेकिन स्थिति यह है कि हिन्दी केवल भाषणों में कहने के लिए राष्ट्र-भाषा है, व्यवहार में नहीं ! सरकारी कामकाज तो अंग्रेजी में ही होता है और हिन्दी केवल अनुवाद की भाषा बनकर रह गयी है।

इससे बढ़कर विडंबना और क्या होगी कि हमारा अपना संविधान है, अपनी संसद है, अपनी सरकार है, अपना झण्डा है, परन्तु राष्ट्रभाषा अपनी नहीं है। अंग्रेजों को भारत छोड़े 43 वर्ष से अधिक हो चुके हैं, परन्तु हम आज भी अंग्रेजियत के गुलाम बने हुए हैं।

हमें सोचना है, हिन्दी चलेगी तो लोकतन्त्र चलेगा। हिन्दी चलेगी तो समाजवाद चलेगा। हिन्दी किसी विशेष जाति, धर्म या प्रदेश से जुड़ी नहीं है, अतः हिन्दी के प्रचार प्रसार से धर्म निरपेक्षता बढ़ेगी, अलगाववाद दूर होगा और देश की अखण्डता अक्षुण्ण होगी। इसके साथ ही यह निश्चित जानिये कि हिन्दी चलेगी तो उर्दू चलेगी, पंजाबी चलेगी, गुजराती और मराठी चलेगी, असमिया और बंगला चलेगी फिर दक्षिण भारत की सभी भाषाओं का अभ्युदय क्यों न होगा। परन्तु यह सब कब होगा ? जब यह विदेशी-दुल्हन अंग्रेजी हमारा घर खाली करेगी !

हमारे पूर्वजों ने हमें स्वराज दिया अब हमें "हिन्दी दिवस" पर अपने देश को स्वभाषा देने के लिए दृढ़ संकल्प लेना होगा।

—मूलचन्द गुप्त

(आर्यसन्देश, 16-9-99)

हिन्दी भाषा और राष्ट्रीय एकता

राष्ट्रीय एकता को ईंट, पत्थर और छेनी हथौड़ों से तैयार नहीं किया जा सकता। यह तो दिलों और दिमागों में चुपचाप उत्पन्न होकर विकसित होती है। यह प्रक्रिया केवल शिक्षा की प्रक्रिया है। यह एक धीमी प्रक्रिया है पर स्थायी और दृढ़ प्रक्रिया है। यह शब्द डा० सर्वपल्ली राधा कृष्णन ने 1961 में राष्ट्रीय एकता परिषद् में व्यक्त किए थे। यह सुनिश्चित है कि राष्ट्रीय एकता को विकसित करने का महत्वपूर्ण साधन शिक्षा है। शिक्षा ही हमारे राष्ट्रीय दृष्टिकोण को व्यापक बनाती है तथा हमारे हृदयों में लिपी हुई बलिदान और सहिष्णुता की भावना को विकसित करती है। शिक्षा के प्रचार प्रसार से ही हमारी वैचारिक संकीर्णता समाप्त होती है जब हम क्षेत्रीय भाषाओं, धार्मिक संकीर्णताओं से ऊपर उठकर एक राष्ट्र, एक भाषा एक धर्म की ओर उन्मुख होते हैं तब हमारा राष्ट्रीय संगठन सुदृढ़ होता है और हम सर्वांगीण उन्नति करते हैं।

भारत एक विशाल देश है, इसमें विभिन्न भाषायें और बोलियाँ हैं। अधिकांश लोग सरल भाषा में बोली हुई संस्कृत को समझ लेते हैं, क्योंकि यह भाषा उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत की सभी भाषाओं की शब्द स्रोत है। मराठी, गुजराती, बंगाली, हिन्दी, तेलगू, तमिल, मलयालम, कन्नड़ सभी भाषाओं में संस्कृत भाषा के शब्द हैं। संस्कृत से विकसित हुई जो आज के सर्वाधिक प्रचलित भाषा है वह हिन्दी है। हिन्दी को कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक सभी लोग समझ लेते हैं। ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ पर हिन्दी को न समझा जाता हो। इस कार्य को करने में राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति का कार्य सराहनीय है।

सामाजिक, व्यापारिक, राजनीतिक क्रान्ति के लिये राजा राममोहन राय से लेकर आज तक सभी समाज सुधारकों ने, राजनेताओं ने तथा दार्शनिकों ने हिन्दी भाषा के माध्यम से कार्य किया है। महर्षि दयानन्द सरस्वती, केशवचन्द सेन, ईश्वर चंद विद्यासागर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय आदि महानुभावों ने राष्ट्रीय एकता के लिये तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन को जन आन्दोलन बनाने के लिये जिस भाषा का प्रयोग किया वह हिन्दी ही थी। स्वतन्त्रता आन्दोलन कांग्रेस का आन्दोलन माना जाता है। कांग्रेस पार्टी की प्रारम्भ की भाषा अंग्रेजी थी पर जब इस आन्दोलन का रूप दिया गया तब महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, सुभाष चन्द्र बोस, सरदार भगत सिंह, चन्द्र शेखर आजाद सभी ने

अपनी बात हिन्दी में कही। फलस्वरूप जब देश आजाद हुआ तब एक मत से यही निर्णय लिया गया था। कि हिन्दी राष्ट्र भाषा होगी।

भाषा, जाति, सम्प्रदाय, धर्म, क्षेत्र इन संकीर्णताओं से उठकर यदि हम सम्पूर्ण राष्ट्र को एक करना चाहते हैं, तो हमें अपनी क्षुद्रताओं का त्याग करना होगा और इसके लिये यही आवश्यक है कि हम हिन्दी को ईमानदारी से अपनायें हिन्दी की सबसे बड़ी दुश्मन अंग्रेजी है अंग्रेजी तो असल में जादूगरनी है स्वतन्त्रता से पहले और उसके बाद भी अंग्रेजी के समर्थकों ने भारतीय भाषाओं के साथ जमकर खिलवाड़ किया। राष्ट्र भाषा हिन्दी को पंगु बनाने का प्रयास किया फिर भी अंग्रेजी जानने वाले पांच प्रतिशत से अधिक नहीं है। अंग्रेजी से सारा सरकारी काम काज होता है, अंग्रेजी बोलने वाले को इज्जत मिलती है, अंग्रेजी बोलने वाले को बड़ा आदमी माना जाता है। दुकानदार अंग्रेजी नहीं जानता फिर भी वह बोर्ड अंग्रेजी में लिखाता है। सामाजिक संगठनों की कार्यवाहियां अंग्रेजी में लिखी जाती हैं। वे संस्थायें जिनके उद्देश्यों में हिन्दी और भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार की बात लिखी होती हैं, वे भी बैठकों में अंग्रेजी का सहारा लेते हैं। आप ही बताइये अंग्रेजी जादूगरनी है या नहीं ?

स्कूलों, कालेजों में अंग्रेजी अनिवार्य विषय है। यद्यपि अंग्रेजी कोई पढ़ना नहीं चाहता। कालेज स्तर पर हम अंग्रेजी को जैसे छात्र-छात्राओं को पढ़ा रहे हैं और जिस तरह पढ़ा रहे हैं, वह एक मजाक है फिर भी अंग्रेजी पढ़ाई जा रही है। कभी-कभी कुछ छात्र आते हैं और कहते हैं हमें यह अध्यापक नहीं, वह चाहिए उसका कारण मैं बताऊं बात गोपनीय है। यह छात्र उस अध्यापक को मांगते हैं, जो कुंजियों की शैली पर पढ़ाता है, जो स्वयं कुंजियां लिखता है और जो अंग्रेजी नहीं हिन्दी, पंजाबी, हरियाणवी अथवा किसी दूसरी भाषा के टूटे-फूटे शब्दों का प्रयोग अधिक करता है। फिर भी देश को चलाने में इस देश के शासकों ने अंग्रेजी की लगाम पकड़ी हुई है। वे सोचते हैं कि यदि अंग्रेजी है तो उनका सम्मान विदेशों में भी है। परन्तु होता इसका उलटा ही है। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी बोलने पर जो सम्मान श्री अटल बिहारी वाजपेयी को मिला था, ऐसा सम्मान विदेशों में कभी किसी राष्ट्रीय नेता को नहीं मिला। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि अंग्रेजी अंतर्राष्ट्रीय भाषा है, परन्तु ऐसा नहीं है। अंग्रेजी न जापान में बोली जाती है न रूस में और न जर्मनी में और न इटली में। और न तो इंगलैंड से केवल 26 किलो मीटर की दूरी पर जो यूरोपीय देश पड़ते हैं, जैसे फ्रांस, डेनमार्क और स्वीडन इनमें भी अंग्रेजी नहीं बोली जाती।

अब बात आती है कि हमारे देश में बहुत-सी भाषायें हैं, फिर हिन्दी ही क्यों हो। इसका स्पष्ट कारण है कि हिन्दी भारत के सबसे बड़े भू-भाग में बोली जाती है। हिन्दी भारत के सभी प्रान्तों में समझी जाती है। तमिलनाडू में कभी-कभी राजनैतिक कारणों से हिन्दी का विरोध किया जाता है। पर एक सर्वेक्षण के बाद यह पाया गया कि

मद्रास में 46 सिनेमा घरों में से 38 में हिन्दी फिल्में चल रही थीं फिल्मों को देखने वाले आम लोग होते हैं और वे ही वास्तविक भाषा स्वरूप बनाते हैं किसी राष्ट्र का स्वतन्त्रता के केवल चार चिन्ह होते हैं राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय गीत, राष्ट्रीय भाषा और राष्ट्रीय संविधान। अतः राष्ट्र भाषा का होना तो राष्ट्रीय एकता के लिए नितान्त आवश्यक है। रूस में 23 भाषायें बोली जाती हैं पर फिर भी राष्ट्रीय भाषा रूसी है, जो सारे देश को जोड़कर रखती है। उसी तरह हमारे देश में भी 14 प्रमुख भाषायें तथा अन्य अनेक बोलियों के होते हुए एक भाषा का राष्ट्र-भाषा होना इस देश को एकता की ओर ले जाने में अनिवार्य तत्व है। और निश्चय ही यह कार्य कर सकती है। भाषा प्रयोग से समृद्ध होती है जब तक हम इसका प्रयोग नहीं करेंगे तो यह समृद्ध होगी कहाँ से। और अंग्रेजी के दानव हमें यह करने नहीं दे रहे हैं। पहली आवश्यकता अंग्रेजी को खत्म करने की है। नई शिक्षा नीति में हिन्दी को समुचित स्थान दिया गया है। पर अंग्रेजी के वर्चस्व को समाप्त करने की दिशा में कोई प्रयास नहीं किया गया। संस्कृत जो पूरे देश की भाषाओं को शाब्दिक ऊर्जा प्रदान करती है, उसकी ओर भी कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया समस्त भारतीय भाषाओं की समान शब्दावली संस्कृत से भरपूर है। पहले संस्कृत भाषा एकता की वाहक थी, अब हिन्दी ही वह कार्य कर सकती है। हम मानते हैं भाषा शिक्षण में पहला स्थान मातृभाषा को दिया जाना चाहिए और दूसरा स्थान हिन्दी भाषा को और इसके बाद तीसरी भाषा कोई विदेशी हो सकती है, या उत्तर वालों के लिए दक्षिण की भाषा और दक्षिण वालों के लिए उत्तर की भाषा। इस प्रकार के आदान प्रदान से हमारा संगठन सुदृढ़ होगा।

अब यह प्रश्न उठता है कि क्या हम हिन्दी का सही प्रचार कर रहे हैं। दिल्ली भारत की राजधानी है। यहां पर चार केन्द्रीय विश्वविद्यालय भी हैं। इन सभी में हिन्दी पढ़ाई भी जाती है और यहाँ के प्राध्यापक हिन्दी के लिए सतत प्रयत्नशील भी लगते हैं। वे अपनी नौकरी के लिए चार या छः घन्टे लगाते होंगे बाकी सारा समय हिन्दी के लिए ही देते हैं। पुस्तकें लिखते हैं, पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखते हैं। निरन्तर प्रकाशकों और संपादकों से संपर्क बनाये रखते हैं। कभी-कभी अपनी पुस्तक के प्रकाशन के लिए प्रकाशक को आर्थिक सहायता भी प्रदान करते हैं। कभी-कभी वे अपनी पत्रिका स्वयं भी निकालते हैं। इस काम में अंग्रेजी और विज्ञान के प्राध्यापक भी उनकी सहायता करते हैं। पर क्या इससे हिन्दी का प्रचार प्रसार हो रहा है। राष्ट्रीय शैक्षिक एवं प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद की किताब में कविवर बच्चन का परिचय अमिताभ बच्चन के पिताजी कहकर दिया जाता है। और शब्द लिखे पाते हैं "परयत्न, पतरिका, मिण्ट, सहमती और सकूटर। यदि गलती से बच्चा सही शब्द लिख देता है तो उसकी 'टीचर' उसे काटकर गलत कर देती है। यह बिडम्बना ही है कि इससे हिन्दी का प्रचार प्रसार कैसे हो?

हमारी दृष्टि महर्षि दयानन्द की ओर जाती है, जिन्होंने गुजराती भाषी होते

हुए भी, संस्कृत का विद्वान होते हुए भी हिन्दी में लिखा था। वे हिन्दी के कथालेखकों में पहले हैं। जितने पत्र महर्षि दयानन्द सरस्वती के लिखे उपलब्ध मिलते हैं, उतने किसी अन्य महापुरुष के नहीं। हमारी हृदय भावना सहज ही उमड़ पड़ती है, कि धन्य है वह ऋषि जो हमें रास्ता दिखा गया !

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने तीन सभाओं के संविधान परोपकारी सभा, गोकृष्णादि रक्षिणी सभा और आर्य समाज के संविधान आज से सौ साल से भी अधिक पहले हिन्दी में बनाये थे। आज भी पंजीयक कार्यालय में वही भाषा ज्यों की त्यों प्रयुक्त होती है।

यदि हम चाहते हैं हमारा राष्ट्र संगठित हो, हम शक्तिशाली हों, तो हमें एक होना ही पड़ेगा और वह एकता हिन्दी भाषा के प्रयोग से आयेगी। राष्ट्रपति श्री रामास्वामी वेंकट रमन हिन्दी जानते हैं। उन्होंने डा० शंकर दयाल शर्मा को हिन्दी भाषा में शपथ दिलायी थी। ऐसे राष्ट्रीय नेताओं के हिन्दी प्रयोग से हिन्दी को बल मिलेगा और हम उनसे भी अपेक्षा करेंगे कि जब स्वतन्त्रता दिवस पर अथवा गणतंत्र दिवस पर दूरदर्शन और अकाशवाणी से राष्ट्र के नाम संदेश दें तो वे केवल अंग्रेजी में न दें, बल्कि हिन्दी में स्वयं दें और किसी अन्य भाषा में बाद में।

—डा. धर्मपाल
आर्य सन्देश (28-9-90)

अर्थ सहित वेद पढ़ना चाहिये।

जो वेद को स्वर और पाठमात्र पढ़ के अर्थ नहीं जानता वह जैसा वृक्ष डाली, पत्ते, फूल, फल और अन्य पशु धान्य आदि का भार उठाता है, वैसे भारवाह अर्थात् भार का उठाने वाला है, और जो वेदों को पढ़ता और उनका यथावत अर्थ जानता है वही सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होके देहान्त के पश्चात् ज्ञान से पापों को छोड़ पवित्र धर्माचरण के प्रताप से सर्वानन्द को प्राप्त होता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

जातीय आधार पर आरक्षण राष्ट्रीय एकता के लिए घातक है

भारत वर्ष में आर्य समाज तथा अन्य समाज सुधारवादी आन्दोलन का यह लाभ हुआ था कि कागज पर किसी की जाति नहीं लिखी जाती थी स्कूल में दाखिले के फार्म में जाति का नाम नहीं लिखा जाता था। जनगणना फार्मों में भी जाति का कालम नहीं होता था। हम किसी से उसकी जाति नहीं पूछते थे। रेल-यात्रा में लोग साथ साथ चलते थे, साथ खाते थे। किसी का ध्यान इस बात की ओर नहीं जाता था कि पानी पिलाने वाला किस जाति का है और खाने-पीने की सामग्री बेचने वाला किस जाति का है।

इसके अतिरिक्त रोटी-बेटी का रिश्ता भी प्रारम्भ हो गया था। अन्तर्जातीय विवाह, अन्तर्प्रान्तीय विवाह, अन्तर्राष्ट्रीय विवाह तो आज सामान्य बात हो गए हैं। जातीय जड़ता वाले हमारे समाज में अन्तर्जातीय विवाह होना एक चमत्कारिक परिवर्तन है। समाज शास्त्रीय दृष्टि से भी इसका विशेष महत्व है।

हमें आश्चर्य इस बात का है कि समाज में जिस परिवर्तन को सभी चाहते थे, उसमें रोक लगा दी गयी है और यह रोक राजनैतिक कारणों से लगाई गई है। राजनैतिक दलों के लोग अपने सिद्धान्तों के आधार पर नहीं बल्कि जातियों के घोड़ों पर चढ़कर कुर्सी प्राप्ति तक यात्रा कर रहे हैं। कुर्सी पाने पर उसे पक्का करने के लिए भी जाति अश्वमेघ के घोड़े को विचरण के लिए छोड़ रहे हैं। पाश्चात्य देशों ने आधुनिक टैक्नोलोजी के घोड़े पर चढ़कर विशिष्टता प्राप्त की है, पर हम जिस राह को छोड़ चले थे, उसी पर पुनः अग्रसर हो रहे हैं।

पूरे देश में हाहाकार मचा है। आत्मदाह कोई आसान बात नहीं होती। अपने आपको युवा छात्र मौत के मुंह में धकेल रहे हैं। सारा का सारा तन्त्र विफल हो गया है। चौराहों पर लगी मूर्तियां तोड़ी जा रही हैं। राष्ट्रीय नेता वर्ग युद्ध के लिए आह्वान कर रहे हैं।

सरकारी पदों की भर्ती को लेकर स्वयं महात्मा गांधी का भी यह मानना था कि जो लोग देश की सरकारी सेवाओं में आने की इच्छा रखते हैं उनके लिए आवश्यक है कि पदों के लिये वांछित परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हों, क्योंकि दायित्व से भरे उच्च पदों पर ऐसे ही लोग सेवा करने के पात्र हो सकते हैं। ये विचार गांधी जी ने 'मेरे सपनों का भारत' में प्रकट किए हैं। प० जवाहर लाल नेहरू ने भी जातीय

आधार पर आरक्षण देने का विरोध किया था। 27 जून 1961 को उन्होंने मुख्य-मन्त्रियों को एक पत्र लिखा था। उन्होंने लिखा था—'लेकिन फिर भी मैं किसी भी प्रकार के आरक्षण विशेषकर नौकरियों में, के बिल्कुल पक्ष में नहीं हूँ। मैं किसी भी दूसरे दर्जे या अक्षमता का सख्त विरोध करता हूँ। पिछड़े वर्गों का वास्तविक मार्ग उन्हें केवल अच्छी शिक्षा का अवसर दिलाना है। लेकिन यदि हम जातीय व साम्प्रदायिक आधार पर आरक्षण देते हैं। तो हम मेधावी व योग्य छात्रों को पीछे छोड़ जाते हैं। मुझे यह जानकर हैरत होती है कि पदोन्नतियां भी जाति या सम्प्रदाय के आधार पर होती हैं। यह मात्र भूल नहीं, बल्कि गम्भीर खतरा है।

आश्चर्य है कि आज देश की सरकार क्यों समाज की गति को उलट देना चाहती है। आर्य समाज ने जाति विहीन समाज की अभिकल्पना की है। यहाँ पर वर्णाश्रम व्यवस्था की विचारणा है। मण्डल कमीशन की रिपोर्ट का ज्यों की त्यों क्रियान्वयन आर्य समाज तथा अन्य सुधारवादी आन्दोलनकारी संस्थाओं द्वारा किए गये कार्य को पीछे धकेलने का दुष्प्रयास है।

—डा० धर्मपाल
(आर्यसन्देश, 30-9-90)

वेद सबके लिए।

जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं वैसे वेद भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

स्वामी दयानन्द

तप: पूत महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्य समाज के प्रवर्तक, आचार एवं धर्म के उद्धारक, समाज सुधारक एवं 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम के क्रान्ति प्रणेताओं के प्रेरक भारत मही के योग्यतम पुत्र तथा 'भारत भारतीयों के लिए' का नारा लगाने वाले युगपुरुष महात्मा थे। स्वामी जी को भी अन्य महापुरुषों की भांति अकाल ही महाकाल को अपना जीवन समर्पित कर देना पड़ा था। वह दीपावली का दिन था, मंगलवार 30 अक्टूबर 1883 कृष्ण पक्ष एवं शुक्ल पक्ष की संधिवेला अमावस्या की संध्या सायं 6 बजे।

जीवन भर स्वामी जी पाखण्डों का खण्डन एवं वैदिक विचारों का प्रचार एवं प्रसार करने में लग्न रहे। स्वतन्त्रता संग्राम के सूत्रधार उनके राष्ट्रवादी विचारों से प्रभावित थे। राजा राममोहन राय के अनुयायी उनके चरणों में नत थे। सारा समाज उनका अनुयायी बन रहा था। स्थान-स्थान पर आर्य समाजों की स्थापना हो रही थी। ऐसी परिस्थितियों में एक ऐसा वर्ग भी था जिसके हितों को आघात पहुंचाता था और वे सभी स्वामी जी के विरोधी बन रहे थे। सामने आने का तो उनमें साहस न था पर यह निश्चित था कि एक षडयन्त्र उनके विरुद्ध पनप रहा था। उससे स्वामी जी भी अनभिज्ञ न थे पर वे अपने उद्देश्य में रत महातपस्वी विकट परिस्थिति में भी अपने कार्य क्षेत्र में बढ़ते जा रहे थे।

स्वामी जी का जन्म 1724 ई० में हुआ था और निर्वाण प्राप्ति हुई 1883 ई० में। इतिहासकारों के मत में उनके देहान्त का कारण भोजन सामग्री में विष का मिलाया जाना है। स्वामी जी जोधपुर में धर्मोपदेश कर रहे थे। वे एक दिन जोधपुर नरेश के महल में पहुंचे। वहां 'नन्हीं जान' नामक वेश्या बैठी थी। राजा ने हड़बड़ी में उसकी डोली उठवाई। शीघ्रता में उन्होंने डोली को अपने कंधों का सहारा भी दिया। स्वामी जी यह सब दृश्य देख रहे थे। उन्होंने राजा की भर्त्सना करते हुए कहा कि सिहों का कुतियों से मेल, राजसिंहों को शोभा नहीं देता। यह वेश्या नन्ही जान के लिए असह्य हो गया और स्वामी जी के रसोइये जगन्नाथ के माध्यम से उन्हें दूध में विष दिला दिया और इसी के फलस्वरूप स्वामी जी को यह देह त्यागना पड़ा तथा वैदिक धर्म और समाज सुधार के पुनीत कार्य का प्रणेता अकाल ही दिवगत हो गया।

विभिन्न इतिहासकारों एवं विद्वानों के लेखों का अध्ययन करने पर मन में कई बार कई प्रश्न उठे हैं—

1—क्या स्वामी जी को विष दिया गया था अथवा वे अपनी लम्बी रुग्णता के कारण स्वाभाविक मृत्यु को प्राप्त हुए ?

2—स्वामी जी को विष देने वाला कौन था ?

जगन्नाथ, श्रीकृष्ण कल्लू, अथवा रामानन्द ब्रह्मचारी,

3—डा० सूर्यमल्ल, डा० अली मरदान खां, डा० कर्नल स्पैंसर और डा० लक्ष्मणदास आदि क्या सभी स्वामी जी के हितैषी नहीं थे ?

4—क्या जोधपुर नरेश राजा जसवन्तसिंह भी स्वामी जी के विरुद्ध षडयन्त्र में सम्मिलित थे ?

देवेन्द्र कुमार मुकर्जी और घासीराम ने पर्याप्त अध्ययन, अनुसन्धान एवं पर्यटन के पश्चात् स्वामी जी का जीवन चरित्र लिखते समय इस बात की स्थापना की है कि स्वामी जी जनवरी 1879 से लेकर अक्टूबर 1879 तक भयानक उदरशूल, पेचिश एवं मूँह तथा गले के रोग से पीड़ित रहे। तत्पश्चात् उन्हें मलेरिया हुआ। अपने उद्देश्य में अग्रसर स्वामी जी ने अपनी रुग्णता की कोई परवाह नहीं की और वे वैदिक धर्म के प्रचार, पाखण्डों के खण्डन तथा आर्य समाजों की स्थापना आदि के कार्यों में लगे रहे। अतः जगन्नाथ, डा० मरदान अली खां अथवा नन्हीं जान किसी को भी उनकी मृत्यु का दोष देना ठीक नहीं है।

पर उपरोक्त कथन के विरोध में कितने ही प्रमाणिक साक्ष्य उपलब्ध हैं। मैक्समूलर ने गहरा शोक व्यक्त करते हुए कहा था कि महान वेदज्ञ सन्त का निधन विष से हुआ। पं० लेखराम, लाला लाजपतराय, स्वामी सत्यानन्द आदि विद्वानों ने भी उनका देहावसान भोजन सामग्री में विष के दिये जाने से ही माना है। महाराज सर प्रतापसिंह ने भी अपनी जीवनी में इसी बात की पुष्टि की है कि जोधपुर में स्वामी जी के कुछ विरोधियों ने उन्हें भोजन में विष दे दिया था। आबू तथा अजमेर के सभी हिंदू, मुसलमान, ईसाई चिकित्सकों ने भी यही कहा कि स्वामी जी को पिसा हुआ कांच और संखिया दिया गया था। अजमेर निवासी डा० मानकरण शारदा के पिता श्री हरविलास शारदा ऋषि के देहावसान के समय अजमेर में ही थे। उनका कथन भी यही है कि ऋषि की मृत्यु विष के कारण हुई। सभी विद्वान इस विषय में एक मत हैं कि स्वामी जी का निधन स्वाभाविक नहीं अपितु विष के कारण ही हुआ था।

दूसरा प्रश्न यह है कि स्वामी जी को विष किसने दिया। राव राजा तेजसिंह ने श्री मुखर्जी को बतलाया कि स्वामी जी के सेवक कल्लू ने 25-26 सितम्बर, 1883 की रात्रि को स्वामी जी को दूध में विष दे दिया तथा वह चोरी करके वहां से भाग गया। यह विश्वसनीय नहीं है क्योंकि स्वामी जी की दशा 29 सितम्बर को गम्भीर हुई थी और वह व्यक्ति जिसे विष दिया गया हो, तीन-चार दिन तक ठीक नहीं रह सकता। यह तो भाग्य है कि स्वामी जी बलिष्ठ व्यक्ति थे। शाहपुर नरेश नाहरसिंह ने बताया है कि स्वामी जी के रसोइये का नाम श्री [illegible] और कल्लू था। उनके एक अन्य रसोइये का नाम भी मिलता है। यह नाम धाउद मिश्र था। क्या कल्लू ही

कलिया उर्फ जगन्नाथ था ? स्वामी जी की उदारता भी दर्शनीय है। स्वामी जी ने जगन्नाथ को यह कहकर कुछ धन से भी सहायता की थी कि वह यहां से भाग जाये। अन्यथा उनकी मृत्यु के पश्चात् उसे तंग किया जायेगा। राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार मुंशी देवीप्रसाद के पौत्र श्री पुरुषोत्तम प्रसाद गौड़ ने भी स्पष्ट किया है कि ऋषिवर के हत्यारे कलिया उर्फ जगन्नाथ की मृत्यु 1922 ई० में हुई। अंतिम दिनों में उसने अपने कुकर्म को भी स्वीकार किया था। 'दयानंद दिग्विजय' के लेखक मास्टर धर्ममित्र जी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि बहुत वर्ष हुए स्वामी जी का घातक जगन्नाथ बम्बई आया था। उसने बताया कि मैंने ही स्वामी जी को जहर दिया था। मैं पापी. हत्यारा, देश-धर्म का शत्रु बन गया था, कहकर बहुत रोया था। (पृ० — 136-37)

एक अन्य चौंका देने वाला विवरण 'सार्वदेशिक' मार्च 1956 में पं० हरिशंकर शर्मा ने प्रकाशित कराया था। उसने अपने पिता श्री नाथूराम शर्मा की डायरी में पाया है कि 1907 की गर्मियों में स्वामी शंकरानन्द उनका अतिथि था। उसी स्वामी ने एक दिन विश्वास में बतलाया कि उसी ने स्वामी दयानन्द को विष दिया था। श्री मामराज आर्य का कथन है कि यही स्वामी शंकरानन्द रामानन्द ब्रह्मचारी था और स्वामी जी के जोधपुर निवास के समय उनकी सेवा में था। स्वामी जी के जीवन चरित्रों में इस प्रकार के साक्ष्य प्राप्त हैं कि उन दिनों रामानन्द ब्रह्मचारी का स्वामी जी के प्रति व्यवहार उपेक्षापूर्ण था। स्वयं स्वामी जी ने भी आबू जाते समय उसे कहा था कि उसकी कोई आवश्यकता नहीं है और वह जा सकता है। ये प्रमाण सन्देह के लिए पर्याप्त हैं। रामानन्द ब्रह्मचारी अन्त समय तक उन्हीं के साथ रहा और बाद में संन्यासी बना। क्या वह स्वामी जी को विष देने का साहस कर सका होगा?

अधिक प्रामाणिक साक्ष्य इसी बात के मिलते हैं कि स्वामी जी को विष 'कलिया उर्फ जगन्नाथ ने ही दिया था।

तीसरा प्रश्न है कि डाक्टरों का व्यवहार स्वामी जी के प्रति किस प्रकार का था? स्वामी जी को सर्वप्रथम औषधि डा० सूर्यमल्ल ने दी थी। इसके बाद में उनकी सेवा में डा० मरदान अली खां को भेजा गया। उसने यह कहकर कि स्वामी जी बलिष्ठ हैं उन्हें तेज रेचक औषधियां दीं। ये स्वामी जी की प्रकृति के प्रतिकूल पड़ रही थीं। डा० कर्नल स्पेंसर जो उच्च अधिकारी थे, ने भी डा० लक्ष्मणदास को उपचार नहीं करने दिया, यद्यपि उनकी औषधियों से स्वामी जी को लाभ होता था। स्वामी दयानंद ने स्वयं भी कई बार डा० लक्ष्मणदास की सलाह के अनुरूप कार्य नहीं किया। यह डा० अली मरदान खां नन्हीं जान का मुंह लगा था। बदायूं के श्री रघुवीर सिंह भूत-पूर्व संसद सदस्य का कथन है कि वह चिकित्सक बदायूं जिले के इस्लाम नगर का निवासी था और वह मेरे पिताजी (जिनका 83 वर्ष की आयु में देहान्त हुआ था) [illegible] नियमित [illegible] एक दिन उसने प्रसंगवश स्वीकार किया कि इस [illegible] के माध्यम से स्वामी दयानंद को [illegible] दिया था। आबू निवास [illegible] महाराजा के भाई प्रताप सिंह ने स्वामी जी से पूछा था कि यदि वे डा० अली मरदान

खां पर सन्देह करते हैं तो कृपया बतला दें, वे स्वयं इस बात का प्रबंध करेंगे कि डा० मरदान अली खां के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जाये।

चौथा प्रश्न है कि क्या जोधपुर नरेश स्वयं भी महर्षि दयानंद को विष देने के षडयंत्र में सम्मिलित थे ?

जोधपुर नरेश ने स्वामी जी के रोग के गम्भीरता की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। उनके लिए समुचित उपचार एवं अनुभवी तथा कुशल डाक्टर का प्रबंध नहीं किया। उनके रोग को गुप्त रखा गया था। किसी विशेष उपचार के लिए नहीं अपितु जलवायु परिवर्तन मात्र के लिए उन्हें आबू भेजा गया था। डा० मरदान अली खां कोई विशेषज्ञ न था। यदि जोधपुर नरेश स्वामी जी के रोग को गम्भीरता से लेते तो निश्चय ही वे डा० मरदान अली खां के स्थान पर किसी अन्य डाक्टर को स्वामी जी के उपचार हेतु नियुक्त करते। इस बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता, क्योंकि राजा जसवंसिंह स्वामी जी के अनन्य भक्त थे। यदि वे जोधपुर में स्वामी जी की उपस्थिति को अनावश्यक समझते तो सीधे उनसे जोधपुर छोड़ देने की प्रार्थना कर सकते थे। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यातव्य है कि राजा साहब ने स्वामी जी को 2500 रु० एवं एक शाल भेंट कर ससम्मान विदा किया था।

अन्ततः यह दृढ़ विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि नन्हीं जान ही एक मात्र स्वामी जी के निधन के प्रति उत्तरदायी है। उसने ही माली और रसोइये की सहायता से स्वामी जी को विष दिलवाया था, और डा० अली मरदान खां ने औषधियों के माध्यम से ऐसे रेचक दिये, जिनसे स्वामी जी की दशा सुधरने के स्थान पर और बिगड़ती चली गई।

और वह उत्कट देशभक्त, राष्ट्रवीर, समाज सुधारक, दलितोद्धारक असमय ही महाकाल में विलीन हो गया। हम उनके प्रति श्रद्धानत हैं।

—डॉ० धर्मपाल

(आर्यसन्देश, 18-10-90)

सकता। यह ...
ने बताया ...